नया रास्ता

[नौ कहानियाँ]

श्रीपहाड़ी

प्रकाशगृह इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : १९४६

मूल्य : तीन रुपया

मुद्रक:—एo बीo वर्म्मा, शारदा प्रेस, नया-कटरा, प्रयाग

लगभग तीन-चार साल चुप रहने के बाद मैंने एक नए दृष्टिकोण से कुछ रचनाएँ लिख कर 'बया का घोंसला' पाठकों को सौंपा था। 'नया रास्ता' अगला कदम है। 'तूफान' और 'कल्पवृक्ष' संभवतः कहानी की पुरानी कसौटी के समीप लगें; लेकिन 'नागफाँस', 'अतिथि' आदि तो लम्बी सी कहानियाँ हैं। आज कहानी अपनी पुरानी परम्परा को तोड़कर बहुत आगे बढ़ गई है। 'नया रास्ता' की कहानियाँ आने वाले युग की कहानियों की ओर इशारा-मात्र करती हैं।

'विश्वमित्र' के सम्पादकों ने सन् १९३६ में बार-बार उत्साहित कर कई कहानियाँ लिखवाई थीं। १९४२ में फिर 'रानी' के सम्पादक के तकाजे के कारण कलम उठाई। इधर 'रानी' और 'सरिता' के सम्पादकों ने आज मुझे फिर लिखने मजबूर कर दिया है। सबका आभार मान लेता हूँ।

कहीं-कहीं प्रूफ और छापे की गलतियाँ रह गई हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि कहानी लिखने से प्रूफ देखना टेढ़ा काम है।

'प्रवासपथ' उपन्यास और 'बरगद की जड़ें' कहानी संग्रह शीघ्र ही प्रकाशित होंगे।

अक्टूबर, १९४६
३१ ए, बेली रोड,
प्रयाग
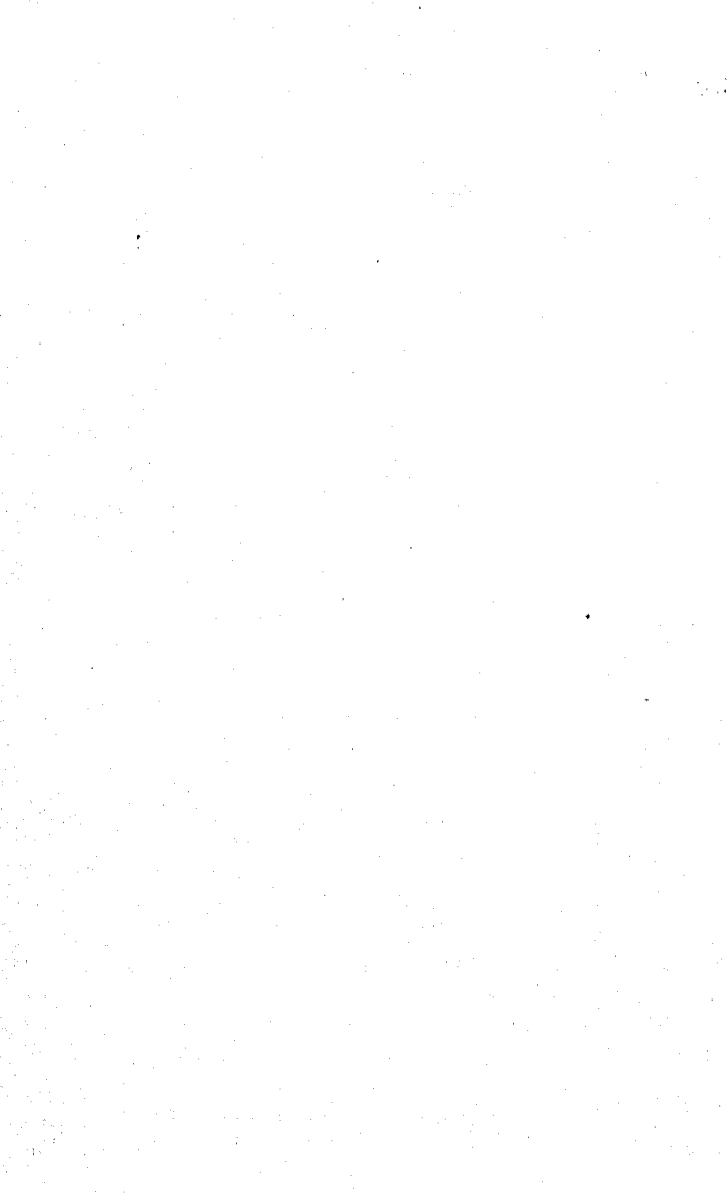
पहाड़ी

प्रिय 'शङ्कु' को

सूची

प्रूफ और छपाई की गलती से पहली कहानी का फोलियो 'आतिथि' छप गया है । कृपया 'अतिथि' पढ़ें ।

अतिथि

रमेश प्रमिला पर सोच रहा था। वह तो आज भी अपने परिवार के भीतर खिल-खिल, खिल हँसती है। वह दो लड़के और एक लड़की की माँ है। वही पुराना अल्हड़पन फिर भी आज साथ है। वही चुहल और बीच में मीठी चुटकियों की बौछार! कभी-कभी अनायास ही वह गंभीर हो उठती है। आज तक छेड़-छेड़ कर सवाल पूछना अपनी आदत बनाए हुए है। वह सोचता था कि आज यह लड़की अपने परिवार के वातावरण के भीतर, अपना व्यक्तित्व खो चुकी होगी। लेकिन इस बात को देखकर दंग रह गया कि वह तो अधिक निखर आई है। वह परिवार का संचालन खूबी से कर लेती है। एक पुरखिन की भाँति हरएक बात पर अपनी राय देकर उसे सुलझाना चाहती है। अपने सजीव तर्क से बाजी जीत जाने पर गर्व नहीं करती, और न साधार कोई हार डस लेती है। रमेश ने कभी उसे झुँझलाते हुए नहीं पाया है। वह देख रहा था कि प्रमिला ने जीवन का कोई नया अध्याय आरम्भ किया है। आज तक उसकी मातृत्व वाली भावना और स्वामिनी की झाँकियों का ज्ञान उसे नहीं था। वह तो सोचता था कि ये मध्यवर्ग की लड़कियाँ एक थोथा घमंड लेकर ससुराल जाती हैं। अपना ऊपरी आडम्बर और जीवन का झूठा व्यवहार उनको पग-पग पर उलझा देता है। वे आगे जीवन में किसी चमक और दिखलावे को न पा मुरझाकर आसानी से एक अज्ञेय तृष्णा के अभिशाप को अपना लेती हैं। प्रमिला उस सबसे अलग सी है। आज उसका नया निखरा

हुआ रूप मिलता है। मायके से ससुराल वाली दूरी के इन सात-आठ सालों में उसके जीवन में कोई अन्तर नहीं आया है।

उसने अपना 'अटेची केश' खोला। साबुन, ब्रुश और टूथ पेस्ट निकालकर चुपचाप गोसलखाने की ओर बढ़ गया। हाथ-मुँह धोकर लौटा था कि देखा, प्रमिला ने हॉलडाल खोल, पलङ्ग पर बिस्तर सावधानी से चुनकर बिछा दिया है। मैले कपड़े उठाकर एक ओर रख दिए थे। वह चुपचाप पलङ्ग पर लधर गया। पूरे अठाइस घंटे के सफर से वह बहुत थक गया था। उसने मेज पर पड़ा हुआ अखबार उठाया और एक बार सरसरी नजर से देखकर रख दिया। प्रमिला चुपचाप खड़ी थी। उसकी गोदी पर छोटी बच्ची थी। रमेश ने उस लड़की को अपने पास बुलाने की चेष्टा की पर असफल रहा। वह तो अपनी माँ से चिपक गई। प्रमिला हँसकर बोली, "भाई साहब, यह किसी अनजान के पास नहीं जाती है।"

वह परिवार के भीतर 'अनजान' व्यक्ति है। बच्चों से आज पहले-पहल वास्ता पड़ा था। वे उसे कुतूहल से देख रहे थे। वह चुप ही रहा। प्रमिला उसी भाँति खड़ी थी। कुछ देर के बाद हँसती हुई बोली, "आप अच्छे दिन आए हैं, जबकि हमारा चीनी का 'स्टाक' चूक गया है। कल शाम को न जाने कहाँ से सात-आठ दोस्त ले आए। बस चाय खूब पी गई। हर महीने आखिरी हफ्ता बिना चीनी के रहते हैं।"

रमेश चुप रहा तो बात सुलझाई प्रमिला ने, "यह राशन का जमाना है भाई साहब। उनको चोर-बाजार जाने की फुर्सत ही नहीं मिलती है। पिछले दिनों तक तो नौकर कहीं-न-कहीं से चीनी ले आता था। एक सप्ताह हुआ वह चला गया।"

"तब क्या आजकल नौकर नहीं है?"

"उसे चपरासी की जगह मिल गई। हम उतनी तनख्वा कहाँ से देते। आजकल तो नौकर मुश्किल से मिलते हैं।"

अब रमेश ने उठकर चुपचाप शेविंग का सामान निकाला और ब्लेड तेज करने लगा। प्रमिला भीतर गई और कटोरी पर गरम पानी ले आई। रमेश ने उसकी एक-दो बातें सुनीं और चुप रहा है। कभी वह उन बच्चों की दुनिया देखता, तो फिर उस परिवार पर सोचने लगता था। परिवार का विस्तार सास, दो देवर, विधवा ननद, तीन बच्चे और पति है। तीनों बच्चे आगन्तुक को देखकर यदा-कदा अम्मी पर आँखें टिका देते थे। वे माँ से मूक-प्रश्न पूछने लगे कि वह कौन हैं? एकाएक छोटी बच्ची रो पड़ी। प्रमिला उसे लेकर भीतर चली गई। रमेश तो उसी भाँति ब्लेड रगड़ रहा था।

वह छै साल के बाद इस शहर में आया है। शहर आज बहुत बदला हुआ मिलता है। आबादी बढ़ गई है। स्टेशन पर कुली पहले ही भाव-तोल करने लगा था और बाहर ताँगे वाले ने पाँच गुने ज्यादा पैसे की माँग की थी। उसकी दलील थी कि पहले चने बीस सेर के मिलते थे और आज चार सेर के भी कठिनाई से वे पाते हैं। यहाँ पहुँच करके प्रमिला ने खूराक-बन्दी की बात सुनाई।

—प्रमिला आकर बोली, "चाय के आदी होंगे, पर चीनी नहीं हैं। वे सुबह से ही तलाश में गए हुए हैं। मैंने कल रात बता दिया था।"

रमेश उस असमर्थता पर चुप रह गया। प्रमिला चली गई। वह बच्चों को मिठाइयाँ बाँटने लगा। अब तो बच्चों ने जमीन पर से पलङ्ग पर धावा बोल दिया था। उनका शोर सुन कर प्रमिला आकर बोली, "इनकी दोस्ती आफत मोल ले लेनी है।"

वह तो चुपचाप 'शेव' करने लगा। उसके साबुन से भरे

हुए चेहरे को देखकर बच्चे ताली पीटने लगे। छोटी बच्ची की किलकारी उसने सुनी। अब उसने तो बड़े बच्चे के मुँह पर भी बुरश से साबुन मल लिया। लड़का तो कुरते से मुँह पोंछ कर बोला, "अब कैसे लगाओगे।" पलङ्ग पर से उतर कर भाग गया। छोटों ने उसका ही साथ दिया। रमेश ने किसी को रोकने की चेष्टा नहीं की।

प्रमिला फिर आई और कहा, "नहाने का पानी तैयार है।"

रमेश प्रमिला के इस बर्ताव पर मुग्ध हो उठा। उसने सिगरेट सुलगाई और चुपचाप तौलिया, बंडी, कुरता और पायजामा निकाला। एकाएक पूछा, "कोई नाड़ा तो नहीं होगा ?"

"धोती की किनारी ले आती हूँ।" कहकर, वह भीतर गई और लम्बी किनारी ले आई। कैंची से एक टुकड़ा काट कर उसे दे दिया। फिर अनायास ही पूछा, "लड़ाई कब खत्म होगी भाई साहब।"

"क्यों, बात क्या है ?"

"अखबार वाले तो लिख रहे हैं कि हिटलर हार रहा है। क्या यह सच बात होगी ?"

"तू क्या, सोचती है।"

"वह नहीं हारेगा। सुना कि उसके पास कई नए-नए हथियार हैं। वह सारी दुनिया को नष्ट कर सकता है। मुझे न जाने जर्मनी वालों की जीत क्यों भली लगती है। ऐसे साहसी और किसी जाति के लोग नहीं है।"

रमेश दुबारा ब्रुश से मुँह पर साबुन मल रहा था। सारे चेहरे पर बहुत सा फेन फैल गया। वह उस्तरा चलाने लगा। क्या वह प्रमिला के इस प्रश्न का उत्तर देगा। सन् १९१४-१८ का युद्ध सारी दुनिया के लिये दुःख, दारिद्र और मुसीबतों की वसीयत छोड़ गया था। एक जाति की दूसरे के प्रति घृणा, आपसी

स्वार्थ, खूनी भावानाएँ·····। चीन, अबीसीनिया, स्पेन के युद्ध··! चेम्बरलिन का म्यूनिख कांड··!! ऐटलस के सुनहरे पन्नों की भाँति युद्ध के चित्र होते तो वह प्रमिला को आसानी से उस सबको दिखला देता। वह सब देखकर प्रमिला जरूर डर सी जाती। लेकिन रमेश को वह सब दिखाने का साहस नहीं हुआ। कुछ उत्साह भी नहीं था। वह भावों के ऊपरी उफान में भविष्य की एक आशावादी दुनियाँ देखता है। जिसे कि वह 'जनयुग' कह कर पुकारता है। लेकिन ब्रिटेन और अमरीका के आर्थिक स्वार्थों के प्रति होने वाले संघर्ष को वह आसानी से नहीं भुला पाता है। उपनिवेशों की जागृति का अनुमान उसे है। यह मानव आपस में लड़ रहे हैं। जंगली जानवर आपस में युद्ध करते हैं, उनकी भावना यह नहीं होती है। बुद्धिवादी मानव तो अपने स्वार्थों के पीछे अंधा बन जाता है। वह कभी कभी खून भी कर डालता है। वह खून युद्ध नहीं है। यह केवल हिंसा की एक भावना मात्र है। केवल चींटियों का एक गिरोह दूसरे गिरोह के यहाँ उनका खाना लूटने के लिए फौज लेकर जाता है। मधु-मक्खियों में दूसरे छत्तों का मधु लूटने की प्रवृत्ति भर होती है। मनुष्य तो युद्ध के लिए सब तैयारी करता है। यह जो आज युद्ध चालू है, उससे कई आपसी सन्देह बढ़ते जा रहे हैं।

बड़ा लड़का तो आकर बोला, "अम्भी पानी ठंडा हो रहा है।"

रमेश चुपचाप गोसलखाने की ओर बढ़ गया। फिर नहा कर लौटा और पलङ्ग पर लेट गया। आँखों में मीठी नींद भरी हुई थी। उसने आँखें मूँदलीं। बड़ी देर तक सोया रहा। एकाएक बच्चों के शोरगुल से आँखें खुल गईं। देखा कि अकरा लौट आया था। प्रमिला उससे हिसाब पूछ रही थी। चोर

बाजार से पन्द्रह आना सेर चीनी मिलने की बात सुनकर हँस पड़ी। कहा, "चलो मिल तो गई। मैं डर रही थी कि कहीं आप खाली हाथ न लौट आवें।"

वह जाग गया। अरुण ने पूछा, "तूफान से आए हो।"

'हाँ।"

"सफर कैसा रहा। बड़ी तकलीफ हुई होगी।"

"खादी के कुरते और पायजामा ने रक्षा करदी। लेटकर आया हूँ। लोगों ने समझा कि बड़ा नहीं तो छोटा लीडर अवश्य ही होवूँगा।"

"आप लीडर कब से बन गए भाई साहब ?"

लेकिन अरुण ने आसानी से दूसरा प्रश्न उठाया। कहा, "प्रमिला चाय तो बनवाले हाँ, अपने भाई साहब से वादा करवा ले कि कल कान्फरेन्स में जरूर ले जाँय।"

प्रमिला भीतर जाने को थी कि कहा अरुण ने, "पड़ोसियों के यहाँ से टी-सेट मंगवा लेना। जरा शान से चाय तो पी जायगी।"

वह भीतर चली गई। अरुण कुछ काम से आफिस वाले कमरे की ओर बढ़ गया। अब अकेला-अकेला रमेश प्रमिला की गृहस्थी पर सोचने लगा। भला उसे कब मालूम था कि यह लड़की इतनी चतुरता से गृहस्थी चलाना सीख गई होगी। घर के लोगों का कहना तो था कि वह जिस घर में जायगी, वहीं मुसीबतों का पहाड़ टूटेगा। बड़ी तुनक मिजाज और बात-बात पर गुस्सा होती थी। ताई बड़ी चिन्तित रहा करती थी। आज भी उसे विश्वास थोड़े ही होगा कि वह ठीक ढंग से रहती है।

रमेश सन् १६३६ तथा १६४४ के बीच की दूरी में बहुत अन्तर पाता है। इस बीच मनुष्य की भावनाएँ बड़ी तेजी से

बदल गई हैं। सन् १६३६ की मान्यताएँ आज बहुत पुरानी पड़ गई थीं। आज का जीवन तो दुनिया की कुछ घटनाओं तक सीमित सा रह गया था। विचार, सामाजिक आचार और आर्थिक वस्तुस्थिति की इतनी बड़ी क्रान्ति पहले कभी नहीं हुई थी। कुछ लोगों का कहना है कि यह मानव जाति केवल एक लाख वर्ष पुरानी है। वे हमारी इस सभ्यता को भी दस हजार वर्ष पुराना समझते हैं। पहले लोग क्रान्ति पर नहीं सोचते थे। आज तो हरएक आने वाले परिवर्तन पर सोच रहा है। आज का समाज पहले का सा केवल व्यक्तियों का गिरोह भर नहीं है। आज विचारों के नए-नए वर्ग और परिवार बन रहे हैं। लेकिन मोहन-जोदाड़ू की सभ्यता के जो अवशेष बचे हैं, उनमें युद्ध के कोई हथियार नहीं मिलते हैं। आदि मानव का संघर्ष संभवतः आपसी स्वार्थों का संघर्ष नहीं रहा होगा। आज प्रगति पर विश्वास करने वाला मानव युद्ध को अनिवार्य समझता है। यह युद्ध···!

मानव का वह स्वरूप, मछली, रैपटाइल, मैमल, बनमानुष···। डारविन ने पहले-पहल इस दूरी को नापा था। सन् १६१४-१८ के युद्ध के बाद तो जातियों में एक प्रमाद सा आया। उसके बाद सब देशों की जनता में एक नई बेचैनी फैली। समस्त समाज की आर्थिक भित्ति नष्ट हो गई थी। आज यह चालू युद्ध और प्रमिला का परिवार!

सच ही प्रमिला तो ट्रे पर चाय सजा कर ले आई थी। पूछा अरुण ने, "डबल-रोटी तो नहीं बची होगी।"

"शायद एक टुकड़ा बचा होगा। आज लेते आना। चुन्नू तो मानता ही नहीं है।"

" 'राशन कार्ड' पर तो गेहूँ नहीं बचा हुआ है। पड़ोसियों से पूछना शायद वे अभी गेहूँ नहीं लाए होंगे। सब बातें तो

समझ में आती हैं, पर यह बारह आउन्स गेहूँ के बदले एक डबल रोटी क्यों मिलती है। बच्चों और आने वाले मेहमानों की सोचते हुए एक युनिट में चार छटांक गेहूँ बहुत कम है। चीनी की बात पर तो सोचना ही व्यर्थ होगा। बच्चों के दूध के लिए ही पूरी नहीं पड़ती है।"

अरुण ने चाय का एक प्याला बना लिया। प्रमिला से कहा, "तू भी हमारी चाय-की दावत में शामिल होजा। रोज झुँझलाती है कि मैं पार्टियों में जाता हूँ। भला आज भी कोई खाने-पीने का जमाना है। अम्मा तो कहती है—बच्चू पाँच सौ क्या छै सौ माहवारी खर्च करो, वह पुराना जमाना कभी लौट कर नहीं आवेगा।"

अरुण वकालत करता है। खासी आमदनी है। घर का अपना मकान है और कुछ जमींदारी। परिवार सम्पन्न है। रमेश तो घूँट-घूँट कर चाय पीता हुआ बोला, "सभी जगह एक सा हाल है। सारे रास्ते किसी स्टेशन पर एक दियासलाई की डिबिया तक नहीं मिली। कन्ट्रोल के गुणगान करता हुआ आया हूँ।"

चाय का एक प्याला बना कर प्रमिला को सौंपता हुआ बोला अरुण, "बैठ भी जा। भैय्या से क्या लाज-शरम है? फिर अब तो 'छूट' का अधिकार भी मिलने वाला है। तब भला आप लोग हम गरीबों से क्यों बातें करने लगीं। अब तक तो मायके जाने की धमकी आधे प्राण सुखा डालती थी। यह नया विधान तो·····?"

"आप लोग भला उसे क्यूँ बनने देंगे। उस दिन जब विधान-कमिटी के सदस्य आए थे, तो आपने ही विरोध करने के लिए वालंटियरों को काले झंडे लेकर स्टेशन भेजा था। बात-बात पर ताना मारोगे कि ससुराल वाले बड़े कंजूस हैं। आगे-

वाली लड़कियों को यह सब तो नहीं सहना होगा। जिस दिन बिल पास होगा, मैं हनुमानजी के मन्दिर में सात पैसे के बताशे चढ़ावूँगी।"

"कोर्ट कै बजे जाते हो।" पूछा रमेश ने।

"यही ग्यारह बजे तक। हाँ, मैं बतलाना भूल गया प्रमिला कि रामलाल एण्ड सन्स ने आदमी भेज कर कहलाया है कि बहूजी को दूकान पर न भेजें। वहाँ कल इतनी भीड़ थी कि पुलीस ने ठीक प्रबन्ध न किया होता, तो दंगा हो जाता। एक बजे रात तक लोग दूकान को घेर कर खड़े रहे।"

"यह कपड़े का अकाल क्यों हो गया है रमेश भय्या? सुना कि बाजार में मुर्दों तक के लिए कफन नहीं मिल रहा है। बंगाल में बहू-बेटियाँ तन ढकने को एक टुकड़ा भी न पाकर आत्महत्या कर रही हैं। जब से कपड़ों पर मुहर लगनी शुरू हुई उनका मिलना कठिन हो गया है। अपने लिए जाने दो, इन बच्चों के लिए तो चाहिए। समझ में नहीं आता कि किस तरह गुजर होगी। रासन के सड़े चावल और कूड़ा मिला हुआ गेहूं खाते-खाते तो थक गए हैं। सुना अब कपड़ा भी कार्ड पर मिलेगा।"

"डी० आई० आर० का दैत्य सारा खाना और कपड़ा खा गया प्रमिला" कह कर रमेश हँस पड़ा।

"आपने तो सारी बात हँसी में उड़ादी भाई साहब। बड़ी मुश्किल से पिछले दिनों छै रुपए पौंड वाली एक पौंड ऊन मिली। वह एक दूकानदार ने सत्तरह रुपये में दी। तब जाकर बच्चों के लिए बनिआयन बुनीं। इनके लिए आधी पौंड अच्छी ऊन किसी भाव नहीं मिल रही है। कोयला तक तो नहीं मिलता है। एक चीज की तंगी हो तो कही जाय। मैं इनसे कह रही हूं कि

गाँव चले जायँ तो ठीक होगा। शहर की इस जिन्दगी से मन भर गया है।"

"वहाँ मलेरिया होगा तो कुनैन तक नहीं मिलेगी। मिट्टी का तेल और चीनी किसी भाव नहीं। वहाँ कोई स्वर्ग थोड़े ही है। यहाँ किसी भाव तो चीजें मिल जाती हैं। देहात का चोर बाजार तो यहाँ से भी बुरा है।"

रमेश, प्रमिला और अरुण की बातें सुन रहा था। वह चुप था। प्रमिला उठकर भीतर चली गई थी। कुछ देर के बाद आई और खाली प्याले ले गई। अरुण गोल कमरे में किसी मुवक्किल से बातें कर रहा था। वह तो इतमीनान से चारपाई पर लेट गया। चुन्नूजी चुपचाप खड़े थे। वह उसे उठाकर पलङ्ग पर ले आया। और उससे उसकी भाषा में बातें करने लगा। चुन्नू ने तो पूछा, "आपको गाना आता है?"

"और तुझे......।"

"पिताजी गाया करते हैं।"

"तूने भी सीखा होगा। सुनाएगा तो एक चीज मिलेगी।"

"क्या?"

"मोटर।"

"आप पहले सुना दें।"

तभी भीतर से पुकार हुई, "चुन्नू!"

चुन्नू तो बैठा ही रहा, दूसरी पुकार पर भी नहीं हिला। तीसरी पुकार पर नहीं उतरा तो प्रमिला आई और बोली, "क्यों शरारती, स्कूल नहीं जायगा।"

अरुण आ गया था। बोला, "मामाजी के आने की खुशी में कम-से-कम एक दिन की छुट्टी तो मनानी ही लेनी चाहिए। क्यों बेटा?"

चुन्नू ने माँ की ओर देखा। कहा प्रमिला ने, "महीने में

बीस दिन तो वह घर पर ही रहता है, पन्द्रह रुपये फीस देने से बेकार क्या लाभ है।"

"आजकल पन्द्रह रुपये में तो साधारण धोती आती है। कम से कम स्कूल वालों ने फीस तो नहीं बढ़ाई है। फिर अभी उसकी उम्र ही क्या है?"

"छठा पूरा हो रहा है। आप इसी भाँति लड़के को बिगाड़ रहे हैं। चल चुन्नू लारी आने वाली होगी।"

चुन्नूजी टस से मस नहीं हुए। उसी भाँति बैठे रहे। प्रमिला ने बेरहमी से उसे उतारने की कोशिश की तो वह रोने लग गया। तभी प्रमिला ने दूसरा अस्त्र छेड़ा, "राजा बेटा होगा तो जल्दी-जल्दी हाथ-मुँह धोकर स्कूल चला जायगा। देख नहीं तो मामाजी क्या कहेंगे। देखोजी चुन्नू तो बहुत पढ़ता है। बेटा तूने अपनी तसवीर वाली किताब मामूजी को दिखाई। 'जैक एण्ड जिल व्यन्ट अप टू दि हिल', मामाजी को सुना। अच्छा तेरी 'मदर' क्या कहती है? दिन में खाने के लिए अमरुद और अपने मामाजी की लाई हुई मिठाई ले जाना।"

अब चुन्नू उठा। प्रमिला मुसकराई और उसे लेकर भीतर चली गई। इस नए सबक पर रमेश सोचता ही रह गया। कुछ देर के बाद उसने लारी के आने का स्वर सुना और देखा कि चुन्नू जी अपने स्कूल की पूरी तैयारी करके उसमें बैठ गए हैं। स्वयं वह पलंग पर लेटा ही रहा। बड़ी थकान लग रही थी। यह उसका प्रमिला की गृहस्थी को देखने का पहला अवसर है। जब प्रमिला का विवाह हुआ, वह चेष्टा करने पर भी उसमें सम्मिलित नहीं हो सका। फिर वह जेल ही चला गया। जेल से छूट कर आने के बाद अपने ही बहु-धन्धों के बीच फंसा रहा। अक्सर घर पर प्रमिला की चर्चा होती थी। आज अब वह

उसके घर पर था। यहाँ दो-तीन दिन रहेगा। अरुण से तो यह पहली ही जान पहचान है। वह प्रमिला से तो भली भाँति परिचित है। दोनों एक ही परिवार के हैं। बचपन में एक अरसे तक साथ रहे हैं। उसका तो आज भी वही अपना पुराना परिवार है। लेकिन प्रमिला का उस परिवार से सम्बन्ध टूट चुका है। इस नए घर में रहने की आदत पड़ गई है। वह पिछला नाता आज अब झूठा बन्धन सा लगता है। आज अपने सुख-दुःख में वह मायका का मुँह नहीं ताकती है। यहाँ इस गृहस्थी से छुट्टी कब मिलती है कि वह वहाँ जा सके। उसे नींद आ गईथी।

—अरुण ने आकर जगाया, "खाना तैयार हो गया है।"

वह चटपट उठ बैठा। दूसरे कमरे में जाकर देखा कि फर्श पर चटाई बिछी हुई है। वह चुपचाप बैठ गया। प्रमिला ने परसी हुई थाली आगे बढ़ादी। वह खाना खा रहा था। प्रमिला बोली, "चावल तो यहाँ किसी भाव अच्छा नहीं मिलता है। यह चार रुपया सेर की बासमती है।"

"लेकिन मुझे तो छै-सात सेर के चावल खाने की आदत है।" कह कर रमेश हँस पड़ा। प्रमिला इस सत्य से अप्रतिभ हुई।

जल्दी खाकर वह उठा था कि बोली वह, "आपने तो कुछ नहीं खाया भाई साहब।"

रमेश चुपचाप हाथ धोकर अपने कमरे में पहुँचा। अरुण अब कोर्ट चला गया था। रमेश चादर तानकर सो गया। वह बड़ी देर तक सोया ही रहा। प्रमिला ने आकर पुकारा तो आखें मल कर उठ-बैठा। प्रमिला ने तस्तरी मेज पर रख दी और गिलास भर कर पानी ले आई। रमेश चुपचाप खाने लगा। पपीता, केला और मिठाई थीं। प्रमिला पास पड़ी हुई कुरसी पर

बैठ गई। वह एकाएक गम्भीर सवाल पूछ बैठी, "यह लड़ाई कब खतम होगी भाई साहब ?"

"क्यों क्या बात है ?"

"हम लोगों का घर का खर्च मुश्किल से चल रहा है। पिछले साल राधा की शादी में आठ-नौ हजार खर्च हो गए। आमदनी वही पुरानी है और चीजों के दाम चौगुने-पंचगुने हो गए हैं। जमींदारी से कुछ नहीं मिलता है। वहाँ कोई ठीक सा इन्तजाम करने वाला नहीं है। उल्टे घर से लगान भरते हैं। मैं तो कुछ दिनों के लिए गाँव चली जाना चाहती हूँ, पर ये नहीं मानते।"

रमेश चुपचाप केला खा रहा था। प्रमिला की इस बात का उत्तर जैसे कि वह नहीं जानता है। वह चाहे तो कोई झूठा आश्वासन देकर उसे ठग सकता है। आज अब दुनियादारी के बाद वह झूठ बोलना पाप नहीं समझता है। आज तो पाप-पुण्य की पुरातन से चली व्याख्या बहुत पिट चुकी है। हाँ, प्रमिला कुछ न कुछ सुन लेने के लिए उत्सुक थी। उसे भली भाँति ज्ञात है कि मायके में रमेश भइया दुनिया भर की नई-नई बातें सुनाया करते थे। काकोरी-षणयंत्र के शहीदों की बातें, यतीन्द्रनाथदास की भूख—हड़ताल से मृत्यु, अलीपुर बम केस की कहानी तथा और कई किताबें पढ़ने को देते थे। कई बार उसने देखा था कि वे उन शहीदों की तसवीरों के आगे माथा झुकाते थे, प्रण करते थे कि भारत को स्वतंत्र करेंगे। वे कई बार जेल यात्रा कर आए हैं। जब कभी रमेश जेल से छूट कर आता, तो कई दिनों बड़ी-बड़ी रात तक वहाँ की कहानियाँ सुनाया करता था।

एक दिन ये रमेश भइया आकर हँसते हुए बोले थे, 'प्रमिला स्वराज्य मिल गया है। कांग्रेस वालों ने सात प्रान्तों में

मन्त्रिमण्डल बना लिया। चलो गांधीजी का सपना पूरा हो गया।' उसके बाद वे न जाने क्या-क्या काम करते रहे। उसके बाद एक दिन खबर मिली कि वे लापता हो गए थे। चाची को उनके इन कामों से कभी सन्तोष नहीं रहा है। आज तक वह उनके लिए चिन्तित रहती है। उसके और लड़के अच्छे-अच्छे ओहदों पर हैं। प्रमिला ने कई बार चाची को समझाया कि भैय्या बहुत विद्वान् और कर्मठ हैं। रुपया कमाना एक बात है और यश दूसरी, उनकी माँ को वह दिलासा कभी नहीं दे सकी है।

एकाएक प्रमिला को कोई भूली सी बात याद आ गई। मुसकरा कर कहा, "आपकी शादी में तो कम-से-कम दो-चार थान खादी के हमें मिलेंगे ही न भइय्या।"

"हाँ, अबके जाड़ों में दूल्हा बनने की ठहरायी है प्रमिला। जेल से लौटने के बाद पहला शुभ कार्य यही किया है। उन लोगों ने धरना दे दिया था कि अब सयानी लड़की को अधिक नहीं रोक सकते हैं; माँ ने स्वयं वहाँ मंगनी की थी। मैंने यही सोचा कि एक से दो भले। ठीक किया न !"

"पूर्णिमा बहुत अच्छी लड़की है भाई साहब। वह हमारे घर आई थी। अब आपको नमक-तेल का भाव मालूम हो जायगा। वैसे है बेचारी बहुत सीधी।"

रमेश ने खाली तस्तरी मेज पर रख दी। तौलिया से हाथ पोंछ लिए। प्रमिला उसी भाँति बैठी हुई थी। पूछा रमेश ने, "सुना तूने सितार बजाना सीख लिया है।"

"वह बहुत पुरानी बात है। तब नया-नया शौक था। आज घर के काम-काज से छुट्टी ही नहीं मिलती है। क्यों भाई साहब क्या हिटलर सच ही हार रहा है। लड़ाई कब तक खत्म होगी, यह कन्ट्रोल के दिन और रहेगा ?"

इन सवालों का कुछ न कुछ उत्तर देना ही था। बोला रमेश, "हिटलर सच ही हार रहा है। लड़ाई अभी दो साल और चलेगी। इसके बाद भी एकाएक सब मुसीबतें हल नहीं होंगी।"

"तो, तीन-चार साल का और झंझट है। इसके बाद सुना कि सब ठीक हो जायगा। वे तो कहते हैं कि यह सब बातें तुम जानते हो। क्यों भइया क्या तुम रूस वालों के साथ हो ?"

वह रमेश से कोई उत्तर न पाकर कहने लगी, "अब बङ्गाल का क्या हाल है भइय्या। वे इतने लोग क्यों मर गए। उस दिन कुछ लड़कियाँ चन्दा लेने के लिए आई थीं। कपड़ा जमा कर रही थीं। क्या अभी भी वहाँ लोग मर रहे हैं ? उनसे पूछती हूँ तो वे कुछ नहीं बताते। सोचती थी कि जब तुम आओगे तुमसे पूछूँगी।"

प्रमिला अपनी बात कह कर चुप हो गई। रमेश उसकी जिज्ञासा को पहचान गया। आज वह सारी बातें जान लेने के लिए उत्सुक हैं। १९१४-१८ के युद्ध ने इन्सान को समझ लेने के लिए अधिक कुछ नहीं छोड़ा था। लेकिन आज तो हर एक मनुष्य सुबह-शाम और हर वक्त इस युद्ध पर ही सोचता है। यह युद्ध हमारी प्रतिदिन का भावना और विचारों में रल गया है। आज पुरानी सामाजिक परम्परा टूट रही है। वे पुराने बड़े-बड़े परिवार बिखर गए हैं, पुरातन से आई संस्कृत मिट सी रही है। एक नये आर्थिक युग का आरम्भ हो चुका है। जहाँ आर्थिक परिवारों का नया व्यक्तित्व पनप रहा है। उनके द्वारा शहरों में नये-नये मोहल्लों का निर्माण हो रहा है। गाँवों में एक नई आर्थिक बयार बहकर, वहाँ चेतना लाई है। भावी क्रान्ति का सन्देश वहाँ के लोगों तक पहुँच चुका है। क्या प्रमिला इन सारी बातों को जानती है ? कुछ हो उसे सब कुछ जानना ही

चाहिए। सब को इसका पूरा ज्ञान जरूरी है। सही विचारों की अज्ञानता प्रगति के लिए हितकर नहीं होती है।

प्रमिला टकटकी लगा कर उस विचारमग्न रमेश को भांप रही थी। वह अब तो सावधानी से बोला, "प्रमिला, चालीस लाख बङ्गाल में मर गए। आज तक अकाल की छाया मलेरिया चेचक आदि कई रोगों के रूप में वहाँ फैली हुई है। दस लाख से अधिक अपाहिज हैं। सम्पन्न परिवार टूट गए। लड़कियों के गिरोह वेश्यावृति में फँस गए। बच्चों की कतारें आवारागर्दी करती हैं। हजारों परिवार उजड़ गए। मदरसे मिट गए। बच्चों के पढ़ने की कोई व्यवस्था नहीं है। तेल जलाने को नहीं है, औरतों के पास अपनी लाज ढकने के लिए कपड़े का चीथड़ा तक नहीं है। वहाँ की सम्पूर्ण संस्कृति मिट रही है।"

लेकिन प्रमिला की आँखें तो डबडबा आई। रमेश प्रमिला को भावुकता की भँवरों के बीच फँसा हुआ पाकर चुप रह गया। आज अब गृहस्थी के भीतर, बच्चों के बीच उसे भावुकता को बिसार देना चाहिए। उसने आँचल से आँसू पोंछ लिए। गदगद स्वर से बोली, "भाई साहब, आपने सच बात कही है। पिछले साल यहाँ भी एक दुर्घटना हुई। हमारे पड़ोस में एक बंगाली परिवार रहता था उनकी लड़की की शादी बारीसाल हुई थी। उस लड़की के परिवार का आजतक पता नहीं चला कि क्या हुआ है। वहाँ के समाचार तो बचपन में सुनी कहानियाँ सी लगती हैं।"

"बंगाल की वे घटनाएँ प्रमिला! उस अकाल ने आज मनुष्य की बनाई हुई जातियों का भेद मिटा डाला है। यह मनुष्य कितनी ही जातियाँ और उपजातियाँ बनाले। फिर भी हमारा नाता और स्नेह हमें मुसीबत में एक कर देता है।"

"हाँ, सुनो न भाई साहब बहुत दिनों के बाद रिलीफ कमिटी ने उनकी लड़की को यहाँ पहुँचाया था। वह बहुत सुन्दर लड़की थी। उसने वहाँ की कई बातें सुनाई थीं। क्या वे सब बातें सच हो सकती हैं ?"

"क्या वह सब सुन कर तुझे आश्चर्य हुआ था।"

"आश्चर्य! नहीं-नहीं भाई साहब। वह यहाँ आई तो उसमें कोई जीवन नहीं था। एक दिन चुपके उसके प्राण भी उड़ गए। जब कि एक की मौत का इतना दुःख होता है, तो उन चालीस लाख की···।" फिर प्रमिला की आँखों से आँसू बहे। बार-बार आँचल से पोंछकर भी उनको रोक लेने में असफल रही।

प्रमिला को देखकर रमेश ने पाया कि वह कितनी सच्ची सहानुभूति थी। आज आर्थिक युग का व्यक्ति क्या इन मानव भावनाओं की महीन डोरियों को तोड़ सकेगा। यह विज्ञान का प्रसार जो कि जीवन को प्रगति देने में सफल हुआ है, क्या सारे पिछले कोमल बन्धनों को तोड़ डालेगा। कल का मनुष्य, क्या मोटर, इंजन या अन्य मसीनों की भाँति केवल एक 'मसीन' भर रह जायगा। जहाँ कि भावुकता के लिए कोई स्थान नहीं होगा।

इतिहास की ये साधारण घटनाएँ किसी सरल विश्वास में मिट जाती हैं। उनके समूहों का व्यक्तित्व फिर भी जीवित रहता है। दसवीं सदी में काश्मीर में अकाल पड़ा था। तब झेलम नदी फूली हुई लाशों से पट गई थी। चारों ओर खेतों और अन्य रमणीक स्थानों में नरकंकाल ही दृष्टिगोचर होते थे। सारे देश ने श्मशान का रूप ले लिया था। राजा तथा मंत्री वहाँ के लोगों के प्राणों से खेल रहे थे। वे ऊँचे भावों पर चाँवल बेचकर धनी बन गए। राजा और प्रजा के बीच कोई मानवीय सम्बन्ध नहीं रह गया था।

सन् १७७० का वह दूसरा अकाल '' ''। माताएँ अपने बच्चों तक को खा गईं। शहरों की सड़कों पर मुरदे ही मुरदे दिखलाई पड़ते थे। लोमड़ियों के गिरोह उन सड़कों पर रात-दिन धावा करते थे।

शायद बच्ची जाग गई थी। प्रमिला उठ कर भीतर चली गई। रमेश के मन पर बंगाल की छोटी-छोटी घटनाएँ इधर उधर छाई सी रहती हैं। एक अकाल जो सम्पूर्ण जाति को नष्ट करना चाहता था। लेकिन वहाँ की जनशक्ति ने मिल कर उसके विरुद्ध मोरचा लिया। संघर्ष के उस युग में वहाँ एक जागरुक शक्ति आई। सरीशा के देहातों में हिन्दू और मुसलमान माँओं ने एक ही छत के नीचे बैठकर अपने भूखे बच्चों को रिलीफ किचन से लाकर खिचड़ी खिलाई थी। भूख ने जाति का झूठा भेद मिटा दिया। ढाका, तिपेरा, मेदनीपुर, मुकन्दपुर चाँदपुर, कुम्मीला, चिटगाँव आदि बंगाल के कई शहर भारत के नक्शे पर चमक उठे। वहाँ के लोगों की कल्पनाएँ मिट गईं। पुरानी परम्परा खो गई। नए परिवारों का निर्माण आज वहाँ हो रहा था।

प्रमिला है कि अपनी गृहस्थी की सम्पूर्ण झंझटों को स्वयं ही सुलझाना चाहती है। वह अरुण के आगे नए-नए प्रस्ताव रखती है। उस परिवार पर छै साल के इस महायुद्ध की पूरी छाप पड़ चुकी है। कभी तो प्रमिला लापरवाही के साथ अपनी घबराहट व्यक्त कर देती है। वह भाग्य और भगवान की साक्षी नहीं देती है। न वह मायके और ससुराल की दूरी के बीच पड़े हुए प्रश्नों को उठाती है। चुपचाप अपनी गृहस्थी को चला रही है। वहाँ सुख से रहती है। वहाँ से भाग जाने की कोई भावना मन में नहीं लाती है।

जब प्रमिला बच्ची को लेकर कमरे के भीतर आई तो वह

उसी पर सोच रहा था। प्रमिला कुरसी पर बैठ गई। रमेश उसका चेहरा ताकता-ताकता रह गया। प्रमिला तो चुप थी। एकाएक रमेश ने बच्ची की ओर देखा। वह बिल्कुल प्रमिला के बचपन वाले फोटो से मिलती-जुलती थी। अभी-अभी रमेश ने प्रमिला को मौत की साधारण घटना से द्रवित होते हुए देखा था। मानो की मौत मानव की सबसे कोमल स्थिति हो। वह उसी भाँति बैठा रहा तो पूछा प्रमिला ने, "साँझ को बाजार चलोगे। मुझे घर में पहनने के लिए कुछ मोटी धोतियाँ लानी हैं। दो-चार टुकड़े ब्लाउज और बच्चों के लिए भी कपड़े ले आवूँगी। मेरी तमाम अच्छी साड़ियाँ फट रही हैं।"

रमेश चुप था। वह कहती रही, "आज तक तो शादी में पाए कपड़ों से ही काम चला लिया, पर अब बड़ी मुश्किल है। उनसे कोई चीज मंगाती हूँ तो कहेंगे कि चोर बाजार में मिलेगी। भाई साहब हरएक चीज चोर बाजार में क्यों चली गई है।"

रमेश कुछ नहीं बोला। प्रमिला सुनाती रही, "मोहल्ले में शादियाँ होती हैं, एक अच्छी सारी पहनने के लिए नहीं है। सोच रही हूँ कि पुरानी बनारसी सारी धुलवाकर रंगवालूँ। कुछ दिन तो काम चलेगा।"

अब रमेश मुसकरा कर बोला, "प्रमिला लड़ाई क्या आसान बात होती है। हम लोग तो अभी लड़ाई से दूर हैं। जापान से पूरी शक्तियों के साथ लड़ाई होगी तो हमारी कठिनाइयाँ और बढ़ जावेंगी।"

प्रमिला तो उठकर भीतर चली गई। वह कुछ देर तक लेटा अखबार पढ़ता रहा फिर उसे नींद आ गई। जब नींद खुली तो संध्या हो आई थी। अरुण लौट कर आ गया था। प्रमिला भीतर चौके में खाना| बना रही थी। रमेश को याद

आया कि सांझ को बाजार चलने की बात थी। उसने अरुण से कहा तो बोला वह, "बाजार बिलकुल खाली है। कोई चीज नहीं मिलती। पिछले दिनों दो आना की 'सिलोलाइट' की सीक दो रुपया देकर लाया हूँ।"

"प्रमिला धोतियों के लिए कह रही थी।"

"बाजार में तो एक गज सफेद कपड़ा नहीं दीख पड़ता है। सुना कि पिछले दिनों 'कन्ट्रोल' के कपड़े की कुछ गाठें आई थीं। वे हाथ के हाथ बिक गईं। कफन तक के लिए परमिट लेना पड़ता है।" कह कर अरुण ने पुकारा, "प्रमिला।"

कुछ देर के बाद प्रमिला आई तो पूछा अरुण ने, "धोबी के यहाँ से कपड़े आ गए। आज सत्तरह-अठारह दिन हो गए हैं।"

"नहीं, उसका लड़का पैसा मागने आया था। कहता था कि बाजार में कोयला किसी भाव नहीं मिल रहा है। पाँच रोज से कपड़े धुले हुए रखे हैं।"

"ऐसा जमाना कभी नहीं देखा रमेशजी। आपका क्या ख्याल है कि लड़ाई कब तक समाप्त हो जायगी।"

"यही तीन-चार साल में। उसके बाद भी पाँच-सात साल तो हालत सँभालने में ही लग जायेंगे।"

"सात-आठ साल में तो ढेर हो जायगा। आज सबसे मुसीबत हम लोगों की है। हमसे तो मजूर पेशे वाले भले हैं। आज एक तांगे वाला कह रहा था कि वह खा पीकर आसानी से डेढ़-दो सौ रुपये माहवारी बचा लेता है। ये छोटे-मोटे रिक्शे चलाने वाले ही पचास-साठ रुपया माहवारी बचा लेते हैं।"

"मेरा तो अनुमान है कि इस युद्ध के बाद एक बहुत बड़ा मध्यवर्ग अपाहिज हो जायगा। फ्रान्स की क्रान्ति ने यूरोप में जिस मध्यवर्ग को जन्म दिया था, रूस की क्रान्ति ने उसे मिटाने

की पूरी कोशिश की । हम तो आज भी पचास-साठ वर्ष पुरानी दुनिया में चल रहे हैं ।"

प्रमिला दरवाजे के पास आकर चुपचाप खड़ी हो गई । रमेश ने उसे देखकर कहा, "क्यों क्या बाजार जाने को तैयार हो गई हो ।"

प्रमिला ने तो वहीं से पूछा, "खाना अभी खाओगे या लौटकर ।" वहीं उत्तर पाने की आशा में खड़ी रही ।

"क्या बाजार जा रही हो ?" पूछा रमेश ने ।

"हाँ ।"

"तब लौट कर खावेंगे ।"

प्रमिला कुछ देर के बाद कपड़े बदल कर आई । रमेश और प्रमिला बाजार चले गए ।

—बड़ी रात को वे लौट कर आए तो पूछा अरुण ने, "क्या-क्या लाई हो प्रमिला ?"

प्रमिला तो हँसती हुई बोली, "आपका आशीर्वाद सही निकला है । कपड़ा नहीं मिला । वही गोरखपुरी चल रहा है । मदुरा की रंगीन साड़ियाँ हैं । अच्छे कपड़े का एक टुकड़ा तक कहीं नहीं दिखलाई पड़ा है । खाली हाथ लौट आए । सुना कि पिछले दिनों सुफेद वायल आई थी । एक दूकानदार ने चुपके कहा है कि दो रुपया गज के हिसाब से लेनी हो तो वह यहाँ घर पर पहुँचा देगा । मारकीन भी वह देगा ।"

"अच्छा हुआ कि औरतों का शौक तो कम हुआ । नहीं तो सिर खाए रहती थीं । अब घूमें तितलियाँ बनकर !"

"हम तितली बनें या न बनें, आप अपनी तो सोचिए कि कोर्ट जाने के लिए एक ठीक सी ठंडी सूट नहीं है । कहाँ तक पुराने कपड़ों को दरजी से रफू कराओगे ।"

अरुण ने रमेश से कहा, "तुम ही सबसे भले हो । खद्दर तो

मिल ही जाता है। सुना कि गाँधीजी ने उस पर भी सूत कात कर देने का कन्ट्रोल लगा दिया है। हमसे तो चर्खा काता नहीं जा सकता है।"

रमेश ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह कुछ देर तक वैसे ही बैठा रहा। अंत में प्रमिला से पानी पीने को माँगा। अरुण ने शरबत का प्रस्ताव किया। प्रमिला चुपचाप भीतर चली गई। कुछ देर के बाद दो गिलास शरबत बनाकर ले आई। रमेश घूंट-घूंट कर शरबत पी रहा था। प्रमिला चुपचाप खड़ी थी। तभी अरुण ने पूछा, "आज की गाँधीजी की अपील पढ़ी है।"

"अष्टी और चैमूर के कैदियों के सम्बन्ध में न।"

"उसका कोई असर नहीं होगा। सरकार किसी तरह समझौता न करेगी। गाँधीजी पिछली बार लाहौर षणायंत्र के कैदियों को बचाने में असफल रहे थे।"

"तब और आज के जनमत में अन्तर आ गया है।"

"आप लोग बेकार जनमत! जनमत!! चिल्लाते हैं। मैं यह मान लेता हूँ कि गाँधीजी में एक शक्ति है। जनता उनको अपना नेता मानती है। लेकिन गाँधीजी का मुसलिम-लीग से समझौता करना समझ में नहीं आता है। क्या मुसलमान जनता भी पाकिस्तान चाहती है। मैं तो यही कहूँगा कि कदापि नहीं। हिन्दुस्तान अखंड है। कांग्रेस को हिन्दुओं ने बनाया है। हम उसके टुकड़े नहीं होने देंगे।"

"तुझे इस पर क्या कहना है प्रमिला?" रमेश तो कह बैठा। यह प्रश्न करना उचित है या अनुचित, इस पर नहीं सोचा।

"मैं इतनी विद्वान कहाँ हूँ भाई साहब।" वह सरलता से

बोली, "खाना खालो न। कपड़े की समस्या तो वकील साहब से सुलझने की नहीं है।"

"यहीं खा लेंगे।", बोला अरुण। प्रमिला भीतर चली गई।।

यह अष्टी और चैमूर आज प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक जीवित प्रश्न बना हुआ था। क्या सरकार जनमत को ठुकराकर उन सात व्यक्तियों को फाँसी दे देगी। लोग यहीचाहते थे कि सजा कालापानी में बदल दी जाय। मानवता की रक्षा के लिए ही सदा समाज में सुधार किए गए हैं। वह रमेश सैद्धान्तिक रूप में फाँसी की सजा के पक्ष में नहीं है। वह सोचता है कि इससे अधिक बर्बरता पूर्ण कृत्य और कोई नहीं है। जनता की आवाज और राष्ट्रीय सरकार की आकांक्षा! राजनीतिक दाँव-पेंच आसान नहीं लगते थे। चैमूर और अष्टी की बातें आज भी उसके मस्तिष्क में ताजी हैं।

प्रमिला ने खाने की थाली आगे रख दी थी। वह चुपचाप सोच रहा था कि १६४२ और १६४५ के बीच आज बहुत बड़ा फासला लगता है। आज लोगों की निगाह कई राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों की ओर लगी हुई हैं। आज अब जीवन स्थिर नहीं लगता, उसमें गति सी आ गई है। लगता है कि १६४२ बहुत पीछे छूट गया है और आज सब नए प्रश्नों को सुलझाना चाहते हैं। जैसे कि पिछली गतिरोध के बाद कोई नया प्रश्न आज सब सुलझाना चाहते हों। १६३६ में कांग्रेसी मंत्रिमंडल जितनी सुगमता से टूट गए थे, आज उतनी आसानी से उनका निर्माण होना संभव नहीं लगता है। देश की राजनीतिक स्थिति बहुत पीछे हट गई है। युद्ध के इस जमाने में सब देशों ने प्रगति की थी। जबकि यह देश चुपचाप रहा है। गाँधीजी आज उलझे हुए लगते थे। मानो कि

६ अगस्त की घटनाओं वाली भावुकता और उस आन्दोलन की झाँकियाँ, बंगाल के अकाल आदि समस्याओं पर गंभीरता से सोचकर कोई नया कदम रखने की सोचेंगे।

प्रमिला तो हँस पड़ी। रमेश चैतन्य हुआ। बोली प्रमिला, "फिलासाफर कब से बन गए भाई साहब।"

कहा फिर अरुण से, "रमेश भइया एक बार कालेज से घर आए थे तो हम सब लोग इनको देख कर दंग रह गए थे। दाढ़ी रखली थी। सबको बड़ा आश्चर्य हुआ था। छोटे बच्चे तो इनको पहचान भी नहीं सके थे।

वह दाढ़ी बढ़ाने की बात सच थी। कालेज में कुछ दोस्तों ने एक क्लब बनाया था, जहाँ कि सब दाढ़ी रखते थे। रमेश उसका सदस्य बन गया था। वह बहुत ही पुरानी बात थी। वह खा रहा था और प्रमिला आग्रह के साथ खिलाती जा रही थी। उसकी गोदी पर बच्चा चिपका हुआ था।

खा-पीकर अरुण और रमेश बैठ कर गपशप करते रहे। प्रमिला भी घर के काम धन्धों से निपटकर कुछ देर के बाद आ गई। आज उसे पति से कोई झिझक नहीं है। शादी के रोज तो वह गुड़िया सी बन कर बिदा हुई होगी। आज अब अपनी गृहस्थी के भीतर है। पिछली बातें याद कर लेने का अवकाश कहाँ मिलता होगा।

बोला ही अरुण, "बैठ जा प्रमिला।"

वह तो कुछ देर उसी भाँति खड़ी रही। अब अरुण के पास पड़ी कुरसी पर बैठ गई। अरुण ने कहना शुरू किया, "बहुत काम करना पड़ता है बेचारी को। हम लोग बिना अच्छे नौकर के कभी नहीं रहे हैं। मुझे तो डर लगता है कि कहीं यह बीमार न पड़ जाय। तीन-तीन बच्चे हैं।"

और हँस पड़ी प्रमिला, कहा फिर, "घर का काम सभी को

करना पड़ता है। क्यों भाई साहब यह लड़ाई कब तक चलेगी।"

प्रमिला यह प्रश्न बार-बार पूछती है। वह इस लड़ाई के युग वाले भार से थकी सी लगती है। वह सोचती है कि अब अधिक दिन लड़ाई नहीं चलनी चाहिए अन्यथा यह परिवार अब ज्यादा युद्ध के झोंके नहीं सह सकेगा। वह इस डर को बार बार अज्ञेय ही व्यक्त कर चुकी है। तो क्या वह इस युद्ध से बहुत भयभीत हो गई है ? नहीं, वह सारी परिस्थिति का मुकाबला शक्ति भर कर रही है। वह कभी नहीं हारेगी। वह परिवार के चटख जाने का भय सभी को है। हरएक गृहस्थ चिन्तित है। उसकी आर्थिक भित्ति टूट गई है। कल नए आर्थिक परिवार बनेंगे। आज उनका अनुमान लगा लेना कुछ आसान सा काम नहीं है। शायद ही कोई परिवार स्वस्थ हों। उसने प्रमिला के चेहरे पर झाइयाँ पाई हैं। वह बहुत थकी सी लगती है। मानो ज्यादा दिनों तक परिवार का भार उठा लेने में अपने को असमर्थ पाती हो। फिर भी अपनी हँसी के भीतर सारा दुःख आसानी से छुपा लेना जानती है। वह कैसी विचारों की व्याकुलता व्यक्त करती है ? उसे उसके सवाल का उत्तर देही देना चाहिए।

तो बोला रमेश, "क्यों क्या बात है प्रमिला। क्या तू भी लड़ाई पर जाने की बात सोच रही है। अब तो वहाँ सबकी माँग है। खाकी बरदी वाली लड़कियाँ तूने देखी हैं। वे बड़ी बहादुरी का काम करती हैं। यह युद्ध चलता ही रहेगा। जबतक कि हरएक देश में स्वार्थी लोग हैं और जनता के हाथों में शासन सूत्र नहीं आता है। मैं तो स्वयं इस युद्ध में जाना चाहता था, ताकि समीप से उसे देख सकता।"

"युद्ध !"

अरुण के मुँह से छूटा। वह बोला फिर, "सुना कि हिटलर की नात्सीपार्टी स्पेन और अर्जिनटाइना में पनप रही है। अब अगला महायुद्ध दक्षिणी अमेरिका में होगा। लेकिन युरोप में तो हिटलर हार ही सा रहा है।"

"इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। पोलैण्ड, ग्रीस, रुमानिया आदि छोटे-छोटे देशों की जनता संगठित हो गई है। हर जगह छापेमार सिपाहियों के दल में नागरिक शामिल हो गए हैं। १६१८ के बाद वाला युरोप मिट गया है। इस युद्ध के बाद तो युरोप का भूगोलिक नक्शा बिलकुल बदल जायगा।"

इस दलील से जैसे कि प्रमिला को कोई दिलचस्पी नहीं हुई। वह उठ कर चली गई और कुछ देर के बाद दो गिलासों में दूध ले आई। रमेश के अस्वीकार करने पर बोली, "आपके पीने की आदत न सही, सामने वाले ग्वाले से अपने आगे दुहाकर लेती हूं। डेढ़ सेर का देता है। पर भाई साहब इतना अच्छा दूध कहीं नहीं मिलेगा।"

रमेश ने गिलास ले लिया। उस अच्छे दूध को पीने लगा। प्रमिला वहीं कुरसी पर बैठकर अखबार पढ़ती रही। प्रमिला ने इन्टर पास किया था। उसकी ख्वाहिश थी कि आगे पढ़े। लेकिन उसकी शादी हो गई थी और बी० ए० के इम्तहानों से बड़ी-बड़ी परीक्षाएँ वह दे रही थी। वह चुपचाप अखबार देखती ही रही। बड़ी देर के बाद टोका अरुण ने, "क्या पढ़ रही है?"

रमेश ने तो प्रमिला की आँखें गीली पाईं। वह अवाक सा पूछ बैठा, "क्या बात है?"

"कुछ नहीं भाई साहब।" उसका स्वर रुँधा हुआ था। आँचल से फिर एक बार उसने अपनी भीजी पलकें पोंछलीं।

"क्या हुआ प्रमिला।" कहकर अरुण ने अखबार ले लिया।

सरसरी तौर पर देखकर बोला, "चैमूर के बारे में पढ़ रही थी। भला इसमें भावुकता की क्या बात है ?"

"आप वकील हैं साहब। कानून भावुकता को सुखाना चाहता है।" बोला रमेश। कहता ही रहा, "आज यह सब से महत्वपूर्ण प्रश्न है। हमारे देशवासियों की आँखें उन नवयुवकों पर लगी हुई हैं। उनको सैन्फ्रॉन्सिसको कॉन्फरेन्स या युरोप की लड़ाई से कोई दिलचस्पी नहीं है।"

प्रमिला ने तो गदगद स्वर में पूछा, "क्या सबको फाँसी लग जायगी ?"

क्या वह प्रमिला की इस बात का उत्तर भी नहीं देगा। वह कब तक उसके आगे निरुत्तर रहेगा। उसे याद आया कि पिछले साल २८ मार्च को कय्यूर के चार नवयुवक किसानों को फाँसी दे दी गई थी। चारों पच्चीस वर्ष से नीचे के थे। थोड़ा लिखना पढ़ना जानते थे और गाँव के सर्व मान्य नेता थे। उन्होंने किसानों का संगठन करके किसान सभा स्थापित की थी। वहाँ वे जबरदस्त आन्दोलन चलाने में सफल हुए थे। पुलीस और जमींदार दोनों उनसे घृणा करते थे। उनके आन्दोलन को दबाने के लिए खास पुलीस भेजी गई थी। सिपाहियों ने तलाशी के बहाने लूट-पाट शुरू कर दी। फिर भी आन्दोलन शिथिल नहीं हुआ। एक सिपाही जिसने गाँव की एक लड़की के साथ बदतमीजी की थी, उसे भीड़ ने जोश में आकर पत्थरों से मार डाला। उसीके लिए ये चारों फाँसी पर चढ़ा दिए गए थे।

प्रमिला का प्रश्न जटिल नहीं था। बोला वह, "प्रमिला, यह हमारी सरकार नहीं है। भारतीय सरकार अपने निर्जीव कायदे कानूनों पर चलती है। वह कानून और कायदे की प्रतीक्षा के लिए जनमत की परवा नहीं करती।"

वह लड़की यह उत्तर सुनकर अवाक रह गई। बड़ी देर तक वहाँ मौत का सा सन्नाटा रहा। दीवार घड़ी ने ग्यारह बजा दिए। अरुण उठा और बोला, "ग्यारह बज गए हैं।" चुपचाप भीतर चला गया।

प्रमिला कुछ देर तक उदास सी कुरसी पर बैठी रही। उसका सिर झुका ही रहा। वह बहुत चिन्तित सी लगी। रमेश शायद उसे ठीक तरह समझा नहीं सका था। वह कथन भले ही सत्य हो, पर बहुत भारी सा लगा। वह अपने भाई की बात समझ गई थी। लेकिन प्रमिला एकाएक उठी, कहा, "आप सो जावें। बहुत थके होंगे।" चली गई।

रमेश तो उसी भाँति कुरसी पर बैठा रहा। कय्यूर, चैमूर और अष्टी·····। भारतवर्ष की भूगोल के ये अपरचित शहर आज राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ चमक उठे थे। कय्यूर के साथियों की तसवीर उसे याद हो आई। वह धुँधली तसवीर:—
'वह जेल का फाटक भी दूसरी जेलों की तरह था। किसी भी जेल की खिड़की की भाँति इस जेल के फाटक की खिड़की भी हमारे लिए खुली और झुककर हम अन्दर निकले। रजिस्टर पर दस्तखत किए। जेलर हमारे साथ हो लिया। मुरमी के रास्तों पर चक्कर लगाते हुए हम एक दूसरे फाटक पर पहुँचे और फिर फाँसी वाली कोठरी के सामने।

वे पूरे एक साल से उन कोठरियों में पड़े हुए थे। उनके शरीर दुबले हो गए थे, किन्तु उनके चेहरों पर साहस और प्रकाश की उज्ज्वल दिप्ति थी। लोहे के शलाखे ही नहीं बरामदा भी हमारे और उनके बीच था। उनके पास जाकर उनके हाथ को दबाना एक नया अनुभव था। मेरा सारा शरीर पुलक उठा।

अप्पु मेरे हाथ को थोड़ी देर तक पकड़े रहा। अब धीरे से

बोला, "साथी !" मैंने उसकी आँखों की ओर देखा, वे भीगी थीं। मैं दूसरी ओर देखने लगा। बरामदों के उधर, कुछ आगे फूल लगे थे। अनायास मेरे हृदय से ये भाव फूट निकले, "ये सब फूल नाशवान हैं। लेकिन तुम साथियों मानवता के फूल हो जो कि कभी नहीं मिट सकते।"

हम बाहर निकल आए। हमारे पैर अब बहुत हल्के थे। दिल का अरमान मिट चुका था। हमें अपने साथियों पर अभिमान हो रहा था.... मोटर रेलवे स्टेशन की ओर दौड़ने लगी।'

२६ मार्च की सुबह को कैय्यूर के उन साथियों को फाँसी दे दी गई।

—रमेश के हृदय पर यह तसवीर अंकित है। वह सदा याद रहेगी। अब चैमूर और अष्टि....। वह उठा और चुपचाप चारपाई पर लेट गया था।

बड़ी सुबह रमेश की नींद टूटी। वह चुपचाप लेटा ही रहा। आज वह जीवन में संघर्षों के विभिन्न रूपों पर सोचता रहा। पग-पग पर वह संघर्ष पाता था। आज परिवारों के भीतर भी वह संघर्ष निखर आया था। वह वर्ग और व्यक्तियों के आपसी झगड़ों पर सोचता रहा। यह प्रमिला आज मायके वाले परिवार से बड़ी दूर है। वहाँ से इसका नाता टूट चुका है। यहाँ का उसका दैनिक संघर्ष इस परिवार के हित के लिए ही है। आज उसे मायके का कोई लोभ कब है। यह मायका और ससुराल का सम्बन्ध लड़कियों के मोह की अजीब डोरी है। दोनों के बीच वह नाता जोड़ लेती हैं। दोनों का ही अलग-अलग व्यक्तित्व है।

भीतर प्रमिला का स्वर सुनाई दिया। फिर मुन्नी रो उठी थी। चुन्नूजी भी माँ से किसी चीज की माँग का जोर लगाए हुए थे। वह बिस्कुटों की माँग थी। प्रमिला थोड़ी देर में देने को कहती थी। वह अपनी हठ ठाने थे। प्रमिला ने नया मोरचा लिया, "मामूजी सुनेंगे तो सबसे कह देंगे कि चुन्नू खराब लड़का है।"

चुन्नूजी चुप हो गए थे। मुन्नी की स्वर लहरी बन्द हो गई। कुछ देर के बाद प्रमिला ने कमरे में आकर पूछा, "दियासलाई तो नहीं होगी।"

रमेश ने डिबिया दे दी। प्रमिला कहकर, "मेहरी ने न जाने कल कहाँ रख दी है।" भीतर चली गई। उसकी दैनिक चर्या आरम्भ हो गई थी।

वह उसी भाँति लेटा हुआ रहा। अनायास कोई बात याद आ गई। भीतर पहुँचा देखा कि प्रमिला पत्थर के कोयलों वाली अँगेठी सुलगा रही थी। वह तो बोला, "मैं खाना नहीं खाऊँगा। आठ बजे कॉन्फरेन्स में जाना है। शाम को चाय पर आने की कोशिश करूँगा। वैसे काम बहुत है। कल किसी गाड़ी से चला जाना है।"

"कल लौट जाओगे। मैं सोचती थी कि कुछ दिन रहोगे। अभी तो आपने यहाँ घूमा ही नहीं है।" उसने एक अच्छे 'गाइड' की भाँति कई स्थानों के नाम सुनाए।

वह लौट रहा था कि कहा प्रमिला ने, "नाश्ता पन्द्रह मिनट में तैयार हो जायगा।"

"इतनी सुबह।" कह कर वह और आवश्यक कामों से निपटकर बाहर चला गया। प्रमिला दरवाजा बन्द करने आई थी।

—रमेश बाहर निकला। उसे कॉन्फरेन्स में जाना था। वह जानता है कि वहाँ मध्यवर्गीय लोगों की राष्ट्रीय भावना के अतिरिक्त जनता का स्वर नहीं मिलता है। दूर दूर के शहरों के आए हुए प्रतिनिधि अपने वर्ग का सच्चा प्रतिनिधित्व नहीं कर पाते हैं। ये जलूस तो वास्तविक जीवन से बड़ी दूर से लगते हैं। संभवतः कल निकट भविष्य में उनका जीवन से सही सम्पर्क हो। आज अभी वे मध्यवर्ग की बौद्धिक भावनाओं को व्यक्त करती हैं। वह जानता है कि प्रमिला के परिवार को इन राजनीतिक जल्सों से कोई दिलचस्पी नहीं है। वकील साहब के साथ पहले कभी-कभी वह हिन्दू महासभा के जल्सों में गई है। वे ही सनातनी रूढ़िवादी विचारों को पाकर उनसे अधिक रुचि नहीं रख पाई। अखबारों की कुछ घटनाओं से कभी-कभी राष्ट्रीय-भावुकता का जोश मन में अनायास सा फैल जाता है। फिर वह अपनी उस छोटी सी दुनिया में खो जाती है। आज एक ही प्रश्न वह पूछती है कि यह लड़ाई कब समाप्त हो जायगी। सब कोई इस लड़ाई से ऊब उठे हैं। कभी युद्ध शक्ति का प्रदर्शन करते थे और आज विचारों का संघर्ष, तोप, टैंक, गैस, टॉमीगन फाइटर, हैंड ग्रेनेड, गैसें ·····! विज्ञान ही आज विचारों की विजय का साधन बना हुआ है। उसे मानवता के कल्याण की कोई चिन्ता नहीं है। विचारों के इस युद्ध ने दुनिया का नक्शा ही बदल दिया है। इस युद्ध के अनुभव बहुत कड़वे हैं। जिस ओर प्रमिला का इशारा था, वह है मध्यवर्ग का एक प्रश्न! राशन, कंट्रोल, चोर बाजार आदि इस वर्ग के आगे हिमालय पहाड़ की भाँति खड़े लगते हैं। जिनको पार करना आसान बात नहीं है। प्रमिला बाजार गई थी। रङ्गरेज से पूछती थी कि क्या वह उसकी पुरानी जारजेट और रेशम की साड़ियाँ रङ्ग देगा। महँगा नया कपड़ा खरीद लेने की शक्ति परिवार में

नहीं रह गई है। प्रमिला भले ही हँस-हँसकर बातें करती है, फिर भी वह पाता है उस समाज और परिवार के बीच झूठी प्रतिष्ठा की एक गहरी खाई पड़ गई है? वह समाज और परिवार साथ-साथ नहीं चल पा रहे हैं। आगे समय की गति के साथ दोनों को फिर से नई धारणाएँ मान लेनी होंगी।

जैसे कि एक भारी ठोकर खाकर रमेश चौंक उठा। वह एक नया परिवार बसाने जा रहा है। कहाँ तीन मास के बाद वह एक लड़की को शादी करके ले आवेगा। वह उसे जानता नहीं है। पहचानता भी नहीं है। उसके बारे में घर की औरतों के बीच जो चर्चा हुई, वही उसने सुनी है। अम्मा कहती कि उसके पंख लग गए हैं, अब वह लड़की उनको काट डालेगी। एक दिन जेल का अनुशासन भंग करने के लिए उसे बेड़ियाँ पहनाई गई थीं। आज अब सुनता है कि वह लड़की आकर मोह ममता और नमक, तेल, लकड़ी की बेड़ियाँ पहना कर कैद लेगी। सुना कि ये लड़कियाँ वह सब ज्ञान अज्ञेय ही पा जाती हैं। क्या प्रमिला ने भी अरुण को बेड़ियाँ पहनाई हैं? उसे तो लगता है कि वह ससुराल के भीतर कैद हो गई है। तीन बच्चों के बाद घर के काम-काज में फँसी रहती है। वह कुछ दिनों के लिए भी गृहस्थी को छोड़ कर मायके नहीं जा सकती है। मायके का लोभ है, पर युद्धकाल के बाद वहाँ जाने की सोचती है। इस घर का मोह अधिक है। मायका तो एक बीती घटना भर, दूरलगता है।

प्रमिला की मायके की बातें! वह चैमूर के एक नवयुवक ने माँ के आँसू पोंछते हुए कहा था, "माँ उदास मत हो। मुझे भुलाने की कोशिश करना। तुम अपने पुत्र की राष्ट्रीय यज्ञ में आहुति दे रही हो। अगर मुझे फाँसी हो जाय तो तुम आँसू न बहाना और सोचना कि सखाराम तुमारी कोख में जन्मा ही नहीं है।"

वह माँ उस अतिथि से मिलने के लिए रायपुर जेल में गई थी। ९ अगस्त के उस आन्दोलन का यह एक बलिदान था। गाँधीजी का भावुक हृदय भी पिघल आया था। उनका कहना था, "यदि समाचार सच्चा है तो चिन्तोत्पादक है। मैं सरकार की नीति का विरोधी हूँ। विशेषकर इस मामले में। ८ अगस्त के बाद जो कुछ कार्य हुआ वह उत्तेजनावश किया गया था। यदि ये फाँसियाँ कार्यान्वित की गईं तो यह निर्मम कार्य होगा, क्योंकि तथा कथित न्याय के नाम पर होगा। इसके प्रमाण स्वरूप वर्तमान कटुता का प्रसार होगा। मैं चाहता हूँ कि फाँसी की बात दूर करदी जाय। यदि संयुक्त भारत की माँग है कि फाँसी की सजा रद्द करदी जाय, तो यह हो सकता है।"

९ अगस्त.....! साम्राज्यवादी शासन ने जनता के हाथ में शक्ति देना अस्वीकार करके जनता की सर्व प्रमुख राजनीतिक संस्था, काँग्रेस को कुचल डालने की चेष्टा की थी। भारत की रक्षा के नाम पर विदेशी नौकरशाही ने देश भक्तों को राष्ट्र की रक्षा के साधनों—यातायात के साधनों को नष्ट कर देने को उत्तेजित कर दिया। शक्ति रक्षा के नाम पर ऐसे खूनी सप्ताहों की सृष्टि की, जैसा हमारे देश ने १८५७ के सिपाही विद्रोह के बाद कभी नहीं देखा था। भारतीय देशभक्ति का उपयोग न करके, उसने हमारी राष्ट्रीयता को आग में झोंक दिया।

आज १९४५ में गाँधी जी राजनीतिक कार्यक्रम पर कुछ नहीं सोच पा रहे थे। उनका कोई रचनात्मक कार्यक्रम देश को प्रगति नहीं दे पाया। जनता मानो कि गाँधी को पीछे छोड़ देना चाहती है। उनकी राजनीति में उदासीनता सी आ गई थी। उनकी आत्मा में संभवतः अभी कोई दैवी पुकार नहीं मची थी, जो कि उनको रास्ता दिखलाती। रमेश गाँधीजी की महानता को १९३० के आन्दोलन के बाद नहीं मानता है। आर्य

समाज के फैलाए हुए प्लेटफार्म पर कांग्रेस आई थी और गांधीजी ने देहातों तक राष्ट्रीय विचार फैलाकर अपना काम समेट लिया था। अब वे महात्मा बनकर आशीर्वाद भर देते थे। सक्रिय राजनीति से जैसे कि उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। रमेश बार-बार गांधीजी के आन्दोलनों के साथ जेल गया है। वहाँ से लौट आने के बाद उसे सदा जोश ठंडा देख पड़ा। उस सुलगी ज्वाला की बुझी हुई राख को गांधीजी के चेले लगाकर नेता बन जाते थे। अपनी अन्तिम जेल यात्रा के बाद वह गांधीजी की पुकार नहीं सुन पाता है। और अब वह गृहस्थ बनने की भी सोच रहा है।

प्रमिला ने उसे नई गृहस्थी को चलाने के कोई सबक नहीं पढ़ाए थे। तब उसे भी रुपया कमाना होगा। नौकरी वह करेगा या किसी इन्सोरेन्स कम्पनी की एजेन्टी। उसकी देशभक्ति का सार्टिफिकेट उसके व्यवसाय को फलने फूलने में मदद देगा। उसकी गृहस्थी के अंकुर फूटेंगे और आठ-दस साल बाद वह एक बड़े परिवार का स्वामी बनेगा। तब वह प्रमिला को अपनी गृहस्थी का निरीक्षण करने के लिए बुलावेगा। प्रमिला ने तो उसे सुझाया है कि गृहस्थी का जीवन भी सुखद होता है। इस नए अनुभव से वह बहुत प्रसन्न है।

रमेश कॉन्फरेन्स में पहुँच गया था। उस बड़े पंडाल पर उसकी दृष्टि पड़ी। चारों ओर बहुत से लोग जमा थे। वह चुपचाप एक ओर बैठ गया। एकाएक उसकी निगाह सामने बैठी हुई एक लड़की पर पड़ी। वह चिट्टे रङ्ग की लाल साड़ी पहने थी। चेहरा खिला हुआ था। सारा सौन्दर्य निखरा था। उसके बाल बैंजनी फीते से बँधे हुए थे। जब कि वह एक प्रस्ताव पर बोलने उठी तो वह उसका एक एक शब्द सुनता रहा। वह बीच-बीच में गहरी साँस लेती जाती थी। एक बार वह पानी

पीने लगी। कभी वह अपनी फीकी आँखों से उस भीड़ को देखने लगती थी। तो फिर वह आँखें नीची कर लेती थी। वह बार-बार उसके स्वर में एक कम्पन सा पाता था। मानो कि सारी भावुकता का ज्वार बीत चुका हो। वह उन अष्टी और चैमूर के कैदियों की प्राणों की रक्षा की बात कह रही थी। एकाएक उसका स्वर बन्द हो गया। वह गिर पड़ी थी। उसे गश आ गया था।

वह उसे जानता है। उसका दुःख समझता है। उसके पति को अगस्त के आन्दोलन में सतरह साल की कैद की सजा हुई है। जब वह लौट कर आवेगा तो यह अपने सब अरमानों को उसे सौंपेगी। वह आज अपनी युवती वाला जीवन नहीं भूल पाती है। कानों में शंखनुमा टाप्स, गले पर मोटे दानों की सोने का माला। अठारह वर्ष की प्रतीक्षा का प्रश्न; उस अज्ञेय से अतिथि की प्रतीक्षा में!

रमेश जेल का वातावरण भली भाँति जानता है। जब वह जेल में था तो वहाँ एक युवक पकड़ कर लाया गया था। वह जेल के अधिकारियों को परेशान करता था। वह बहुत सच्चा युवक था, किन्तु अन्याय के प्रति असहयोग करने में प्रवीण था। अधिकारियों ने उसे दो सप्ताह तक एक पागल कैदी के साथ रख दिया। एक दिन रमेश उस कोठरी के पास से गुजरा था तो उसने रमेश को पुकारा था। रमेश रुका तो वह जोर से व्याख्यान देने लगा था। वह ऐसी तेजी से बोल रहा था मानों कि सामने लाखों की भीड़ हो। वह फिर एकाएक चुप हो गया। कुछ देर बाद बोला था—आप वारंट लेकर आए हैं। बन्देमातरम्, अंगरेजों भारत छोड़ दो, चलिए मैं तैयार हूँ। जवाहर लाल नेहरू की जय! गांधीजी की जय!! भारत माता की जय!!! उसने रमेश से कहा था कि वह भी नारे लगावे।

उसे जेल के अधिकारियों पर क्रोध आया था कि उन लोगों ने जान बूझ कर उसका जीवन नष्ट कर दिया है। पीछे उसकी हालत बहुत खराब हो गई थी। एक रात को वह उत्तेजित होकर नारे लगाने लगा, फिर उसने लोहे के छड़ों को तोड़ लेने की चेष्टा की। आजादी का नारा लगाता हुआ वह मर गया था।

इस लड़की के पति को लम्बी जेल की सजा हुई थी। अगस्त आन्दोलन एक नई राष्ट्रीय भावुकता की बयार लाया। सन् १८५७ के बाद एक बार फिर देश ने विद्रोह किया था। इस क्रान्ति को गांधीजी की असहयोगी भावना न चला सकी। क्रान्ति हिंसा की ओर बढ़ कर रुक गई। मध्यवर्ग के नेता जेलों में चले गए थे। जनता बिना किसी कार्यक्रम के छूट गई थी। अब उस लड़की ने आँखें खोललीं थीं। वह चुपचाप उदास बैठी हुई थी। फिर वह उठकर बाहर चली गई थी। आज उसकी गृहस्थी उजड़ सी चुकी है। प्रमिला को तो राजनीति से कोई दिलचस्पी नहीं है। न उसे युद्ध की गति विधि की जानकारी ही है। कुछ यथार्थ घटनाओं की कसौटी पर गृहस्थी को परखा करती है। नहीं, जीवन कठिन पाकर चाहती है कि युद्ध समाप्त हो जाय। युद्ध की कई भद्दी छाप उसके मन पर पड़ चुकी हैं।

रमेश लौट आया। प्रमिला बाहर आँगन में खाना बना रही थी। उसे देखकर बोली, "बड़ी देर लगाई भाई साहब। वे अभी अभी क्लब चले गए हैं।"

सात बज गए थे। वह चुपचाप भीतर चला आया और आराम कुर्सी पर लधर गया। भारी थकान लग रही थी। उसने आँखें मूँदलीं। उसी भाँति कुछ देर लेटा रहा। एकाएक छोटे बच्चे भीतर आए। आँखें खुल गईं।

चुन्नू तो बोला, "मामाजी गाना गाओ।"

"पहले तू सुना।"

"आप पहले।"

"तुझे गाना आता है।"

"हाँ, बाबूजी को भी, अम्मी भी···?"

रमेश आ-आ करके गाना गाने लगी, चुन्नू हँस पड़ा। तभी प्रमिला ने भीतर से आकर कहा, "क्यों शरारती मामाजी को तङ्ग कर रहा है।"

चुन्नू एकाएक गंभीर हो गया प्रमिला बोली, "चुन्नू को अपने साथ ले जाइएगा।"

"चलेगा चुन्नू ?"

वह माँ की ओर देखने लगा तो वह बोली, "मामाजी के साथ जायगा रे।"

चुन्नू ने हामी भर दी। प्रमिला हँस पड़ी। चुन्नू अवाक रह गया। उसकी समझ में बात नहीं आई।

पूछा प्रमिला ने, "खाना अभी खाओगे या ठहर कर।"

"ठहर कर।"

वह चुपचाप खड़ी रही तो पूछा रमेश ने "तू कब तक आवेगी ?"

"जब बुलाओगे।"

"तब साथ चली चल। वकील साहब से कह दूँगा।"

"अब तो भैय्या नकेल खींचने वाली आ रही है।"

"क्या प्रमिला ?"

"तब इतने स्वतन्त्र नहीं रह जाओगे। सच कहती हूँ। भैय्या बड़ा बुरा जमाना आ गया है। पैसे की कोई कीमत नहीं है। गृहस्थी चलानी मुश्किल हो रही है।"

"तू तो बिलकुल पुरखिन बन गई है।"

"सच पूछो तो भैय्या शादी करना एक झमेला मोल ले

लेना है। मैं तो सलाह यही देती कि आप झगड़े में न पड़ें। तब यह मस्ती नही रह जायगी। हम लड़कियों का क्या है? माता-पिता ने जिसके गले मढ़ दिया वहीं रहना पड़ता है। तुम ही बताओ भैय्या आखिर लड़कियों ने क्या बिगाड़ा है?"

रमेश इस पर क्या कहता? प्रमिला तो एकाएक भीतर चली गई थी। उसका सवाल वैसे का वैसा ही सामने पड़ा रह गया। क्या वह उसका उत्तर देगा? कान्फरेन्स की वह भावुक लड़की जिसके पति को सतरह साल की जेल हुई थी। यह प्रमिला पूछती है कि समाज में लड़कियों का दरजा लड़कों के समान क्यों नहीं है? वह भार···।

चुन्नू तो पुकार रहा था, "मामाजी! मामाजी!!"

देखा रमेश ने कि लकड़ी का खिलोना हाथ में लिए हुए था। वह उस हवाई जहाज के ढांचे को देखने तुल गया। चुन्नू ने वह उसे दे दिया था।

वकील साहब आ गए। पूछा, "कितने प्रस्ताव पास कर आए हो?"

"सात!"

"बस।"

"आप क्या सोचते थे?"

"यही कि तीस-चालीस तो होते। कितने ही प्रस्ताव करो सरकार के कान पर तो जूँ नहीं रेंकती है। आज कल नमक के दरोगा, गल्ले के दरोगा, कपड़े के दरोगा·····। लड़ाई ने दरोगाओं की कई उपजातियाँ बनादी हैं। खुले आम चोर बाजार चलता है। कोई सुनवाई नहीं है।"

रमेश तो चुप था! प्रमिला खाना खाने के लिए बुलाने आई थी। वे चुपचाप चले गए और जल्दी ही लौट आए।

चुन्नूजी अपने हवाई जहाज से खेल रहे थे। कहा वकील साहब ने, "क्यों बेटा कौन-कौन चढ़ेगा इस पर।"

"आप, मुन्नी और दादी।"

"और अम्मी!"

"वह मारती है।"

"और मामाजी?"

कुछ उत्तर न देकर चुन्नू रमेश को देखने लग गया। वकील साहब बोले, "मामाजी की लाई हुई सब मिठाई तो खा गया है।"

"मामाजी भी चलेंगे।"

"कहाँ चुन्नू।" प्रमिला पान लाई थी।

चुन्नू चुप हो गया। फिर पूछा प्रमिला ने, "क्यों शरारती कहाँ ले जायगा मामाजी को?"

चुन्नू तो चुप ही रहा। प्रमिला चली गई। अब बोले वकील साहब, "मैं प्रमिला से कह रहा था कि रमेशजी ने भी आफत मोल लेली है।"

"कैसी आफत?"

"यही शादी करना। मजे में थे। अब सब किरकिरा ही समझो। यहाँ तो वकालात कुछ नहीं चल रही है। लड़ाई के बाद चले तो चले। इस लड़ाई में सबसे ज्यादा नुकसान हम लोगों को हुआ है। नए वकील तो फौज में भरती हो गए हैं।"

"बीच के लोगों को कोई लाभ नहीं हुआ है। बड़े-बड़े व्यवसायी ही इसमें बने हैं।"

"लखपती करोड़पती हो गए और हम कर्जदार।"

"प्रमिला को कब भेजोगे?"

"जब चाहो ले जाना।"

रमेश चुप हो गया। वकील साहब चले गए। चुन्नू उसके पलङ्ग पर सो गया था। वह अपनी चीजें संभालने लगा। प्रमिला धुले हुए कपड़े ले आई थी। वह जब सब कुछ ठीक कर चुका तो बोला, "अगले हफ्ते किसी को भेज दूँगा।"

"दो महीने के बाद आ सकूँगी। अभी यहाँ बहुत काम है।"

"तभी सही।"

"और भाई साहब, आप घबरा तो नहीं गए हैं। सुना भाभीजी बहुत होशियार हैं।"

"वह तो सुन चुका हूँ।"

"आप कल सुबह जा ही रहे हैं।"

"हाँ।"

"अब आप सो जाँय।" कहकर प्रमिला चली गई।

रमेश ने रोशनी बुझा दी। चुपचाप बड़ी देर तक कई बातें सोचता रहा। प्रमिला की गृहस्थी, उसके द्वारा उठाए गए सवाल; कान्फरेन्स, वह युवती, चैमूर-अष्टी के फाँसी पाए हुए युवक ।। उसकी भावी गृहस्थी !

वह चुपचाप सो गया था।

मील का पत्थर

जीवन में कई मंजिलें पार करनी होती हैं। कुछ का ज्ञान मनुष्य को होता है, और कुछ तो अचैतन्य अवस्था में ही गुजर जाती हैं। इन भारी-भारी मंजिलों के बीच कई पगडंडियाँ हैं। कभी तो वे जीवन इतिहास के मटमैले पन्नों पर चमक सी उठती हैं। वैसे हरएक व्यक्ति का जीवन भिन्न-भिन्न सा रहा है। यदि कई मनुष्यों की जीवनचर्या में साधारण समानता आ जाती है, तो एक छोटा या बड़ा वर्ग बन जाता है। प्रत्येक वर्ग आज जाति व्यवस्था की परम्परा से बड़ी दूर पहुँच गया है। वहाँ रूढ़िवादी विचारों का वह पुराना ढाँचा नहीं रह जाता है। परम्परा स्थिर न रह कर गतिशील बनती जाती है। वह विचारों की प्रगति से बल पाती है और आगे नया रूप ले लेती है।

मिस्टर मेहरा क्या केवल एक व्यक्ति मात्र हैं? मिस्टर मेहरा! वह शहर के प्रतिष्ठित होटल के मैनेजर हैं। शहर के नागरिक जीवन से उनका घनिष्ठ सम्बन्ध है। शहर के व्यक्तित्व के भीतर वह सदा गतिशील रहे हैं। वहाँ के उच्च मध्यवर्ग में उनका अच्छा स्थान है। लेकिन वह तो आज होटल से अंतिम विदाई ले रहे हैं। वहाँ वह अपने जीवन के चालीस साल व्यतीत कर चुके हैं। छोटे बाबू से बड़े बाबू के दरजे तक पहुँचने में अठारह वर्ष लगे और फिर मैनेजरी के पाने में बारह और देखते देखते कट गये। फिर उनका अनुशासन वहाँ चालू हुआ। अठारहवें वर्ष अंग्रेजी मिडिल पास करके वहाँ उन्होंने प्रवेश

किया था और आज अठावन वर्ष की अवस्था में एक अनुभवी व्यक्ति बन कर वे वहाँ से बिदा ले रहे हैं। चालीस वर्ष का यह जीवन कई मधुर स्मृतियों, रहस्यमय घटनाओं आदि से परिपूर्ण है। कई का भारी लगाव उनसे रहा है। उनका वह दैनिक जीवन! प्रति दिवस एक सी बातों का दुहराया जाना। मुसाफिरों के समीप पहुँच कर उनकी सुविधा के अनुसार सब प्रबन्ध करवाना। उनका दावा है कि जो मुसाफिर एक बार उनके होटल में टिक जाता है, वह जब कभी उस शहर में आयेगा, उनके होटल को नहीं भूल सकता। वहाँ की दैनिक चर्या··; सुबह उठकर डबल रोटी, मक्खन, अंडे, तरकारी, गोश्त आदि की व्यवस्था देखना; फिर विशेष 'मीनू' बनाकर टाइप करवाना। वैसे साधारण रोज वाली चीजों का सवाल नहीं उठता था। स्थायी मीनू की लाइनें—कोफ्ता, दुप्याजा, कीमा, चिकिनकरी, शामी कबाब, आलू का चाप, मीट चाप, टोस्ट, आमलेट आदि के बाद सोडा, शरबत, लेमनेड आदि की सूची रहती थी। टीनवाले फल, बिस्कुट, जाम, सिगरेट, चाकलेट व कुछ पेटेन्ट-सी आवश्यक दवाइयाँ भी मिल जाती थीं। साथ में जो 'बार' था उसकी व्यवस्था में खास परिवर्तन की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। पेटियाँ सीधी कम्पनियों से आती थीं और आवश्यकतानुसार बोतलें बाहर निकाली जातीं। जब पहले-पहल फ्रिजेडियर आया था, तो वह एक बार उसकी जाँच कर लिया करते थे। लेकिन अब बात पुरानी पड़ गई थी, अतएव उसकी कोई चिन्ता उनको नहीं थी।

होटल का नाम कोई अंग्रेज वसीयत के तौर पर छोड़ गया था। उसकी यादगार में वहाँ एक 'बार' था, जिससे होटल का नाम और सही गुण का परिचय सब को आसानी से मिल जाता था। ह्वाइट हार्स, जानी वाकर, जिन, बियर आदि सब

पेय वहाँ सुलभ थे। मिस्टर मेहरा भले ही हिन्दुस्तानी हों, रहते खासे अंग्रेजी लिबास में थे और अपने ग्राहकों से पहले अंग्रेजी में बातचीत शुरू करके फिर कौमी जबान पर पहुँच जाते थे। ड्रिंक्स के मामले में उनका कथन था कि कभी उन्होंने हिन्दुस्तान की बनी ह्विकी नहीं पी है! यद्यपि कई बार वह इम्पीरियल ह्विस्की और सोलन तथा रोजा रम की बोतलों पर हाथ सफा कर चुके थे। उनका तो यह भी कहना था कि चाहे वे कितनी ही ह्विस्की पीलें, उनको कभी नशा नहीं होगा। धूम्रपान का सवाल तो उनकी तरक्की के साथ हल होता चला गया।

पहले वह नौकरों के साथ बीड़ी पिया करते थे, लेकिन अब विलायती सभ्यता की नकल करते हुए सिगार पिया करते हैं। उनका दावा था कि यदि वह इस गरीब देश में, जिस पर करोड़ों रुपयों का कर्जा है, न पैदा हुए होते और किसी स्वतन्त्र देश में जन्म लिया होता तो न जाने वह क्या करिश्मे दिखला देते। यह बात सच हो या झूठ, इतना तो आसानी से स्वीकार किया जा सकता है कि वे शहर की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक तीनों विचारधाराओं से परिचित थे। सरकारी-गैर सरकारी लोगों से उनका घनिष्ट सम्बन्ध था। कई लोग उनसे सलाह लेने आया करते थे। वह मिलने-जुलने के मामले में पटु, मीठे और सरल थे। अपनी एक गहरी छाप हरएक के मन पर छोड़ दिया करते थे।

आज अब वे उस होटल को छोड़ रहे हैं। नया मैनेजर चार्ज ले चुका था। वह आठ नम्बर वाले कमरे के बाहर खड़े थे। उस कमरे को एक छोटा-सा म्यूजियम मान सकते हैं। वहाँ उन लोगों का सामान अमानत के तौर पर रखा हुआ था, जो होटल का बिल चुकाने में असमर्थ रहे और ईमानदार तथा भले आदमियों की भाँति आश्वासन दे चुके थे कि वह चेक अथवा

नकद रुपया भेजकर अपना सामान छुड़वा लेंगे। लेकिन किसी ने आज तक अपना वादा पूरा नहीं किया। अधिकतर वस्तुएँ उन प्रेमियों के जोड़ों की हैं, जो सामन्तवादी समाज और संयुक्त परिवारों की परम्परा को तोड़ने पर तुल गये थे। उनका 'सात भँवरों' पर विश्वास नहीं रह गया था। समाज की उस थोथी व्यवस्था को तोड़ वे यहाँ आकर बसेरा ले रहे थे। कुछ दिन शिकवा-शिकायतें चलीं, प्रेम के नशे की खुमारी रही और अन्त में आर्थिक बैराग्य ने घेर लिया। उफान ठंडा पड़ गया। युवती फिसलने लगी। युवक घबरा गया। काफी सोच-विचार करने के बाद युवक ने घर लौट चलने की सलाह दी। युवती आश्चर्य चकित-सी असहाय कातर आँखों से उसे देखती देखती रह जाती थी। क्या इसी के लिए वह एक पग आगे बढ़ कर अपना परिवार छोड़ने पर तुली थी ? वह निराश और उदास रहने लगी। असहाय अवस्था में एक दिन वे अपनी कुछ चीजें, वहाँ बन्धक रख, थोड़ा पैसा किराये आदि का पाकर लौट गये थे। उसके बाद के इतिहास की जानकारी किसी को नहीं है। उन जोड़ों के स्मृति चिन्ह सुन्दर कीमती साड़ियों, इयररिंग, अंगूठी, घड़ी आदि के रूप में सुरक्षित हैं और मिस्टर मेहरा सदा गर्व के साथ कहते हैं कि उनके होटल से अधिक ऐसे स्मृति चिन्ह शायद ही किसी और होटल में होंगे। होटल की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए कुछ चीजें सुरक्षित हैं। अन्यथा बहुमूल्य वस्तुएँ तो मिस्टर मेहरा के दोस्तों द्वारा सस्ते दामों पर कभी की उड़ाई जा चुकी हैं। स्वयं मिस्टर मेहरा यदाकदा कुछ सामान इस्तेमाल में ले आते हैं तथा कई चीजें तो व्यक्तिगत सम्पत्ति मान कर भेंट स्वरूप औरों को दे चुके हैं। जब कभी कोई अच्छा जोड़ा होटल में आता है तो मिस्टर मेहरा एक नजर देख कर ही बता सकते हैं कि वे कितने गहरे पानी में

हैं। मिस्टर मेहरा उन जोड़ों की कहानियाँ भी कभी-कभी अपने खास दोस्तों को सुनाया करते हैं। अपनी ओर से किसी प्रकार का रंग दे देना उनकी आदत नहीं है।

मिस्टर मेहरा इन जोड़ों को तीन श्रेणियों में विभाजित करते हैं। पहला शहर के किसी एक मुहल्ले के जोड़े, जो भावुकता के प्रवाह में तेज़ी से बह कर ऐसा करने के लिए उतारू हो जाते हैं और फिर एक सप्ताह, दो सप्ताह बाद लौट जाते हैं। परिवारों की प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए लड़की की चुपचाप शादी करदी जाती है। वह तो माँ, दादी, नानी बनने चली जाती है। वह निकम्मा युवक वैसे का वैसा ही अकर्मण्य-सा रह जाता है। दूसरी श्रेणी विचारों की समानता और स्वतन्त्रता वाले प्रगतिशील जोड़ों की आती है। वे नदी किनारे, दुनिया से दूर रहना चाहते हैं। कालेज का साधारण ज्ञान आर्थिक स्थिति सँभाल लेने में असफल रहता है। आगे छोटी-छोटी बातों को तूल देकर झगड़ा उठता है। विचारशील लड़की का तर्क होता है कि वह धोके में पड़ गयी थी। अन्त में वे एक दूसरे से घृणा करते हुए प्रतिशोध की भावना लेकर लौटते हैं। तीसरा दरजा वेश्याओं का होता है, जो कि अपने जीवन की दूकानदारी से ऊब, किसी लड़के पर प्रभाव डाल कर उसे साथ ले आती हैं। लड़की चतुराई से कुछ दिन संचालन करती है। आर्थिक स्थिति डांवाडोल हो जाने पर वह चतुरता से अपना व्यवसाय आरम्भ कर देती है। धीरे-धीरे उसका मोह हट जाता है। वह अपनी भूल पर पछताती है कि एक गलत व्यक्ति के साथ चली आयी है, जो कि उसकी आर्थिक जिम्मेवारी नहीं ले रहा है। आखिर थक कर वह लौट जाती है। इन सबके अलावा परिवार की नासमझ विधवाएँ भी आती हैं, किन्तु उनमें अपना कोई जोश नहीं होता है। वे भावना प्रधान कोमल

युक्तियाँ सफलता से बटोर कर लाती हैं, जो समय के साथ साथ काँच की तरह आसानी से चकनाचूर हो जाती हैं। उस सनातन बन्धन को तोड़ने का यह असफल प्रयास लगता है! वे यहाँ परिवार नहीं बना पाती हैं। उनकी माला बनने की चाह और गृहस्थी में रहने की आकांक्षा मिट जाती है। होटल का जीवन उनको सन्तोष नहीं देता है। वह बाल-मुकुन्द की पूजा, वह तीर्थ-व्रत, वह विधवा का आचार…! वह सब भूल जाती है और परिस्थितियों के अनुसार नये समाज के भीतर कहीं चुपचाप खो जाती हैं। यह सारा खेल वहां के सब लोग देखते हैं। होटल के उस बड़े व्यक्तित्व के कारण अधिक महत्व इन सबको कोई नहीं देता है।

चौदह नम्बरवाला कमरा…। वहाँ तीन युवक एक सप्ताह के लिए कहीं से आकर टिके थे। वे दिन भर अपने कमरे से बाहर नहीं निकलते थे। हर वक्त उनकी चाय की माँग रहती थी। उनका स्वभाव बहुत रूखा था। वे नौकर के हाथ रुपया भेजकर प्रति दिन बिल चुका दिया करते थे। मिस्टर मेहरा से उनका कोई सम्बन्ध नहीं रहा। वे सन्ध्या की गाड़ी से आये थे। अपनी आदत के अनुसार सबेरे मिस्टर मेहरा सब कमरों का चक्कर काट कर, जब उस कमरे के बाहर खड़े होकर उनसे पूछना ही चाहते थे कि कोई तकलीफ तो नहीं है कि एकाएक छरहरे बदन के युवक ने कहा था—थैंक्स! सब ठीक है। एक ट्रे चाय तुरन्त भिजवा दीजियेगा।

मिस्टर मेहरा इस व्यवहार से अप्रतिभ हो गये। उस लड़के का चेहरा पढ़ लेने की चेष्टा करने में असफल रहे। अधिक बातचीत न करके वे चुपचाप आगे बढ़ गये। छठा रोज चल रहा था कि आधी रात को पुलिस ने उनको जगाया तो पता चला कि उनके होटल में तीन क्रान्तिकारी ठहरे हुए हैं। सारा

होटल घेर लिया गया। जब वह कमरा खोला गया तो ज्ञात हुआ कि साधारण सामान के अतिरिक्त कोई महत्वपूर्ण वस्तु वहाँ नहीं थी। तीनों में से एक को भी न पाकर अधिकारी मिस्टर मेहरा पर बहुत नाखुश हुए कि उनका होटल षड्यन्त्र-कारियों का अड्डा बनता जा रहा है और उनके द्वारा पुलिस को कोई सूचना नहीं दी गयी। लेकिन वह उस स्थिति को ठीक न समझ सके। सारे होटल की छानबीन के बाद पुलिस उनका बयान लेकर चली गई थी। आज तक होटल की भीतरी बातों का ज्ञान किसी को न था। उस दिन कुछ खुल गई थीं। पुलिस के अफसर उस आधी रात को 'बार' में डट गये थे! मिस्टर मेहरा लाचार थे। पुलिस के चले जाने पर उन्होंने हरएक कमरे में जाकर वहाँ टिके हुए मुसाफिरों से माफी मांग ली। बड़ी रात तक वहाँ के वातावरण में एक नवीन कुतूहल फैला रहा। सब लोग एक एक करके सो गये। मिस्टर मेहरा को नींद नहीं आयी। बड़ी रात तक उस कमरे में बैठे रहे। वह स्वयं नहीं समझ सके थे कि आखिर वे लड़के कहाँ चले गये? किसी ने उनको फाटक से बाहर जाते हुए नहीं देखा था। आठ बजे रात को उनके खाने का 'वाउचर' उनके द्वारा काटा गया था। एक टिन सिगरेट और दियासलाई नौ बजे गई थी। उस रात को वह सावधानी से उस कमरे की जाँच करते रहे। पुलिस सब सामान ले गई थी। एक बड़ा अखबार उनको वहाँ पड़ा मिला जो कि छलनी सा बना हुआ था। मिस्टर मेहरा ने अनुमान किया कि वे 'एयरगन' द्वारा चलायें गये छर्रों के सूराख थे। उस दिन सुबह वाले युवक की कही हुई बात याद आयी, 'थैंक्स, सब ठीक है'...।' मिस्टर मेहरा भले ही साहबी लिबास में रहते हों, भारत की आजादी चाहनेवाले उन युवकों के लिए उनके हृदय में स्थान बन चुका था। एक दिन उन युवकों के

पकड़े जाने का समाचार उन्होंने पढ़ा। यह दूसरा षड़यन्त्र था जबकि पहले षड़यन्त्र का समाचार इस प्रकार पत्रों में छपा था—मार्च २३, १६३१, टेलिफोन द्वारा लाहौर से समाचार मिला है कि सरदार भगतसिंह, श्रीयुत राजगुरु और श्रीयुत सुखदेव को सोमवार की सन्ध्या को ७-३३ बजे लाहौर सेन्ट्रल जेल में फाँसी देदी गई है। फाँसी होने के पन्द्रह मिनट पहले से ही जेल के भीतर से बन्देमातरम् की ध्वनि आती रही।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू का वक्तव्य था कि सारा देश हमारी इस असमर्थता पर शोकाकुल है। किन्तु जो आज नहीं रहे, उनके लिए हमारे हृदयों में सम्मान है और जब इङ्गलैंड हमसे समझौते की बातचीत करेगा, तो हमारे और उनके बीच सरदार भगतसिंह की लाश होगी। हम नहीं भूल सकते—हम कदापि नहीं भूल सकते!

इस समाचार को पढ़ कर मिस्टर मेहरा उद्विग्न हो उठे थे। उन दिनों उन तीनों युवकों पर भी स्पेशल ट्रिब्यूनल में मुकद्दमा चल रहा था। वह दिलचस्पी से सारी बातें पढ़ा करते थे। वह सरकारी गवाह बनकर अदालत में पहुँचे थे। उन जीवन-मुक्त युवकों को देखकर उनका माथा श्रद्धा से झुक गया था। कभी-कभी वह उनके भविष्य पर सोचते...। लेकिन होटल का अपना वातावरण था। उसीमें फिर वह खो जाते थे। सुबह डाक गाड़ी से कितने मुसाफिर आये हैं। कलकत्ते की एक फर्म का तार आया है कि उसका मैनेजर वहाँ दो सप्ताह ठहरेगा। एक कमरा रिजर्व रखा जाय। सत्रह नम्बर वाले कमरे के दीवान साहब का कहना है कि अब यह होटल केवल नफा चाहता है। उसे अपने मुसाफिरों के आराम की कोई चिन्ता नहीं है। कारण यह था कि कल रात को तीन बजे नौकर उनको 'जानहेग' की बोतल नहीं दे सका था और जो एंग्लो इण्डियन

लड़की आयी थी, वह उनसे बिना पूछे ही बारह बजे खिसक गई थी। वह कुछ कहना चाहते थे कि उसने तुनक कर जवाब दिया था कि सौ रुपये पाकर वह उनकी लौंडी या बांदी नहीं हो गई है। यदि वह रात भर रखना चाहें तो सौ रुपया और देना पड़ेगा। वह ऐसे दीवानों की परवा नहीं करती है। दीवान साहब का क्रोध अपने स्वभाव के अनुकूल था। वह मिस्टर मेहरा को सुनाते रहे कि न हुई उनकी स्टेट...। मिस्टर मेहरा तो ऐसी बातें सुनने के आदी ही थे। वह समझते थे कि यह रोज़गार ही ऐसा है। जब दीवान साहब खरी खोटी सुना कर थक गये तो उन्होंने पूछा—आज आपने रेस में जाने के लिये क्या तय किया है।

'ओ! मैं तो भूल ही गया था।' कह कर दीवान साहब उठे और उस सीजन की रेस की किताब देते हुए बोले—आपने कहा था कि आपकी सब जाकियों से जानपहचान है।

दीवान साहब फिर अपनी 'रेस' की धुन में एंग्लो इंडियन लड़की को भूल गये थे। दिन में उन्होंने मिस्टर मेहरा को बुलवाया और साथ में 'शैम्पियन' पीने के लिए अनुरोध किया था। दीवान साहब काफी नशे में थे। आखिर वे बेतक्लुफी से बोले—दोस्त मेहरा, आज किसी तरह उस छोकरी को फिर बुलवा दो। ससुरी प्यास लगा कर भाग गई है। रुपया जो लगेगा मैं दूँगा।

मेहरा चुपचाप घूँट-घूँट करके पी रहे थे। दीवान साहब की ओर देखा और चुप रहे। दीवान साहब फिर बोले—यहाँ हर-एक दोस्त का तकाजा रहता है कि उनके साथ ठहरूँ। लेकिन यार यहाँ तो मजे उड़ाने के लिए आते हैं। उस पंजाबिन का क्या हुआ? सुना किसी मनचले के साथ बम्बई भाग गयी है। माल बुरा नहीं था।

लेकिन शहर में एक बड़ा जलूस निकला था। वे नारे अब तक कानों में गूँज रहे थे। भगतसिंह—जिन्दाबाद ! भारतमाता की जय !! बन्देमातरम् !!! सब मानो कि कल की सी बातें हों। मिस्टर मेहरा के मन पर वे भारतमाता के लाड़ले एक गहरी चोट तो एक बार लगा चुके थे, जिसे वे आसानी से नहीं भूल सकते हैं। वह एक विपत्ति का पहाड़ था। उनके होटल पर महीनों तक कांग्रेस के वालिंटियरों का पिकेटिंग रहा था। उनको उन लड़कों पर तरस आता था और उनके नेताओं पर क्रोध। और वे धानी साड़ियों वाली लड़कियाँ तो घर-गृहस्थी की बेड़ियाँ तोड़ कर बाहर निकल आयी थीं। गांधीजी का वह अस्त्र उन पर इसीलिए लागू हुआ था कि वह विदेशी शराब अपने होटल में बेचते थे, गांधी ब्रैण्ड देशी नहीं। भट्टी से स्वदेशी लाते तो सम्भवतः बरी हो जाते। बात तूल पकड़ती चली गई। कोई समझौता नहीं हुआ। मिस्टर मेहरा गुस्से में बोले थे कि गांधी टोपी वाले कई नेता—वे गांधी बाबा के स्थानीय अवतार, उनकी 'बार' के ग्राहक हैं। अब तनातनी बढ़ गई। अहिंसा का सत्याग्रह अपनी सीमा तोड़ बैठा। तू-तू, मैं-मैं और गाली-गलोज के बाद, बाकायदा गृह-युद्ध आरम्भ हो गया। होटल के दरवाजे टूट गये। कंकड़ों का नम्बर आया। पुलिस ने आकर लाठी काण्ड कर डाला। जोश तेज हुआ और पुलिस को गोलियों का आश्रय लेना पड़ा। पन्द्रह स्वयंसेवक बुरी तरह घायल हुए थे। साधारण चोटें तो कई के लगी थीं। अब तक मिस्टर मेहरा ने गांधीजी की एक बहुत बड़ी तसवीर 'कामनरूम' में टाँग रखी थी। उस दिन वह उतरवा ली गई और आज तक वह कूड़े-करकट भरे कमरे में पड़ी है। अब तक उसके काँच और फ्रेम पर कई मकड़ियाँ जाला बुनकर हजारों बच्चों को जन्म दे चुकी हैं। वह इस घटना को आसानी से नहीं

भूलते थे। लेकिन आज उसे वहीं चुपचाप दफना देना पड़ रहा था।

तेजी के साथ मिस्टर मेहरा तीन नम्बर वाले कमरे की ओर बढ़ गये। उनको लगा कि वे बहुत थक गये हैं। कमरा खाली था और बाहर से बन्द। उन्होंने नौकर को बुला कर उसे खुलवाया और भीतर आराम कुर्सी पर धम से बैठ गये। फिर नौकर से 'जानहेग' का पेग, बरफ़ तथा सोड़ा मँगवा लिया। वह चुपचाप पीने लगे। उनको ऐसा लग रहा था कि वह बहुत बूढ़े हो गये हैं। सब कुछ बहुत ही पीछे छूट गया है। जीवन कितनी तेजी से आगे बढ़ जाता है, आज पहले-पहल उनको अनुभव हुआ था। शायद उस कमरे में वह अन्तिम बार पी रहे थे! कल से यहाँ उनका आदेश नहीं चलेगा। सब नौकर आज सुबह से ही नये मैनेजर की आवभगत में लगे हुए थे। जिस स्वार्थ की बात वह अब तक नहीं सोच पाते थे, उसका यह पहला सबक था। उसका वह यथार्थ रूप असह्य था! कल से तो शहर के जीवन में उनकी कोई खास जगह नहीं रह जायेगी। उनके पद का व्यक्तित्व था, न कि उनके हाड़-माँस के शरीर का। पद के साथ उससे लगा व्यक्तित्व नष्ट हो जाया करता है। अब वह साधारण व्यक्तियों की श्रेणी में आ गये थे। नया मैनेजर एम० ए०, एल०-एल० बी० पास था। उसने आते ही अपने मन माफिक सुधार आरम्भ कर दिए थे। वह इसाई था और जितना ही उसका रंग काला था वह उतना ही अपने को पक्का युरोपियन समझता था। सुबह उसने सब नौकरों को एक कतार में खड़ा करके समझाया था कि वह अनुशासन के मामले में जरा सी ढील बरदाश्त नहीं कर सकता है। जब कि मिस्टर मेहरा सबको एक संयुक्त परिवार का प्राणी समझते थे। नये मैनेजर का रुख वह नहीं था। उसने सुबह लेजर में आमदनी देख कर

आश्चर्य प्रकट किया था और मिस्टर मेहरा से कहा था कि जरा और कोशिश करने पर आमदनी दुगनी हो सकती है। उसने बार के बैरों को समझाया था कि हर एक ह्विस्की या जिन आदि की जो बोतल खोल कर बेची जाय, उसमें कम से कम चार पेग बढ़ने चाहिएं। इसी भाँति उसने खानसामा को समझाया था कि एक सेर कीमा, कोफ्ता आदि में पूरी चौदह प्लेटें निकलनी चाहिएं। एक सेर चीनी में आसानी से अस्सी प्याले चाय बन सकती है। मिस्टर मेहरा कभी हिसाब में इतने भीतर नहीं पैठते थे कि एक डबल रोटी में कितने टुकड़े निकलने चाहिएं। वह कभी अपने नौकरों पर इस भाँति कोई बात लागू नहीं किया करते थे। अपने व्यवहार में वह हरएक व्यक्ति को उसकी जिम्मेवारी वाला काम सौंप कर निश्चिन्त रह जाते थे। नये मैनेजर ने आते ही संचालन का पूरा सूत्र अपने हाथ में ले लिया था। वह सारी पुरानी व्यवस्था को बदल देने की सोच रहा था। उसका कहना था कि आज होटल पुराने तरीके से नहीं चलाये जा सकते। नये जमाने के अनुकूल सारी बातें होनी चाहिएं। उसने अब तक कई सुझाव उनके सामने रखे थे। वह उसकी अनुभव हीनता पर चुप रह गये थे।

यह चौथा पेग था। मिस्टर मेहरा के हृदय में कई भावुक स्मृतियाँ फूट कर बाहर निकलना चाहती थीं। वह अकेले चुपचाप वहाँ बैठे हुए थे। नौकर चला गया था। एकाएक उनका हृदय भर आया और आँखों की पलकें भींज कर बरसने लगीं। वह स्वयं नहीं जान सके कि बात क्या थी। बड़ी देर तक अनजाने ही आँसू बरसते रहे। अब हृदय भर आया। उन्होंने उलझन में एक 'नीट' पेग ढाल कर चढ़ा लिया और चुपचाप पी गये। फिर सँभल कर 'पाइप' निकला और उस पर तम्बाखू भर कर सुलगाया। अब वह चुपचाप धुआँ उगल रहे थे। वह

आज तक सदा अपने आशावाद की व्याख्या किया करते थे। लेकिन इस समय उनको चारों ओर से निराशा की कोमल डोरियाँ बाँध रही थीं। क्या यह उनके जीवन की एक बड़ी हार नहीं थी। वह पाँच लड़के और लड़कियों के पिता हैं। बड़ा लड़का 'नेवी' में है, दूसरा कोपरेटिव सोसाइटी में क्लार्क है और तीसरा लड़का अबके एम० एस-सी० की परीक्षा देगा। बड़ी लड़की की शादी हो चुकी है और दूसरी मैट्रिक में है। परिवार के भीतर असन्तोष की कोई गुंजायश नहीं है। जिस फूहड़ लड़की से पिता एक दिन शादी करा गये थे, उसमें आज तक कोई बौद्धिक परिवर्तन नहीं हुआ। वह पुराने विचारों की थी और तैंतीस करोड़ देवताओं पर उसकी भारी श्रद्धा थी। इतने वर्ष उसके साथ व्यतीत करके भी वह न समझ पाये कि आखिर दोनों में कैसे निभ गयी। वह उनके अनुकूल नहीं थी। आरम्भ में वह अपनी रुचि के साथ पत्नी को समझ तक न पाये थे कि पत्नी ने चुपके एक दिन थिरकती हुई खुशी में सुना दिया कि वह माँ बननेवाली है। फिर वे मातृत्व का दरजा पाने वाली उस युवती को सावधानी से भांपते रहे। आगे वह वृत्त एक, दो, तीन, चार, इसी भाँति फलता-फूलता गया। पत्नी को सही-सही पहचान लेने का अवसर ही नहीं मिला। वह घर-गृहस्थी और अपने बच्चों की दुनिया में इस तरह फँसी रहती थी कि अपने किसी लुभाव से उनको मोह लेने की ओर कभी सचेष्ट नहीं हुई। यह अपेक्षित उपेक्षा पाकर वह चुप रह जाया करते थे। स्वयं उन्होंने नया जीवन उसे सौंपने की कोई उत्सुकता नहीं दिखलायी। यह मानो कि कोई सम्भव बात हो। आज पत्नी सैंतालिस पार कर चुकी है। वह यदा-कदा उनकी ओर इस कुतूहल से देखती है, मानो वह सत्रह-अठारह साल की अबोध बालिका हो, जिसका पतिगृह में अभी-अभी पदार्पण

हुआ है। वह तो कई मूक प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए उत्सुक-सी रहती थी।

पाइप बुझ गया था। मिस्टर मेहरा ने एक बार कमरे के चारों ओर देखा। सामने एक बड़ा 'लैंण्ड स्केप' पेंटिंग था। पहाड़ियों से घिरी हुई झील, ऊपर उड़ती हुई चिड़ियाएँ···; दूर-सा एक घना जंगल···। पहले उस चित्र की ओर कभी उनकी दृष्टि नहीं गयी थी। लेकिन आज तो मन उन चिड़ियों की भाँति उड़ रहा था, मानो वह नीले आकाश को भेद कर कहीं दूर चला जाना चाहता हो। वह बिना पंख का उड़ता हुआ मन···! एकाएक धुंधली सन्ध्या का प्रकाश कमरे के भीतर फैल गया। किसी कोने से चूड़ियों की खन-खनाहट सुनाई पड़ी, फिर वही पहचानी हुई हँसी···खिल-खिल-खिल... हँसना···। वह बच्चों की सी सरल हँसी···। उस हँसी की प्रतिध्वनि एक बार कमरे के चारों कोनों से गूंज उठी। वह चैतन्य हुआ। 'पाइप' बुझा हुआ था, फिर उसे सुलगा लिया। उसका धुँआ गोल-गोल भँवरें उड़ाता हुआ उड़ गया। अब मेहरा ने एक पेग निकाला, गिलास में सोड़ा उँडेला और चुपचाप घूंट-घूंट करके पीने लग गया। वह हँसी फिर कानों के परदों पर टकराने लगी। सच वह तो मन्दाकिनी की हँसी थी। मन्दाकिनी···!

मन्दाकिनी एक वेश्या थी। वह उस होटल में खास-खास ग्राहकों के पास आया करती थी। वह उसे सावधानी से भांप कर पहचान लेना चाहते थे कि वह किस धातु की बनी हुई है। कई बार मन्दाकिनी से दो-चार बातें हुईं। मन्दाकिनी को पुरुष से कोई डर नहीं लगता था। न वह उनसे भयभीत ही हुआ करती थी। मन्दाकिनी उनकी बातों का उत्तर अपनी सुलझी भाषा में दिया करती और उनकी चुटकियों को सावधानी से काट देती

थी। एक दिन वह बहुत समीप आ लगी, उसका आकर्षण देख कर वह दंग रह गये। कितनी लुभावनी, कितना मादक, कितना जीवन···! वह उसे ऐसा ताकते रह गये मानो वह एक सुन्दर तसवीर हो। उन्होंने उसे सावधानी से छुआ मानो कि वह कोई खिलोना हो और उनको भय था कि चटक कर टूट न जाय। वह हँसी थी···! मेहरा अचरज में पड़ गये थे। पत्नी···चार बच्चे···! पत्नी के शरीर में पहले जो तेज महक थी, आज वह उतनी तेज न थी। लेकिन इस लड़की में एक मादकता थी। वह उलझ रहे थे कि मन्दाकिनी हँस कर बोली थी—मैं एक चरित्रहीन लड़की हूँ, मिस्टर मेहरा। अपना रूप और शरीर बेचती हूँ। आपको आश्चर्य क्यों हो रहा है ?

यह एक तीखा, पर सच्चा व्यंग था। वह उसकी इस सरलता पर मुग्ध हो गये। इसी कमरे में बैठ कर उन दोनों ने कई सुनहरी रातें व्यतीत की थीं। वह प्रति रात उसे बुलाते थे और सुबह उठ कर पाते कि वह उसे पूर्ण नही पा सके हैं। एक नवीन तृष्णा बढ़ती जाती थी और वह अपने को समझा नहीं पाते थे। वह अज्ञेय भूख कभी पहले नहीं उठी थी। एक नया ज्ञान मानो अब आ रहा था। मन्दाकिनी प्रति दिन जीवन उड़ेलती जाती। वह फिर भी अपने को अस्वस्थ पाते रहे। वह लड़की चतुरता से अपनी दूकानदारी की रंगीन कहानियाँ सुनाया करती थी। उनको वह सब सुन लेने में थकान नहीं लगती थी। एक गम्भीरता तब उसके चेहरे पर आ जाती। वह एक दिन बोली—एक खूनी के साथ मैंने आठ घंटे काटे हैं।

'खूनी ?'—मिस्टर मेहरा अवाक हो बोले।

'क्यों, इसमें नयी बात क्या है ? भला मुझे क्या मालूम था कि वह खून करके आया है। वह तो प्रति दिन आने वाले

ग्राहकों की भाँति आया था। रात भर मेरे पास रहा। उसमें पहले-पहल मैंने मनुष्यत्व पाई। उसने मुझसे अनुरोध नहीं किया कि मैं पीने में उसका साथ दूँ। यह नहीं दिखलाया कि रात भर के लिए उसे मेरी बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी है। वह कहता था कि पीना उसकी आदत बन गयी है। बार-बार माफी माँगता था कि वह पी रहा है। वह मेरे साथ ऐसा व्यवहार बरत रहा था कि मानों मैं छोटी सी बच्ची हूँ और वह मुझे फुसला सकता है। उसने मेरी साड़ी, ब्लाउज आदि छू कर देखे। फिर टकटकी लगा कर बड़ी देर तक मुझे निहारता रहा! उसने औरों की तरह वादा नहीं किया कि वह जल्दी लौट कर फिर मेरे यहाँ कोई उपहार लेकर आयेगा। उसने प्यार और मोह की सीमा के सही आश्वासन देकर कि भविष्य में वह मुझे अपने घर में डाल लेगा, धोखा नहीं देना चाहा; कि उसका यहाँ अधिक दिनों तक रहना हित-कर नहीं है और आखिर बुढ़ापा कहीं काटना होगा। उसने तो गहरी साँस लेकर कहा था कि यह एक अवसर था कि हम मिल गये। आज रात भर का हमारा साथ है। कल सुबह हमारा सम्बन्ध टूट जायेगा। वह केवल पुरुष वाली आवश्यकता के कारण ही वहाँ आया है। वह बहुत ईमानदार पुरुष था। यदि सम्भव होता तो ऐसे व्यक्ति के बच्चे की माँ बन कर मैं सुख से जीवन व्यतीत कर सकती थी। पीछे ज्ञात हुआ कि वह तीन खून करके उस रात मेरे यहाँ आया था।'

मेहरा चुपचाप सारी बातें सुनते रहे थे। वह मातृत्व की इच्छा! तब वे चार बच्चों के पिता थे। हर स्त्री की तथा पुरुष की माता-पिता बनने वाली इच्छा की जानकारी उनको अनायास हो गई। वह उस मन्दाकिनी को कभी समूची नहीं पा सके थे। उनकी तृष्णा पूरी नहीं हुई। एक जागीरदार का बेटा मन्दाकिनी

को अपनी तीन पुश्तों की वसीयत एक घृणित रोग सौंप गया था। उपचार के बाद भी रोग भला नहीं हुआ। मन्दाकिनी पीली पड़ती चली गई और एक दिन डाक्टरों ने कहा कि अब क्षय रोग हो गया है। वह उनके जीवन की सबसे दुःखद घटना थी। मन्दाकिनी किसी सेनिटोरियम में चली गई थी। कभी-कभी उसकी चिट्ठी आ जाती थी। उनको उस रात भर नींद नहीं आती थी। लगता था कि उनकी पत्नी जो पास पड़ी है, बहुत कुरूप हो गयी है। कुल की बेल को फल देने के अतिरिक्त उससे कोई स्नेह उन्होंने कब पाया था! अब उस शरीर में मधु की सी महक नहीं थी। पुरानी बातों की याद अखरती थी। मन्दाकिनी ने तो उनके हृदय में कई रंगीन बातें भरदी थीं। वे बीज से उग कर अंकुर बनी थीं कि मन्दाकिनी चली गई। वह स्नेह का बीज पौधा नहीं बन सका था। यदि वह मन्दाकिनी को एक बच्चा पिण्डदान दे सकते तो वह लड़की अपना जीवन सँभाल लेती। यह नहीं हो सका था। किसी आकस्मिक घटना से वे मिले और अलग हो गये थे। अब उनके बीच समय की दीवाल खड़ी थी। वह मन्दाकिनी अपनी स्नेहभरी कई यादगारें मन पर अंकित कर गयी थी। अतएव दूर चली जाने पर भी कभी-कभी बहुत समीप लगती थी। वह उनको अपना एक सुन्दर 'बस्ट' जाने वाले दिन दे गई थी। वह उस 'बस्ट' में बहुत खिली और लुभावनी लगती थी, लेकिन पूरा जीवन कहाँ उनको मिला था। कुछ अधूरा-सा लगता था, जिसके लिए कि मन में सदा एक पीड़ा होती रही। और एक दिन वह रोशनी चुपचाप बुझ गई। खबर मिली थी कि मन्दाकिनी मर गई है। मौत के भेद पर कोई कुछ नहीं सोच सका हैं! उसके बाद की बातों पर व्यर्थ विचार न कर जो कुछ स्मृतियाँ वह छोड़ गई थी, वे उनके प्रेम को सदा सजग किये रही हैं।

मिस्टर मेहरा हड़बड़ी में उठ बैठे। जल्दी-जल्दी कमरे से बाहर निकले। सन्ध्या धुँधली सी हो आई थी। बारह नम्बर वाले कमरे से एक गुजराती परिवार बाहर जा रहा था। सन्ध्या को तो सब पशु-पक्षी अपने बसेरों पर लौट आते हैं। पर बुद्धिवादी मनुष्य ने प्रकृति पर थोड़ी विजय पाली है। होटल के बाहर टैक्सियों के भोंपू बज रहे थे। नया मैनेजर आगन्तुकों से घुलमिल कर बातें कर रहा था। एकतीस नम्बर वाले कमरे के भीतर माँ अपने बच्चे को गोदी में लिए हुए टहल रही थी। सैंतीस नम्बर वाले सिनेमा जाने की तैयारी में थे। बीस नम्बर वाला परिवार अभी-अभी बाजार से खरीददारी करके लौट रहा था। चौबीसवें कमरे में रहने वाला मद्रासी एकाउन्टटेन्ट पिछले महीने तबादले पर इस शहर में आया है। वह अपने आफिस की फाइलों को सँभाल रहा था। यह होटल दिन भर निर्जीव सा थका-माँदा खड़ा हुआ था, वहाँ अब जीवन तेजी से बहने लग गया। तीस नम्बर...। उस कमरे में दस साल पहले एक पारसी टिका था। रात को उसने आत्महत्या करली थी। उसके पास कई कीमती जवाहरात मिले थे। उसने क्यों यह किया है, यह भेद आज तक किसी को मालूम नहीं हो पाया। सात वर्ष तक उस कमरे में कोई नहीं टिका। नौकरों का कथन था कि वह भूत बन कर वहाँ रहता है। वह आत्महत्या एक विचित्र घटना थी। सुबह नौकर चाय लेकर गया तो दरवाजा भीतर से बन्द मिला। खाने के वक्त भी वही हाल रहा। सन्ध्या को मैनेजर ने दरवाजा तोड़वाया था, तो पाया कि वह मर गया है। पुलिस और सिविल सर्जन आये थे। उस मृत्यु का कारण आज तक एक रहस्य है।

अब वह आगे बढ़ कर चुपचाप ऊपर जीने में चढ़ गये। छत पर पहुँच कर चारों ओर नजर डाली। कहीं कोई परिवर्तन

नहीं मिला। सब कुछ पहले जैसा ही था। दूर-दूर मिलों की चिमनियाँ धुआँ उगल रही थीं। मन्दिर, चर्च और मसजिदें जैसे कि आकाश को छूकर भगवान, ईसामसीह और खुदा की साची दे रहे थे, कि यह सब कुछ एक धोखेवाला व्यापार है। वे असमर्थ हैं। उस फैली हुई छत पर फूलों के गमले सजे हुए थे। सब गन्धहीन बिलायती फूल थे। अब उन्होंने काली डोरी से बँधी हुई 'वेस्ट एण्ड' की 'क्वीन एनी' घड़ी जेब से निकाली। साढे छः बज गये थे। उनको इस पुराने फैशनवाली घड़ी पर बहुत मोह था। वह कहा करते थे कि घड़ी गहना-सा हाथ पर बांधना शोभनीय नहीं है। वक्त तो सच्चा साथी है। घड़ी वास्कट की जेब पर रखदी गई। कुछ देर तक वह शून्य से नीले आकाश की ओर देखते रह गये। वहाँ कबूतर उड़ रहे थे। कहीं कहीं पतंगों के आखिरी पेंच पड़े हुए थे। एक कटी पतंग उड़ कर उस छत पर गिर पड़ी। मिस्टर मेहरा उसे पकड़ने के लिए दौड़े, मानो वह उन लड़कों के गिरोह के सरदार हों, जो पतंग लूटने आया है। वह सावधानी से अपनी हथेली पर तागा लपेटने लगे। उस पतंग और तागे को लूट लेने की उनको बड़ी खुशी थी। आसपास की छतों पर खड़े हुए लड़के उनकी ओर ईर्षा से देख रहे थे। वह इस पर और फूले। एक बार उन्होंने सावधानी से पतङ्ग देखी। एक जगह वह थोड़ी फट गई थी। सोचा कि गोंद से वहाँ जोड़ना होगा। मंजा कच्चा पड़ गया था। मसाला तैयार किये विना काम नहीं चलेगा। वह इस तरह सारी बातें सोच रहे थे, मानो पक्के पतङ्गबाज हों।

अब रात हो चली थी। वह नीचे उतरे। होटल का नौकर आकर बोला—साहब आपको याद कर रहे हैं।

साहब यानी नया मैनेजर! लगा कि उनके चेहरे पर मानो

किसी ने तेज तमाचा मारा हो। अपनी हार स्वीकार करके नीचे उतरे। वहाँ कुछ जरूरी कागजों पर हस्ताक्षर करके चार्ज दिया। मैनेजर अपने काम में फिर व्यस्त हो गया था।

वह उसे ताक रहे थे। वह तो उनके पास आकर बोला, "आप 'प्लाजा' सेकिंड शो में चलेंगे ?"

प्लाजा ! वे चुप रहे। तो कहा उसने, "अभी-अभी मैनेजर ने फोन पर पूछा था। फिल्म बहुत अच्छा है और यह आखिरी शो है।"

प्लाजा के मैनेजर से मिस्टर मेहरा की गहरी दोस्ती है। वह सदा वहाँ फिल्म देखने जाया करते थे। आज उनका मन उमड़ आया। सँभल कर सावधानी से बोले, "मैं न जा सकूँगा।"

मैनेजर ने उनकी ओर देखा और पास खड़े नौकर से फोन करने को कह कर, स्वयं 'बार' में घुस गया। मिस्टर मेहरा इस उपेक्षा पर स्तब्ध रह गये। लगा कि रात हो गयी है। अब उनको घर जाना है। इस होटल से भविष्य में अब उनका कोई जीवित सम्बन्ध नहीं था। वह चुपचाप गेट से बाहर निकले। कोई नौकर उनको बाहर पहुँचाने नहीं आया। सब अपने काम में फँसे हुए थे। बाहर एक कार खड़ी हुई थी। टैक्सियों पर उनकी निगाह पड़ी। बहुत बड़ी कतार खड़ी थी। वे चुपचाप आगे बढ़ गये। वह उसी भाँति चले जा रहे थे कि किसी ने पुकारा, "हुजूर !"

वह उलझन में खड़े हुए। रहमत तांगेवाला था। वह बोल बैठा, "सुना, सरकार ने होटल छोड़ दिया है। सारी उम्र नौकरी करने के लिए थोड़े ही है ! खुदा ने आपको लायक बच्चे दिये हैं। अब आराम करने की उम्र है।"

वह बूढ़े रहमत के तांगे पर बैठ गये। तांगा तेजी से उनके घर की ओर जा रहा था।

नाग-फाँस

रीता कभी खिलखिला कर नहीं हँसती है। गोपी है कि उसकी दाँतों की सुफेद पंक्तियाँ सदा चमकती रहती हैं। कभी भूले से रीता की मुसकान उसके सांवले चेहरे पर उभर आती है। उस सांवले रङ्ग के विपरीत है गोपी का चिट्टा गोरा रङ्ग! वे दोनों सहेलियाँ दिन भर मस्ती से पहाड़ों पर घूमा करती हैं। कभी बाजार में किसी दूकान पर खड़ी, खरीददारी करती हुई दीख पड़ेंगी। इस युद्धकाल में भी वहाँ पुरानी चीजें महँगे मूल्य पर मिल जाती हैं। वे दिन में 'स्केटिंग' के लिए जाती हैं। सिनेमा देखकर वहाँ के कृतिम वातावरण में अपनी क्षणिक तृष्णा का पान करती हैं! आधी रात को जब वे सिनेमा से लौटती हैं, तो लगता है कि बहुत थक गई हैं। मन फिर भी अधूरा रह जाता है, मानो कि वे अभी तक उस हिल स्टेशन का केवल एक कोना भर छू पाये हैं और अभी वहाँ समेटने को बहुत कुछ बिखरा हुआ पड़ा है। उस सबको पा लेना आसान सा काम नहीं है। उनको वहाँ की बाहरी थोथी तहों का आकर्षण मोह लेता है। दोनों उसे पूर्णतया अपना लेना चाहती हैं। सफल नहीं हो पातीं। जीवन में कहीं कुछ कमी लगती है। अब रिक्शा बाजार से हट कर खुली चाँदनी में चलता है। ऊँचे-ऊँचे देवदारु के पेड़ चुपचाप निर्जीव खड़े मिलते हैं। एक बारगी ठंडी हवा का भारी झोंका उनको छू लेता है। वे सिहर उठती हैं। पहाड़ की ऊँचाई पर दूर सा जो घंटाघर है, वह बारह बजा कर बताता है कि अब आधी रात बीत चुकी है। मध्य रात्रि को घंटों की प्रतिध्वनि से दोनों चौंक उठती हैं; एक दूसरी

की ओर देख कर कुछ मूक प्रश्न पूछती लगती है। कोई कुछ नहीं बोलती। दोनों चुप रहती हैं।

अब होटल की ऊँची इमारत पर दृष्टि पड़ती है। रिक्शा चढ़ाई पर बढ़ता है। कुली हाँफने लगते हैं। इतनी रात बीत जाने पर भी लोग अभी सोए नहीं हैं। कहीं किसी कमरे से तीखा ग्रामोफोन का रिकार्ड बज रहा है। होटल के अधिकतर कमरे रोशनी से जगमगा रहे हैं। अभी तक सड़कों पर भीड़ और हल्ला है। रीता होटल की ओर देखती है। वहाँ का वातावरण अनायास फीका सा लगता है। वह आमन्त्रण सुखकर नहीं है। उसकी फैली हुई काली छाया, सुफेद धुली हुई चाँदनी में अनायास ही भय का संचार हृदय में करती है। होटल के पास पहुँच कर, वह जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ चढ़ अपने कमरे की ओर बढ़ जाती है। गोपी रिक्शे वालों को पैसा चुकाती है। रीता के भाग जाने पर उसे हँसी आती है। रिक्शे वाले कोई गीत गाते हुए चुपचाप नीचे ढाल की ओर बढ़ जाते हैं। वह कुछ देर तक उनको जाती हुई देखती रहती है, फिर पहाड़ की चोटी पर उसकी दृष्टि पड़ती है। और अन्त में वह नीचे फैली हुई घाटी पर छाई सुहावनी चाँदनी को निहारती है। अब वह कोई गीत चुपचाप गुनगुनाने लगती है। एकाएक उसका हृदय भावुक हो उठता है। वहाँ मानो कि एक भारी तूफान उठा हो।

मां सो गई है। नौकरानी के पूछने पर कि उनको कुछ चाहिए, रीता उसे सो जाने को कहती है। स्वयं चुपचाप कपड़े बदलने लगती है। बड़े आइने पर अपनी प्रतिछवि कभी-कभी देख लेती है। गोपी बाहर बरामदे में चुपचाप खड़ी गुनगुनाती है। खिड़की खोल कर दूर नीचे घाटी की ओर दृष्टि फेरती है। वह मैदान चमक उठता है, अपने समीप खड़ी अन्य इमा-

रतों पर दृष्टि करती है। सबको देखतीं भर रह जाती है। वह सौन्दर्य अनायास मन को मोह लेता है। चाँद की गोदी में छुपा हुआ हिरन एक थिरकन मन में लाता है। कई अज्ञात सी बातें उठती हैं। वह टकटकी लगा कर चाँद को देखती भर रह जाती है। जब कि रीता चारपाई पर लेटी हुई खाली-खाली सी अपने को पाती है।

—पिछली रात को रीता और गोपी 'हैकमैन' से चार बजे रात को लौटी थीं। वहाँ एक नया जीवन दोनों ने पाया था। वे तो मुग्ध सी वह सब देखती रहीं। गोपी बार-बार उठकर नाच में भाग लेना चाहती थी। लेकिन अपना कोई साथी वहाँ कहाँ था! अधिकतर अमरीकन फौजी अफसर वहाँ थे। उन लोगों ने अपनी मेजों पर छोटे-छोटे सितारों वाले झंडे लगा रखे थे। सामने बड़ा 'यूनियन जैक' टँगा हुआ था। दो भारतीय जोड़े भी वहाँ नाच रहे थे। रीता को याद आया कि जब वे रिस्तोरां में बैठी हुई थीं, वहाँ उसने उन दोनों युवतियों को ह्विस्की पीते हुए देखा था। वह उनके इस व्यवहार पर अचरज में पड़ गई थी। हॉल के भीतर जीवन तीव्र गति से बह रहा था। बीच-बीच में हँसी के फुहारे गूँज उठते थे। दूसरा नाच समाप्त हो गया था। वहाँ अजीब सा वातावरण था। रीता उस कुतूहल को नहीं समझ पाई। वह सोच रही थी कि जब वह दिन में कब्रिस्तान से गुजरी थी, चारों ओर हरियाली थी; बीच-बीच में वे सुफेद कब्रें चमक उठती थीं। वहाँ जो चक्करदार घुमाऊ सड़कें हैं, उनको पार करने में एक नया जीवन मिलता है। परिवार के परिवार अलग-अलग गिरोहों में घूमते हुए मिलते हैं। वहाँ रमणियों में एक नई प्रगति मिलती है। वे पुराना शील जैसे कि बिसार चुकी हों। बहुत आगे बढ़ी हुई लगती थीं।

वहाँ 'हैकमैन' में पूछा था गोपी ने, "कुछ खावेगी रीता।"

"क्या ?"

"पुटैटो-चिप्स, मूँगफली, पेस्ट्री, चाकलेट.....!

"नहीं ?"

"काफी मँगवालूँ ।"

"नहीं-नहीं !"

"तू उदास क्यों है ?"

कब उदास थी रीता। वह चुप रही। गोपी ने फिर पूछ ही डाला, "प्यास लग रही होगी, 'लैमलेड' मँगवा लेती हूँ।"

और कुछ देर के बाद वे दोनों चुपचाप लैमलेड पी रही थीं। वह सब फिर भी मन को शान्ति नहीं दे सका। जीवन का वह प्रवाह, वह हँसी.....! गोपी तो अपने भीतर वह सब पाकर मन में खिलती नहीं है। बाहर वह एक थोथी हँसी वैसे कभी हँस देती है। वह हॉल वाली हँसी की गूँज बार-बार उसके हृदय पर चोट मारती थी कि वह सब झूठ है। थोथा व्यवहार है, जीवन को ठग लेने का एक साधन मात्र है। वे सब फौजी जीवनमुक्त से लगते हैं। जापान की लड़ाई उनको परिवारों से दूर यहाँ ले आई है। वे मानवता के एक बड़े से परिवार में है ? जर्मनी और जापान के तानाशाह जब मिट जावेंगे तो दुनिया में अमन-चैन हो जायगा। वे फौजी वरदियाँ उसे भली सी नहीं लगती हैं। वह तो शान्ति काल वाले नागरिक जीवन की भूखी है। सुबह उसने समाचारपत्र में एक विज्ञापन देखा था—एक युवती चुपचाप उदास खड़ी थी। उसे सूचना मिली थी कि जिस जहाज से उसका पति आने वाला था उसके आने में असाधारण देरी हो गई है। ऐसा अनुमान लगता है कि शत्रु द्वारा नष्ट कर दिया गया है।—आगे चेतावनी दी गई थी कि युद्ध सम्बन्धी कोई चर्चा न की जाय। शत्रु के भी कान होते हैं।

उसका पति 'कमीशन' लेकर चला गया था। वह कभी-कभी चिट्ठी पा जाती थी। वे कहाँ से आती थीं, वह नहीं जानती थी। बाहर फील्ड पोस्ट ऑफिस की मोहर रहती थी और फिर 'सेन्सर' वाले उसे पढ़ कर उस पर चिप्पी लगा देते थे। अन्तिम चिट्ठी एम० पी० ४०५ की थी। उन चिट्ठियों में मन की सब बातें नहीं रहती थीं। मानव के साधारण बन्धन और नाते जैसे कि इस युद्ध ने नष्ट कर डाले थे। उसे युद्ध की अधिक जानकारी नहीं थी। समाचार पत्रों में पढ़ती है कि लाल फौज जर्मनी की ओर बढ़ रही है। उधर आठवीं सैना इटली में बहादुरी दिखला रही है। कोहिमा के जंगल, पालेल की ढ़लानें, उखरूल के पहाड़ी रास्ते; आज ये नाम समाचार, पत्रों में प्रमुख स्थान नहीं पाते। पिछले वर्ष उनकी बहुत चर्चा रहती थी। इस युद्ध में हजारों अपरचित शहर जागे और फिर सो गए। युद्ध ने तो भूगोल की एक बड़ी व्याख्या खोल कर रखदी है। जैसे कि पाँचों महाद्वीप मिल कर एक हो गए हों। लेकिन वहाँ कई नदियाँ, पहाड़, झीलें, शहर और गाँव हैं। वे सब आसानी से अस्सी पेज की 'एटलस' के भीतर समा जाते हैं। उसने वह ऐटलस खूब देखी है।

—गोपी का हृदय एकाएक उमड़ पड़ा। वह खुली सी फैली हुई घाटी, चाँदनी रात्रि; सारा सौन्दर्य उसे बार-बार डसता हुआ सा लगा। सोचा ही उसने कि क्या वह अपने को ठग रही है। वह एक धोखा लगता था। अन्यथा वह एक झूठे जीवन के भीतर क्यों रहती है। यह नया लुभावना संसार, जादू और परियों की कहानी वाला स्वप्न कब बन पा रहा है। वह जिस तेजी से उस जीवन के भीतर पैठ रही है, उतना ही अपने हृदय को मुरझाया हुआ पाती है। लगता है कि सारा जीवन निचुड़ गया है। एकाएक सपने की भाँति आती आँखों

के आगे 'चित्रलेखा' की तसवीर ! वह उस फिल्म को पूरा नहीं देखती है। चित्रलेखा को नाव पर बिदा कर सदा लौट आती है। उसे आगे के कथानक से कोई भी दिलचस्पी नहीं रहती है। उसे किसी साधु को मोहना नहीं है। वह भी चाहती है कि सच ही वे भगवान इन्सान बन जाँय। पुराण की कथाओं के देवता उसे साधारण मनुष्य ही लगते हैं। वह उनको दन्त-कथाएँ ही मानती है। जादू की छड़ी और वह विक्रमादित्य का सिंहासन उसे इतिहास की सच्ची बातों से कब परिचित करा पाए हैं। लेकिन वह जो यह एक भयङ्कर खेल खेल रही है। उसने रीता के मन को हर लिया है। रीता के समूचे व्यक्तित्व को नष्ट कर, उसे अपने में समा लिया है। आज रीता केवल गोपी की बातों को दुहराती है। उसीकी भावना उगलती है। गोपी जितनी रंगीन और बनी-ठनी रहती है, रीता का आचरण उसके विपरीत एक बाल विधवा का सा है। वह उस रीता से कैसा व्यवहार बरता करती है। उसने तो उसके प्राणों तक को जीत लिया है। वह उस डोरी का क्या करेगी ?

रीता के रिश्ते की बातचीत चली थी। आई० सी० एस० लड़का। घर के लोग राजी थे। रीता ने भी अपना परियों वाला महल बनाना शुरू कर दिया था। सारी तैयारियाँ हो चुकी थीं। तभी एकाएक एक दिन संध्या को गोपी ने पूछा था, "तू दुलहिन बनने की तैयारी कर रही है रीता, सुना है मैंने !"

"क्या जीजी ?"

"ज्वाइंट मजिस्ट्रेट की मेम बनेगी। यह हरएक लड़की के लिए ईर्षा की बात हो, तेरे लिए नहीं।" रीता बात नहीं समझ सकी। गोपी ने भी आगे कुछ नहीं कहा। सोचा ही गोपी ने कि वह यह कैसी हिंसा बरत रही थी। रीता का विवाह.....!

लेकिन यह युद्ध जहाँ उसका पति गया हुआ है। एक जगह उसने पढ़ा था—चारों ओर लाशों की ढेरियाँ लगी थीं। कई चीन के निवासियों की हत्या तो स्वयं लेखक के सामने ही की गई। ऐसा पैशाचिक कांड कभी नहीं देखा गया। चारों ओर मर्द, औरतें और बच्चों की लाशें पड़ी हुई थीं। औरतों की पीठ पर संगीनों के बड़े-बड़े घाव थे और उनकी छातियों पर जापानी सिपाहियों के बूटों के नीले निशान। बच्चों की लाशें गोलियों से चलनी बन गई थीं। सब नगरवासी थे। एक भी उनमें से सिपाही नहीं था।

वह किसी की हिंसा की भावना···! वह रीता के साथ आजकल कैसा खेल खेला करती है। और रीता है कि उसे अपना समस्त जीवन देने तुल जाती है। कभी-कभी सरल बातें करके वह गोपी अनायास रीता को मोह लेती है। रीता तो चूहे की तरह थी और वह साँप की भाँति दाँव चला रही थी। वह क्यों कभी-कभी युद्ध की बातें सुन कर घबरा सी उठती है।

युद्ध·····! जापानी फौजी दस्ते गाँवों में घुस आते थे। जिसको जो पसन्द आता, वही वहाँ के ग्राम निवासियों से छीन लेता था। प्रत्येक परिवार से एक व्यक्ति पकड़ कर गुलाम बना लिया जाता था। जापानी सिपाही साधारण चाँदमारी से ऊब जाते थे, तो घरेलू मवेशियों पर गोली चलाते थे। कभी-कभी मनोरंजन के लिए गाँव के बूढ़ों को भी गोली का निशाना बना देते थे। कुछ दिनों के बाद थक कर वे मन बहलाव के लिए गाँव की युवतियों से छेड़खानी कर, उनको अपने यहाँ पकड़ लाते और आमोद-प्रमोद में डूब जाते।··हजारों चीनी युवतियों को जापानी सिपाहियों के कैम्पों में वेश्यावृत्ति के लिए भेज दिया जाता था।

रीता को गोपी अपने जीवन के मोह की नागफाँस में बाँध चुकी थी। रीता निर्जीव थी और कभी-कभी गोपी उसमें प्राण डाल देती थी। रीता ने शादी का रिश्ता तोड़ डाला था। और लौट कर बोली थी गोपी से, "मैंने मना कर दिया है जीजी।"

गोपी चुपचाप उस पर विचार करती रही। वह सारी स्थिति से परिचित थी। लोगों को इस बात को सुनकर आश्चर्य हुआ था। किसी ने कोई तर्क नहीं उठाया। रीता अपने में खो रही थी। गोपी नया जीवन पा गई। रीता का शरीर मिट्टी बन गया। प्राण और गति गोपी देती थी। अपनी तृष्णा को बुझाने के लिए यह खेल खेल रही थी। रीता उसकी पकड़ में आ गई थी। वह उसे आसानी से छोड़ देना नहीं चाहती थी।

रीता तो एक अरसे तक प्रेम-पत्रों के सुनहले संसार के बीच रही है। उन पत्रों की भाषा गोपी ने ही सुलझाई थी। अपने मन की किसी पीड़ा से व्यथित होकर वह उनका उत्तर लिखवाती थी। रीता का काम अपनी फाउन्टेनपेन से कोरे कागज पर वह इमला लिख भर देना था। गोपी द्वारा उठाए गए प्रश्नों पर कभी उसने विचार नहीं किया। कभी वह सोचती कि उसका अपना गृहस्थ होगा। वह ढाँचा तो गोपी होशियारी से चुपके मिटा डालती थी। नदी की रेती पर जैसे कि रीता गृह निर्माण करती थी, जो कि साधारण हवा के झोंकों से उजड़ जाता था। विवाह.....; रीता का निश्चय दृढ़ था।

गोपी की अपनी दुनिया—युद्ध, युद्ध.....! शादी के एक सप्ताह बाद पति कमीशन पाकर चले गए थे। कभी-कभी पहले चिट्ठियाँ आती थीं। उससे गोपी के बावले मन को तसल्ली कहाँ होती थी। पति उसके जीवन में स्नेह का एक नया अध्याय खोल

कर चले गए थे। वह तो ......। सात दिन का वह जीवन एक स्मृति भर ही नहीं था, वहाँ वह बार-बार झाँक कर सन्तोष कर लेती थी। कभी मन उदास हो उठता, तो वह भूखे बाज की तरह रीता को नष्ट करने का निश्चय कर लेती थी। रीता एक सुनहरी पंछी मानो कि थी। वह उसकी उस हिंसा को न जानती थी। उसने तो अनजाने अपने को उत्सर्ग कर दिया था। वह गोपी से कभी कोई सवाल नहीं पूछती थी।

एक दिन गोपी न जाने कहाँ से दुनियाँ का एक बड़ा नक्सा ले आई थी। वह रीता को अच्छे कुशल अध्यापक की भाँति भूगोल पढ़ाने तुल गई। पैसिफिक महासागर के टापुओं की बात बताती रही। बीच-बीच में समझाती जाती थी कि 'रिपल्स' और 'प्रिन्स आफ वेल्स'—अंग्रेजों के दोनों जहाजों को जापानियों ने कहाँ-कहाँ पर डुबोया था। वह एक सैनिक विशेषज्ञ की भाँति जापान के युद्ध की प्रगति उसे समझाती रही। उसका कहना था कि १० दिसम्बर १६४१ को उन समुद्री बेड़ों का डूब जाना, जापान की बहुत बड़ी विजय थी। १५ फरवरी १६४२ को सिंगापुर का पतन हुआ।

वह सिंगापुर के पतन की कहानी अखबारों में पढ़ चुकी है। ब्रह्मा से भाग कर आए हुए लोग नई-नई कहानियाँ गढ़ कर लाए थे। ब्रह्मा तो जादू का सा देश है। सुनती थी कि वहाँ की लड़कियाँ पुरुषों को अपने प्रेम की डोरियों से बाँध कर कैद कर लेती हैं। सिंगापुर अब शोनान घोषित हो चुका था। वहाँ बहुत से सैनिक पकड़े गए थे। उसका पति भी वहीं था।

—टप, टप, टप कर गोपी की आँखों से आँसू बरस पड़े। नीचे घाटी पर चाँदनी एकाएक धुँधली पड़ गई थी। चाँद काले बादलों के भीतर छुप गया था। गोपी बहुत थक गई थी। वह भीतर आई। देखा कि रीता चुपचाप सो रही थी। वह कुछ

देर उसके पास खड़ी रही। फिर एकाएक पागलपन में उसे चूम-चूम लिया। रीता की नींद उचट गई। उसने घबराहट में कहा, "गोपी जीजी !"

गोपी तो बिलकुल चुप रही। वह रीता से क्या कहे ! उसका मन तो उमड़ रहा था। वह बहुत व्याकुल थी। वे बादल, वह चाँद, वह चुपचाप चाँद की गोदी में छुपा हुआ हिरन.....!

"सोजा जीजी, दो बज रहे हैं।"

"कोई गाना सुना दे रीता।"

रीता ने अचरज में गोपी की ओर देखा कि बात क्या है ? इस आधी रात को गाना गाना; आस-पास के लोग क्या सोचेंगे ? यह जीजी की कैसी माँग थी।

"सुना न रीता, नैया धीरे-धीरे बहना..।"

रीता कुछ नहीं बोली। उठ कर पलङ्ग पर बैठ गई थी।

"नहीं सुनायेगी।"

"क्या जीजी ?"

"सुना न..।"

रीता चुपचाप गुनगुनाने लगी। गोपी आँखें मूँदे कुरसी पर बैठ गई। यह कैसा नशा था। वह चाहती थी कि मन स्थिर हो जाय। वही गुनगुनाहट—नैया धीरे-धीरे बहना ! उसकी जीवन-नैया तो चुपचाप सागर के एक किनारे खड़ी है। उसमें कोई गति नहीं है, प्राण नहीं हैं। इस हिल स्टेशन में जीवन तीव्र गति से बहता है। गोपी उसमें बह जाना चाहती है। चाहती है कि रीता उसकी जीवन नौका को चुपचाप बढ़ाती चली जाय। रीता यह सब नहीं कर पाती है। ओफ.....। पंजाब, काश्मीर, सिन्ध, बंगाल..; नीचे मैदानों के लोग पहाड़ आए हुए हैं। यह शहर हिल स्टेशनों की रानी कहलाता है। दूकानों की सजावट, लोगों का उत्साह और चारों ओर

पहाड़ों की हरियाली। वे ऊँचे-ऊँचे देवदारु के पेड़। जो आकाश को छूते से लगते हैं। गोपी का मन चाहता है कि वह पंछी बन कर किसी ऊँची डाली पर झूले और वहीं से एक बार नीचे की दुनिया की ओर देखले।

रीता का गुनगुनाना बन्द हो गया था। वह गोपी के पास आकर उसे झकोरती हुई बोली, "जीजी!"

गोपी सोच रही थी कि वह देवदारु की टहनी पर बैठी है। नीचे की दुनिया विचित्र लग रही है। हवा के झोकों से एक अजीब स्वर लहरी बह रही थी। वह मानो वहाँ झूल रही थी।

"जीजी!"

गोपी तो थी चुप।

रीता उलझन में पड़ गई कि बात क्या होगी। अब गोपी ने आँखें खोल लीं। उनकी पलकें भीगी हुई थीं। रीता ने धीमे स्वर में पुकारा, "जीजी।"

गोपी तो उसी भाँति गीली आँखों से उसे देख रही थी। रीता ने अपने आँचल से आँसू पोंछ लिए। कुछ देर खड़ी रह कर बोली, "बात क्या है?"

गोपी ने अपनी बाहें उसके गले पर डालदीं। सुलझ कर कहा, "सोजा रीता। यह तो तीन बजने वाले हैं।"

रीता ने चुपचाप जीजी का कहना मान लिया। गोपी ने आइने के पास खड़े होकर बालों से क्लिप हटाए। मुँह पर क्रीम मला। रोशनी बुझा कर वह चुपचाप पलङ्ग पर लेट गई। मखमल का तकिया दोनों बाहुओं के बीच दबा कर सो गई।।

बड़ी सुबह गोपी की नींद टूटी। बाहर मेह बरस रहा था।

सुफेद कुहरा तो खिड़की से भीतर प्रवेश कर रहा था। गोपी अनमनी सी खड़ी थी। एकाएक 'मेघदूत' की यक्ष-पत्नी का ध्यान आया। क्या वह कुहरा भी दूर किसी सागर से सन्देशा लाया था। सिंगापुर.....! वह नगर उसके जीवन में मील के एक भारी पत्थर की भाँति खड़ा है। वह जापानियों के अधिकार में था। उसका पति वहीं है। सैनिक विभाग द्वारा सूचना मिली थी कि उसका पति संभवतः शत्रुओं द्वारा पकड़ लिया गया है। संभवतः.....! युद्ध काल में सही बातें कहाँ ज्ञात होती हैं। युद्ध.....; सामने शत्रु की मशीनगनें, ऊपर हवाई जहाज मृत्यु.....विजय.....। मानव जीवन का प्रति दिवस का संघर्ष और यह जातियों का आपसी युद्ध! गोपी अपने जीवन के उस संभव वातावरण में कई मास तक रही। उसके अतिरिक्त और कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई थी। प्रति मास उसे अपने पति के वेतन का एक बड़ा अंश मिल जाता था। मन में आकांक्षाओं की लहरें उठती थीं। जीवन गतिहीन हो गया था। यद्यपि कई घटनाएँ तेजी से जीवन में प्रवेश कर रही थीं। घटनाएँ..!

सिंगापुर, मलाया, रंगून का पतन! कलकत्ता और विजगापट्टम पर जापानी विमानों द्वारा बम बर्षा। आसाम के पास मणिपुर राज्य में जापानियों का प्रवेश! टिड्डिम, कोहिमा, इम्फल रोड़.....। नागा पर्वत के शिखर पर शत्रुओं की सैनाएँ छा रही थीं। गोपी युद्ध के इन समाचारों का कोई ठीक सा अर्थ नहीं लगा पाती है। प्रतिदिन के दैनिक पत्रों में युद्ध-क्षेत्र के नक्शे प्रकाशित होते हैं। वहाँ कई नए शहर वह पाती है। गोपी युद्ध की मोरचाबन्दी से भिज्ञ नहीं है। उसका सम्पूर्ण ज्ञान तो सिंगापुर पर केन्द्रित था। सुना था कि वहाँ उसका पति शत्रु द्वारा कैद किया गया है।

गोपी को पहले अपने जीवन से बड़ी झुंझलाहट उठती थी। लेकिन वह चुप रहती। किसी बात में उसे उत्साह नहीं रह गया था। युद्ध द्वारा उत्पन्न असाधारण स्थितियों से देश गुजर रहा था। लेकिन वे सब उसके लिए साधारण से समाचार थे। जिससे कि उसका कोई वास्ता नहीं सा है। देश के भीतर तूफान आया। रीता उस दिन बहुत उद्विग्न रही। बड़ी सुबह को उसने रेडियो द्वारा सुना था कि सब नेता बम्बई में कांग्रेस अधिवेशन के बाद पकड़ लिए गए हैं। गोपी तो बहुत चिन्तित थी, बार-बार उसके कानों में एनाउन्सर के शब्द गूँजते थे—देश में तोड़-फोड़ हो रही है। जनता और नौकरशाही का संघर्ष!

गोपी उस आँधी से परेशान हो उठी थी। उसके मन में एक हूक उठती थी कि यदि जापानी भारतवर्ष में आ जावेंगे, तो क्या उसका पति भी आ सकेगा? युद्ध की संभावनाएँ कितनी ही अनिश्चित हों, उनका शत्रु द्वारा प्रचारित होना न जाने क्यों मन को शान्ति देता था। शोनान रेडियो बार-बार सुनाता था कि अब हिन्दुस्तान की आजादी दूर नहीं है। उधर बर्लिन गांधीजी की बात दुहराता था कि अंग्रेजों को भारत छोड़ देना चाहिए।

लेकिन रीता कहती थी, "जीजी, जापान से कुछ आशा करनी भूल होगी। हम सदियों से गुलामी की 'नागफांस' में फँसे हुए हैं। पहले शक जाति आई, मुगल आए; वे हमारे पश्चिमी दरवाजे से आए थे। फिर अंग्रेज समुद्र की राह आए और आज हम सोचते हैं कि जापानी पूर्वी दरवाजे से आकर शायद हमें स्वतंत्रता दे देंगे।"

गोपी तो रीता के गले में बाहें डाल कर कहती, "ओ रीता, तू अभी कुछ नहीं जानती है। सुभाषबाबू क्या मामूली व्यक्ति

हैं। उनके नेतृत्व में भारतीय सैनिक यहाँ प्रवेश करके हमें मुक्त करेंगे। जो कभी गांधीजी और नेहरूजी नहीं कर सके, उसको अब वे पूरा करेंगे।"

रीता सोचती कि जीजी का विछोह उमड़ आया है कि शायद जीजाजी उस फौज के साथ आवेंगे। उस कल्पना को नष्ट करने से कोई लाभ नहीं होगा। वह अब बोली, "ठीक बात होगी जीजी।"

गोपी की बात स्वीकार कर लेने के बाद उसका मन उलझ गया। क्या जापान सच ही यहाँ के नागरिकों को स्वतंत्रता दे देगा। जापान के प्रधान मंत्री का तो कहना है कि पूर्वी एशिया में नई व्यवस्था स्थापित करना उनका सिद्धान्त है। एशिया तो एशिया वासियों के लिए ही है।

एशिया वासियों के लिए··! चीन में जापानियों ने प्रवेश किया था। वहाँ अपने साम्राज्य की स्थापना की भावना थी। वहाँ की दर्दनाक कहानियाँ·····; अनाचार, बलात्कार, तथा वहाँ की संस्कृति को नष्ट करने की चेष्टा·····! गाँवों और नगरों का जला देना। बच्चे और बूढ़ों को मार डालना। हजारों नागरिकों की हत्या। हजारों युवतियों का सैनिक वेश्यालयों में भेज दिया जाना·····।

और गोपी का यह विश्वास कि जापान उनको मुक्ति दे देगा। रीता अपने को ठग नहीं सकी। उसके मन में घृणा भर आई। वह गोपी के पास पहुँची। देखा उसने कि गोपी आतसखाने में रखे, गुलदस्ते में लगे हुए फूलों की पंखड़ियों से खेल रही थी। मानों की वह भौंरा हो और वह गुलदस्ता फूलों से भरा हुआ बाग। गोपी अपनी परियों की रानी वाली दुनिया में थी। रीता का आना भला कैसे जान लेती।

"जीजी!" बोली थी रीता।

गोपी ने उस पर दृष्टि डाली। वह कुछ नहीं बोली। रीता ने अवाक् होकर देखा कि गोपी की आँखें गीली थीं। वे सुख के आँसू थे या दुःख के…!

रीता का विद्रोही मन शान्त हो गया। लेकिन वे मटमैली तसवीरें…। जापानियों की कोरिया के नागरिकों को कुचलने की चेष्टा करना। कोरियन युवतियों के साथ का बलात्कार…। बच्चों को माँओं की गोदी से छीन कर संगीनों पर चढ़ा देना…। वह चेपई की सोई हुई जनता पर मध्यरात्रि को हवाई जहाज से बम बरसाना। नानकिंग का विभत्स अत्याचार…हजारों नागरिकों का मशीनगन से गोलियाँ खाना। सड़कों का मुर्दों से पट जाना……उस देश की संस्कृति को मिटाने की चेष्टा करना।

गोपी ने अब रीता को देखा। रीता तो गदगद हो बोली, "जीजी तुम यह कैसा सुपना देख रही हो।"

"क्या बात है रीता?"

"तुम सोचती हो कि जापानी आकर हमें स्वतंत्रता देंगे। वे जापानी जो चीन में…।"

"रीता! रीता!!"

"गोपी जीजी यह तेरी सुखद कल्पना नहीं है। अपने साधारण स्वार्थ के लिए तुम चाहती हो कि हम जापानियों के गुलाम बन जाँय। हम आजादी चाहते हैं। अपनी शक्ति द्वारा ही हम स्वतंत्र होंगे।"

गोपी कुछ नहीं बोली। वह उस रीता से समझौता करने के लिए तैयार हो गई। लेकिन वह संभावना…! पति के लौट आने का सवाल…। क्या वे जापान के कैदी हैं।…वह जापानियों का चीन पर हमला करना! रीता तो कभी झूठ नहीं बोलती है। रीता ने वे तसवीरें पोंछ कर उसे दिखलाई हैं।

वे कहानियाँ मन में भद्दी छाप ले आई थीं। वह पीला देश, वे नदियाँ, वे बुद्ध भगवान !

यह तो गोपी की अपनी हार लगी। रीता का बाजी जीत लेना अनुचित बात थी। जब अगले दिन कुछ विद्यार्थी आए और उन्होंने बताया कि उनकी एक गुप्त संस्था है जिसका सम्बन्ध जापान से है। वे देश को आजाद करेंगे। वह यह सुनकर अवाक् रह गई। उसका उन लड़कों से स्नेह हो आया। उसके पास जो रुपया तथा बहुमूल्य वस्तुएँ थीं, उसने सब उनको देदीं। साथ ही आश्वासन दिया कि वह उनकी शक्ति भर मदद करेगी। रीता को इस सबका कोई ज्ञान नहीं था। वे लड़के एक-एक करके पुलीस द्वारा पकड़े गए थे। गोपी असहाय सी सब कुछ देखती भर रह गई थी। उस क्रान्ति का सुनहला सुपना तो नष्ट हो गया था। उस असफलता को वह अपनी हार समझने लगी। एक माह बाद आन्दोलन का दौरान बहुत धीमा पड़ गया था।

रीता कहती थी, "जीजी आज परिस्थितियाँ बदल गई थीं, पर हमारे राष्ट्रीय नेता उन पुराने दाँव-पेचों से ही सफलता पाना चाहते थे। वह धमकी असफल रही। 'शोनान' रेडियो अब चुप है। आज देशभक्त उलझन में पड़ गए हैं। जनता अपना नैतिक बल खोती जा रही है। सब चुपचाप बैठ गए हैं। और कोई देश होता तो आज नया प्रगतिशील राजनीतिक दल जनता का सही संचालन करता।"

गोपी को लगता था कि रीता उसका उपहास उड़ाया करती है। वह झुँझला कर कहती, "मैं जापानियों की विजय चाहती हूँ रीता।"

"क्या जीजी ?"

"कल रात 'शोनान' रेडियो पर वे बोले थे।"

"जीजाजी !"

"हाँ रीता, उनका कहना था कि वे आजाद हैं। जापानियों का उनके साथ शिष्ठ व्यवहार है। वे कैदी नहीं हैं।

"तो जीजी तुम हनुमानजी के मन्दिर में बताशे चढ़ाने नहीं गईं।"

"रीता !"

"क्या है जीजी ?"

"तो क्या तू मुझे स्वार्थिन समझती है ? अंग्रेज कई समुद्र पार कर यहाँ शासन करने आए। उनके क्लबों में कालों के लिए निषेध है। उनसे हमारा कोई सांस्कृतिक सम्पर्क नहीं है। जापानियों का हमसे कौन सा स्वार्थ है ! वे यहाँ हमला इसी लिए करने तुले हैं कि उनके दुश्मनों का उपनिवेश है, अन्यथा वे तो ब्रह्मा को आजादी दे चुके हैं"

"यह झूठ है—झूठ है, गोपी जीजी, मैं तेरी बात नहीं मानूँगी। जापानी चीन के दोस्त भी अपने को कहते हैं। वहाँ का उनका व्यवहार…!"

गोपी रीता की सरलता पर मुग्ध हो जाती। रीता कई बातें सुनाती थी; चीन का इतिहास, वहाँ की चार हजार वर्ष पुरानी सभ्यता। वह उत्सवों का देश……। वहाँ की सभ्यता दुनिया की अति प्राचीन सभ्यता है। चित्रकला वहाँ की एक विशेष कला है ! सुन्दर चीनी अक्षर ! चीनियों की रंगीन दृश्यों को चित्रण करने की शक्ति और रंगों द्वारा प्रभाव पैदा करने की अपूर्व क्षमता……। वह चीन की दो हजार मील लम्बी, २० से ३० फुट तक ऊँची दीवार। जिसके ऊपर बारह फुट चौड़ा रास्ता है।

गोपी तो सुनती रही। वह रीता की बातों पर मुग्ध थी। धीरे-धीरे रीता ने गोपी को मोह लिया। उसने रीता की सब

बातें स्वीकार करलीं। चीन उसके मन में समा गया। वह वहाँ गड़ी हुई जापानी संगीनों को पहचान लेती थी। लेकिन वह रीता की विजय नहीं थी। कारण कि गोपी उदास रहने लगी थी। रीता उसमें भावुकता की आहुति देती रहती थी, रीता का मन कभी व्याकुल नहीं हुआ। १६४२ में जो लहर आई थी वह उससे दूर थी। गोपी तो दो-तीन सप्ताह तक क्रान्तिकारियों की रानी रही और उससे एकाएक अलग हो गई। उसने अपनी असफलता की बात चुपके रीता को सुनाई थी।

रीता ने आश्चर्य से पूछा था, "तो क्या जीजी तुझे विश्वास था कि वह क्रान्ति सफल होगी। वह गांधीजी का आन्दोलन कब था! नौकरशाही ने जनता को उकसाया। बर्लिन और शोनान रेडियो ने बहकाया। देशभक्त भुलावे में आ गए। उस क्रान्ति के पीछे जनता की सही ताकत नहीं थी।

"रीता! रीता, क्या कह रही है तू। बिहार, बलिया तथा और स्थानों में क्या जनता ने अपना राज्य स्थापित नहीं कर लिया था।"

"लेकिन सही क्रान्ति इस प्रकार नहीं सुलगती है। वह तो भूसी की तरह सुलगती है और एक दिन चुपके सारे देश पर छा जाती है।"

गोपी का अब इस क्रान्ति से कोई सम्बन्ध नहीं रह गया था। वह तो एक क्षणिक आवेश सा लगा। वह उस दल के एक दो लड़कों को बहुत दिनों से जानती थी। एक तो सात-आठ बार जेल हो आया था। वह कई षड्यंत्रों में पकड़ा गया था। पुलीस ने बार-बार चेष्टा की कि उसे अपने पक्ष का गवाह बना ले, किन्तु सफल नहीं हुए। रीता की बात सच थी, सब कारो-बार फिर उसी प्रकार चल रहा था। केवल कुछ हजार व्यक्ति जेल गए थे, जब कि देश की आबादी—चालीस करोड़ थी।

रीता बार-बार गोपी के समीप आकर फिर दूर हट जाती थी। एक दिन रात्रि को उसने भयंकर स्वप्न देखा था। लाखों लाशें पड़ी थीं। उनके ऊपर भारतमाता खड़ी थी। फिर देखा था उसने कि वह एक मुरदा उठा कर गांधीजी को सौंप रही है। गांधीजी चकित से उस मुरदे को देख रहे थे। कोई मीठे स्वर में गा रहा था :—

सुजलां, सुफलां, मलयज शीतलाम्,
सस्य श्यामलाम्, मातरम्
बन्देमातरम्

गीत का स्वर और समीप आया। केसरिया साड़ी पहने हुए युवतियाँ गा रही थीं। भारतमाता तो उन लाखों मुरदों के ऊपर खड़ी थी। वे युवतियाँ उसी प्रकार गा रही थीं। वह उनकी स्वर लहरी के बीच बह चली।

स्वप्न टूट गया। बंगाल का अकाल……! वह अजनबी झाँकियां !! मानों कि वह कोई व्यंग-चित्रों की किताब टटोल रही थी।

कलकत्ता शहर, एक लाख पचास हजार, नंगे, भूखे; स्त्री, मर्द और बच्चे……। पीली आँखें; जिनमें कि जीवन ज्योति मिट चुकी थी। वे सब मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे। शहर के अमीर लोग तो अन्न चुरा कर छुपाए हुए थे। मनुष्यता का वह अभिशाप……! हरे-भरे खेतों में पैदा हुआ अन्न गँवाकर के बंगाल का किसान अपनी भूमि से दूर, अपने सनातन घरों से भाग कर, कुटुम्ब और परिवारों से विलग हो, निर्वस्त्र और निराश्रय था। वह अन्न के एक-एक दाने की तलाश में सुदूर शहरों में पहुँच कर वहाँ की सड़कों पर मर गया था। चालीस लाख की मृत्यु। चालीस करोड़ भारत की आबादी है, और वह संख्या भूख से तड़प-तड़प कर मिट गई है।

रीता का वह स्वप्न······बन्दे मातरम् की स्वर लहरी···वे केसरिया साड़ियाँ पहने गाती हुई युवतियाँ। भारतमाता का उन मुरदों के ऊपर रहना। वह गांधीजी का कथन—करो या मरो! वह हिंसा, हिंसा, हिंसा!

लेकिन एक युवती चिल्लाती लगी, "कैसा मान सम्मान! इससे पहले सब कुछ हृदय की अग्नि से सहते थे। अब तो पेट की आग में सब खाक हो गया। कौन कहता है कि प्राणों से मान बड़ा है? किस झूठे ने प्रचार किया है कि नारी का हृदय फट जाय, पर मुह न फटेगा। भूखे यदि तिल-तिल करके मर जाएं, यदि पेट की ज्वाला में भगवान से मुह मोड़ कर आत्म-हत्या करलें, यदि तुम्हारी भूख से मरी मां-बहनों को चाँडाल घसीट कर बाहर करें, क्या तब तुम्हारा मान-सम्मान बचा रहेगा? जिन्होंने हमें नहीं बचने दिया, जिन्होंने मुँह का कौर छीन कर हमें मारा, जिन्होंने हमारे कलेजे का खून चूस-चूस कर पिया, उनका कौन सा मान-सम्मान बढ़ गया।"

रीता जैसे कि जीवन भूल गई थी। गोपी को उसने एक तसवीर दिखलाई। आठ-दस साल का बच्चा, पेट तूम्बी की तरह फूला हुआ। हाथ-पैर काठ को भाँति सूखे हुए। सारा शरीर सिकुड़ कर इतना छोटा हो गया था कि सिर एक बांस की खपच्ची पर टँगे हुए घड़े की तरह लगता था।

बंगाल के अकाल में खोए हुए लाखों बच्चों में से एक!

गोपी का मन उसे देख कर उमड़ आया। यदि उसका भी एक बच्चा होता तो पति की याद शायद इस भाँति न सताती। वह उस बच्चे को खूब सजा कर रखती, उसके लिए खुद सुन्दर कपड़े सिलती। उसको संध्या को प्रम्बुलेटर में घुमाने ले जाती। उसका पति और यह युद्ध। उसका पति युद्ध का कैदी था। सैनिक सूचना विभाग द्वारा पत्र मिला था कि 'रेड क्रास' द्वारा

चेष्टा की जा रही है कि पत्र प्राप्त किया जाय। तो पति जीवित थे! वह झूठ बात नहीं है। यह रीता तो बावली हो गई है। उसने तो बंगाल के अकाल की 'स्केच-बुक' बनाली है। न जाने कहाँ-कहाँ से अखबार इकट्ठा करके, तसवीरें काट कर लगाती है। कहती है कि जीजाजी को उसे भेंट में देगी! वे सब बातें गोपी को अच्छी नहीं लगती है। वह कई नई-नई बातें सुनाती है। उसी दिन किसी किताब से जोर-जोर से पढ़कर सुना रही थी, "घर लौट जाओ रमजान! तुम सब घर लौट जाओ। मेरे वे दो-तीन मोरचा खाए हुए हल मजबूती से मिट्टी में चलना। खूब मजबूती से चलाना---सोना फलेगा---सोना फलेगा!"

शहर की गली में मर जाने वाले किसी किसान की 'अंतिम अभिलाषा' कि उसके बच्चे फिर अपने गाँवों को लौट जावें।

गोपी को इससे कोई दिलचस्पी नहीं है। वह 'देवी चौधरानी' पढ़ती है, सोचती है कि यदि वे लड़के न पकड़े गए होते तो वह भी एक बाजरा रखती। उनका बाजरा नदी में बहा करता। वह क्रान्ति की देवी कहलाती। फिर वह 'श्रीकान्त' उठाकर पढ़ती और ब्रह्मा की स्त्रियों के हाव-भाव में खो जाती। वह अभया कैसी स्त्री थी! सुना कि ब्रह्मा की युवतियाँ जादू जानती हैं?

रीता तो अपने में नष्ट हो रही थी। वह अपने को सँभाल नहीं पाती थी। 'अंगार' की 'शोभा'। "उसकी आँख के नीचे काले दाग, सिर के बाल रूखे और विवर्ण, पतले-पतले हाथों में नसें उठी हुई; रक्तहीन और कान्तिहीन मुँह! मानो उसके तमाम बदन पर युद्ध के दाग हों। मानों देश व्यापी अकाल के अपमान चिन्ह उसके आँखों और मुख पर रख छोड़े थे।"

शोभना का कहना। शोभना ''''! "पेट की आग से हम नरक-कुंड में उत्तर आए हैं।"

वह रीता अपना सुपना किस से कहे ! वे खड़े गांधीजी, वह भारतमाता, वे लाशें; वह स्वर लहरी; 'के बोले मा तुमि अबले !"

रीता उलझती जाती थी। चतुर गोपी उसके मन में पैंठती चली गई। रीता निसप्राण हो गई। गोपी बार-बार जीवन डालने की चेष्टा करती थी। रीता पींजरे में बन्द सी पंछी थी और उसे अपना स्नेह पालन देती थी। गोपी कहीं रीता के उस बन्धन से छुटकारा चाहती लगती, तो गोपी काँप उठती थी।

रीता ने कहा था कि वह अब 'हिल स्टेशन' नहीं जावेगी।

"क्या रीता ?"

"मुझे वहाँ भला नहीं लगता है। सारा वातावरण कृत्रिम है।

"तो, मैं भी नहीं जा सकती हूँ।" गोपी ने चतुरता से कहा था।

"तू चली जाना।"

"तुझे छोड़ कर।"

फिर रीता बिना किसी बहस के तैयार हो गई। गोपी का डर भाग गया था। क्या वह नहीं जानती थी कि यदि रीता अकेली रहेगी तो सदा के लिए उससे दूर हट जावेगी। गोपी अपनी 'हिंसा' को नहीं पहचान पाती थी। अन्यथा रीता का जीवन नष्ट करने का उसका कोई अधिकार नहीं था। क्यों वह उसकी भावुकता को अपने में समेट लेने, तुल गई है। यदि वह रीता को मुक्त कर दे तो वह लड़की निखर आवेगी। रीता की चाहनाएँ मिटती जा रही हैं। वह एक बाल विधवा का सा आचार बरतना सीख गई है। उसे दुनिया का हल्ला पसन्द नहीं है। वह तो परिवार से भी दूर रहना चाहती है।

गोपी भारी उत्साह के साथ मंसूरी जाने की तैयारी कर रही थी। रीता तो बङ्गाल की अपनी 'स्केच बुक' में फँसी रहती।

कभी-कभी ६ अगस्त की झांकियाँ समझ लेना चाहती थी। वह उसका स्वप्न......। गांधी जी......! उनका जेल के भीतर का अनशन.......। सारी दुनिया अचरज में पड़ गई थी। अंत में गांधीजी की विजय हुई.......। वह रहस्य सा लगा। वह गोपी से इसकी चर्चा करना चाहती थी। देखती कि वह अपनी साड़ियाँ, ब्लाउज्ज तथा अन्य सामान सँभालने में ही व्यस्त रहती है। और किसी बात की ओर ध्यान नहीं देती है।

एक बार गोपी ने उदारता पूर्वक सोचा कि रीता को मुक्त कर दे। वह उस पर अनुचित प्रभाव डाले हुए है! अब रीता गूँगी रहती थी। उसमें कुछ जीवन बाकी नही बचा हुआ था। सब इस परिवर्तन से आश्चर्य में पड़ गए। गोपी का पति जीवित था। वह युद्ध से परेशान सी थी। यह युद्ध उसकी बेचैनी बढ़ा देता है। लेकिन कुछ घटनाओं का ज्ञान भर उसे है। उन एकांकी नाटकों के शीर्षक भर वह जानती है। सच्ची पूरी घटनाएँ कब याद रहती हैं। वह उनको जानकर भूल जाती है। यह युद्ध तो लगता है कि कभी समाप्त ही नहीं होगा। प्रतिदिन नई-नई घटनाएँ उसमें जुड़ जाती हैं। कई-कई घटनाएँ :—

दिसम्बर १६४१ को जापानियों ने पर्लहार्बर, मनीला और हांगकांग पर हमला किया। १५ फरवरी १६४२ को सिंगापुर का पतन। जून १६४४ कोहिमा क्षेत्र से जापानियों का पीछे हटना।

ये घटनाएँ उसके जीवन को कब छू पाती हैं। रोज इतनी घटनाएँ उठती हैं। वह सब कुछ भूलती जाती है।

गोपी और रीता उस 'हिल स्टेशन' का कोना-कोना छान रही हैं। दूकानों में नए फैशन और नए डिजाइन की चीजें हैं।

मैदान से घूमने के लिए आए हुए परिवार संध्या को चींटियों की कतारों की भाँति सड़कों पर फैल जाते हैं। कभी तो आकाश मेघों से घिर जाता है। एकाएक बूँदाबाँदी शुरू हो जाती है। जब सुनहरी धूप निकलती है तो चारों ओर बहुत सुहावना लगता है। होटल में उनके पास ही एक मारवाड़ी परिवार टिका हुआ है। गोपी ने उनकी छोटी लड़की से दोस्ती करली है। वह कभी-कभी चाकलेट पाकर मारवाड़ के गीत सुनाती है। रीता तो ऊब उठती है। गोपी को गीत सुनने का शौक हो गया है। रीता कुछ न समझ कर कहती है, "घूमने चलोगी।"

"क्या बजा है!"

"पाँच बज गया है।"

हैकमैन, सिनेमा, कुलड़ी बाजार, घंटाघर, लंढ़ोरा बाजार, घने देवदारु के जङ्गलों के बीच के रास्ते; चकरोता की सड़क···। घूमना-घूमना और घूमना! वहाँ की हरियाली कभी कभी हृदय के घाव को ठेस लगाकर दुखा देती है। गोपी चुप रहती है और रीता उन देवदारु के ऊँचे-ऊँचे पेड़ों को आँखें फाड़-फाड़कर देखती रह जाती है। सड़कों पर एक नए समाज के लोग दीख पड़ते हैं। जिनको देख कर लगता है कि मानो देश बहुत धनी हो। गोपी तो नए-नए डिजाइन देखा करती है। नुक्ताचीनी करने में प्रवीण है। रीता सोचती है कि यह सब झूठी-झूठी दुनिया है। लाखों लोग भूखे देश में मर रहे हैं। चालीस लाख तो एक-एक दाने के लिए तरस-तरसकर मर गए। यह कैसी विभिन्नता है। भूख से तड़प-तड़प कर मर जाना। यहाँ कौन उस बात पर विश्वास करेगा। एक बार उसने चाहा था कि अपनी 'स्केच बुक' हर एक रमणी को दिखलाकर बंगाल के अपाहिजों के लिए चंदा कर ले। यह भेद की बात जब गोपी को सुनाई तो वह हँस पड़ी थी।

कहा था गोपी ने, "रीता ये राज परिवार, ताल्लुकेदार, जमींदार आदि घरानों की बहू-बेटियाँ हैं। इनको किसी से सहानुभूति नहीं होती है। यहाँ ये हजारों रुपए खर्च करके मौज उड़ाने आती हैं।"

रीता ने वह 'स्केचबुक' अपनी अटेची पर संभाल कर रख दी थी। कई बार मध्य रात्रि को लगता कि उस अटेची के भीतर से कराहने का स्वर उठ रहा है। दिल में वह फैल जाता था। बच्चों का रुदन···वह लाचार पड़ी ही रहती। ब्रह्मपुत्रा, दामोदर और गंगा की वह धरती···। वह उसे भूलना चाहकर भी भूल नहीं सकती थी। उसका मन कभी तो उन हजारों बच्चों के पास पहुँच जाता था। वे असहाय पड़ी माताएँ···। कभी-कभी लगता था कि वे लाखों मुरदे उठकर उनके होटल को घेरकर चिल्ला रहे हैं—भूख ! भूख !! वह घबरा कर चीख उठती थी।

जग पड़ी थी गोपी। पूछा था, "क्या बात है रीता ?"

रीता गुमसुम सी थी। उसका चेहरा सुफेद पड़ गया। उसका सारा शरीर काँप उठा। कुछ देर बाद सावधान होकर चुपके बोली वह, "सुन रही है जीजी।"

गोपी ने तो कुछ नहीं सुना। बोली गोपी, "कुछ नहीं है। बाहर मेंह की झड़ी लगी है। पहाड़ी बरसात ऐसी ही होती है।"

भला रीता कब मानने वाली थी। उसने सिरहाने से टॉर्च उठाई। गोपी के साथ बाहर निकली। चारों ओर घना अंधियारा था। मेंह की झड़ी लगी हुई थी। हवा के तेज झोंकों से कभी-कभी कोई उखड़ी हुई टीन बज उठती थी। रीता उसे भ्रम कैसे मानले। क्या वह स्वर उसकी अपनी कल्पना थी। वह चुपचाप भीतर लौट आई। गोपी ने पाया कि रीता बहुत डरी

हुई है। उसकी आँखों में भय था। उसने उसका सिर अपनी गोदी में लेकर कहा, "क्या बात है रीता ?"

रीता के अनायास आँसू बह निकले। वह फफक-फफक कर रो उठी। गोपी कुछ देर तक उन बहते हुए आँसुओं को पोंछती रही। जब वे थम गए तो कहा, "क्या है री बावली ?"

"जीजी वे बंगाल के लोग।"

"तू तो अपने बंगाल के पीछे दीवानी हो गई है। अच्छा यहाँ कोई प्रबन्ध करेंगे। मैं लोगों से मिलकर एक 'म्यूजिक कॉन्फरेन्स' का आयोजन करूँगी, शायद कुछ रुपया मिल जाय।"

रीता चुप रही।

कहा गोपी ने, "दस हजार तो आसानी से जमा हो जावेंगे।"

दस हजार…! दस व्यक्तियों की रक्षा होगी, सोचा रीता ने। चालीस युवतियाँ वेश्यालयों में जाने से बच सकेंगी। पचास बच्चों की रक्षा शायद कुछ दिन हो जाय। वह अपने मन में हिसाब लगाने लगी। इस वैभव शाली 'हिल स्टेशन' से केवल दस हजार ! जब कि लोग लाखों व्यर्थ फूँक रहे हैं।

अब कहा गोपी ने, "दो बजे होंगे। सुबह इस पर विचार करेंगे। मेरे बैंक के हिसाब में तो एक पैसा नहीं बचा हुआ है। नहीं तो कुछ मैं दे देती।"

रीता उसी भाँति मूक थी।

कहती रही गोपी, "रीता ६ अगस्त को भारत के पूँजी पतियों ने लाखों रुपया उस क्रान्ति के लिए दिया था। वह उनका अपना स्वार्थ था। यह अकाल भी मनुष्य का ही रचा हुआ है। मुनाफा कमाने के आगे वे मानवता को भूल जाते हैं।"

रीता कुछ नहीं बोली। चुपचाप सो गई।

गोपी को रीता की बातों से भय लगने लगा। रीता कहती है कि सुपने में उसने मुर्दों की एक बड़ी कतार देखी थी। कभी सुनाती कि नग्न बच्चे और औरतों की ढेरियाँ लगी थीं। गोपी का कठोर सा दिल काँप उठता था। रीता से वह सब बातें सुनती है। वह बच्चों वाली सरलता से बातें करती है। उसका कुतूहल मन को मोह लेता है। वह उसकी बातें आसानी से नहीं भुला सकती है। पहले यह रीता बहुत निडर थी, लेकिन आज''' ।

रीता की उस हालत पर गोपी को बहुत दुःख होता है। उसका पति तो सिंगापुर में कैदी है। क्या वह सुभाषबाबू की आजाद-फौज की किसी टोली के साथ चुपचाप 'पैराशूट' से भारत में कूद पड़ेगा। वह काँप उठती है। पिछले दिनों एक समाचार छपा था कि जापानियों ने कुछ भारतीय सैनिक 'सब मेरिन' से भारत भेजे थे। वे पकड़े गए और''''''। युद्ध की कई सी अनहोनी बातें! क्या जर्मन वाले गैस चलावेंगे? जापानी बमों के साथ सिपाहियों को भेजते हैं। वे कितने जीवन मुक्त लोग हैं। प्राण गँवा देना आसान नहीं होता है। वे बड़े खूँखार सिपाही होते हैं! उनको मौत का खौफ नहीं होता है।

सारा 'हिल स्टेशन' सैनिकों से भरा सा लगता है। कोई जहाजी, तो दूसरे हवाई बेड़े के हैं। उनकी अपनी-अपनी वर्दियाँ चमक उठती हैं। वह बार-बार ललचाई आँखों से उनको देखती है। उसने अपने पति का सैनिक वेश भी देखा था। वह आज बीती सी बात लगती है। मानो कि झूठी ही हो। वह इन सैनिकों को देखती है, वे स्वतंत्र हैं। मस्त रहा करते हैं—बिलकुल जीवन मुक्त! मानो कि उनको कोई चिन्ता न घेरती

हो। क्या सब इसी धातु के बने होते होंगे। उसका पति····! नहीं, उसे विश्वास नहीं आता है। वे ऐसे नहीं थे।

रीता ने गोपी को कॉन्फरेन्स करने के लिए सच ही बाध्य कर लिया था। वे दोनों एक बुकस्टाल पर आवश्यक सामग्री क्रय-करने के लिए गई थीं। एकाएक उसकी नजर एक पुस्तक पर पड़ी—'सैनिकों के लिए मनोविज्ञान की शिक्षा!' गोपी उसे खरीद कर ले आई। वह उसका एक-एक अक्षर पढ़ लेना चाहती थी। रीता ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। वह तो बड़े-बड़े 'पोस्टर' बनवा रही थी। उनपर बंगाल की रक्षा के लिए सहायता की माँग अंकित थी। लिखा था कि बंगाल की रक्षा भारत की रक्षा करना है।

गोपी का पुस्तक का वह ज्ञान! सैनिकों की स्मृति बार-बार अपने परिवारों की ओर मुड़ती है। वे अपनी संगिनी के लिए तड़पते हैं। यदि पत्नी का एक पत्र मिल जाय··। घर की याद, घर लौटने की भूख···!

उसने पन्ना पलटा। वे वाक्य मन को व्याकुल बना रहे थे। लिखा था कभी-कभी दूसरे देशों की रमणियों के साथ···। नए पन्नों पर कुछ जहरीली गैसों के नाम भर थे। कड़वी और मीठी गैसें···। फिर पन्ना उलटा—प्रचार से मनोवैज्ञानिक युद्ध करने में सफलता मिलती है। रेडियो और प्रेस···झूठी अफवाएँ··· मृत्यु का भय, सामने शत्रु की मसीन गनें, ऊपर शत्रु के बम्बर··· । चारों ओर घिर जाना; मृत्यु! मृत्यु का खौफ!!

अफवाहें कल्पना के भीतर पैंठ सकें तो उनका अच्छा असर पैदा होता है। शत्रु कल्पनाओं द्वारा अफवाहों का प्रभाव डालता है। नए-नए देशों में जाना, नए धर्म, नई रीति-रिवाज, नया रहन-सहन, नई आबहवा··· । भूगोल का नया ज्ञान! वहाँ की जनता के बीच रहना!

सैनिक जीवन, उनके लिए मनोविज्ञान का ज्ञान ! चीनी किसान कैमरा से घबराता है। फिर वही सैनिकों का अपने घर से स्नेह···'बच्चों की ममता, परिवार के निकट रहने का मोह, दूसरे देशों के वेश्यालय''' ।

गोपी ने पुस्तक बन्द करदी । साढ़े-पाँच सौ पन्ने की मोटी पुस्तक थी। उस पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा हुआ था—सैनिकों के लिए मनोविज्ञान ! अपने तथा औरों के बारे में क्या क्या जानना चाहिए। बाहर एक सैनिक की तसवीर थी। उसके हाथ पर 'टॉमीगन' थी। भीतर कई दूसरी तसवीरें थीं। उनमें बम्बर, फाइटर, ऐंटि-इयर-क्राफ्ट-गन, टैंक, आदि के साथ सैनिक दुश्मन की फौज पर धावा बोल रहे थे। अन्तिम पेज पर एक समुद्री हमले की तसवीर थी।

रीता आई। उसके हाथ में दो-तीन 'पोस्टर' थे। पुस्तक को देखकर बोली, "अच्छा मिलिटरी विशेषज्ञ बन रही है।"

रीता ने किताब लेली थी।

गोपी को रीता की वह पहुँच भली नहीं लगी। लेकिन वह एकान्त की भूखी कहाँ रह गई है। भला, वह तो बरांडे में बैठी हुई थी। उसने रीता से किताब लेली और भीतर अपने कमरे में चली गई।

रीता की समझ में यह बात नहीं आई। कुछ देर वह खड़ी रही और अन्त में चुपचाप जीजी के पास भीतर पहुँच गई।

गोपी आइने के सामने खड़ी-खड़ी बाल काढ़ रही थी। कैस्टर आयल की भीनी महक कमरे में फैली मिली। रीता दरवाजे पर आकर रुक गई। गोपी ने कहा, "क्या बात है रीता ! शायद सात बजे वहाँ जाना है न ! यही तय हुआ था।"

"कहाँ ?"

"कलक्टर से इजाजत लेनी है न !"

"मैं बिलकुल भूल गई थी।"

"अब तक कितने के टिकट बिके हैं।"

"चार हजार के लगभग•••।"

"आज 'स्पेशल' के कुछ और ले लेना। कुछ फौजी अफसरों को देने हैं।"

"तभी क्या तू सैनिक मनोविज्ञान पढ़ रही थी।" रीता हँस पड़ी।

वह हँसी चुभी नहीं। वह सरल थी ! व्यंग नहीं था। सोचा उसने कि वह उस रीता के साथ मकड़ी और तितली वाला खेल खेल रही है। रीता भय पाकर कै दिन चलेगी। वह जीवन से दूर-दूर भागती जा रही है। कहीं वह चटक गई तो ! रीता की हँसी में वह जीवन नहीं सा पाती है। वह मानो निचुड़ गयी हो। गोपी आज रीता को अपने प्राणों की गति के अतिरिक्त और कुछ नहीं पाती है। अपने में उसने उसे बाँध लिया है। वह कैदी है। गोपी माया रचती है। रीता वहाँ दीख पड़ती है। वह रीता को बहुत प्यार करने लगी है। पति से भी अधिक। पति को वह रीता के सम्मुख भूल सी जाती है।

"तुम चुप क्यों हो गई जीजी।"

"क्या रीता ?"

"तू विशेषज्ञ हो गई है।"

"चार हजार के टिकट बेचकर····।"

रीता खिलखिला कर हँस पड़ी।

"रीता !"

"क्या है जीजी ?"

"मैं सोच रही थी रीता कि कहीं तेरे जीजाजी ने कोई ब्रह्मी या मलाया वाली न रखली हो। वह नया घर···।"

"चुप जीजी।"

"वे जादू-टोना जानती हैं।"

"चुप भी रह जीजी।"

गोपी एकाएक गंभीर हो गई। बोली, "जा रिक्शा मँगवाले मैं तब तक तैयार हो जाऊँगी।"

रीता बाहर चली गई। गोपी ने वह मोटी पुस्तक सिरहाने सँभाल कर रखदी। सोचा कि वह उसे खूब पढ़ेगी। आज उसे एक नया ज्ञान हुआ था। उसे रीता की हत्या करने का कोई अधिकार नहीं है। वह उसका अपने लिए बलिदान नहीं करेगी। रीता को जीवित रहना ही चाहिए। वह स्वयं प्राण बटोर लेगी। गोपी उसके जीवन के साथ कोई खेल नहीं खेलेगी।

रीता आ गई, तो गोपी उठ बैठी। दोनों रिक्शे पर बैठ गईं। रास्ते में पूछा रीता ने, "प्रोग्राम क्या होगा?"

"वहाँ से होटल।"

"जीजी नाच तो चार ही हैं।"

"कम थोड़े ही हैं।"

"साढ़े चार घंटे का प्रोग्राम है।"

"कल दो और ठीक करवा दूँगी।"

रीता चुप थी। रिक्शा सड़क पार कर रहा था। वही चोर बाजार, जहाँ सब चीजें ऊँचे दामों पर आसानी से मिल जाती हैं। होटल और रिस्टोरेंट की चहल-पहल। वह स्केटिंग वाला बड़ा हॉल, जहाँ कि भीतर से हँसी के फुहारे छूट रहे थे। रीता सब कुछ देख रही थी। गोपी को यह सारा आडम्बर झूठा लग रहा था। मानों कि उस 'हिल स्टेशन' का निर्माण एक अहम-वादी वर्ग के थोथे अभिमान की रक्षा के लिए हुआ हो। उनकी अस्वस्थता वहाँ दीख पड़ती थी। वहाँ उनके रूढ़िवादी सामन्ती

विचारों की भित्ति चूर-चूर हो जाती थी। सारा वातावरण कृतिम लगता था। वे छै कुली उस रिक्शे के साथ हाँफते हुए दौड़ रहे थे। वह उनकी शक्ति का कैसा शोषण था? वे अपने परिवारों से दूर यहाँ पेट के कारण आए हैं। कड़ी मेहनत प्रतिदिन करते हैं। उनका कैसा जीवन है?

रिक्शा ऊँचाई पर बढ़ रहा था। गोपी अपने भीतरी ज्ञान से मनुष्य के इस न्याय पर विचार कर रही थी। याद आती थी रीता की कही बातें कि, ६ अगस्त की क्रान्ति जनता की सही क्रान्ति नहीं थी। उसको जनता ने नहीं उठाया था। कुछ जापानी एजन्टों ने जनता को उकसाया था। वह खेल खतम हो गया। जनता उलझन में पड़ गई। पहले जनता को किसी ने कभी ऐसी क्रान्ति के सबक नहीं पढ़ाए थे। गोपी को उसकी बात सच लगी। इस युद्ध पर उसने कभी विश्वास नहीं किया। वह जानती है अंग्रेज और अमरीका वाले अपने माल बेचने के लिए नए-नए देश चाहते हैं। गुलामी भारत के माथे से आसानी से नहीं हटती है। वह आजादी से दूर है।

अब वे घने बन को पार करने लगीं। रिक्शा एक बंगले में घुस गया। चारों ओर सुन्दर फूल खिले हुए थे। रीता उतर कर बोली "कितनी सुन्दर क्यारियाँ हैं?"

गोपी आगे बढ़ी।

कॉन्फरेन्स की सफलता के लिए गोपी ने रीता को बधाई दी थी। रीता ने सोलह हजार का 'डाफ्ट' भेजा था। गोपी ने एक छोटी 'पार्टी' का आयोजन किया था। रीता इसकी पक्षपाती नहीं थी। गोपी से वह कुछ बोल नहीं सकी। गोपी रात-दिन कार्य में व्यस्त रही थी। रीता उसकी कार्य शैली देखकर दङ्ग रह

जाती थी। वह अचरज में पड़कर सोचती कि गोपी में इतनी शक्ति कहाँ से आ गई है। गोपी से रीता कुछ पूछती तो वह कहती थी, "क्या बात है रीता। सब काम ठीक-ठीक हो रहा है। तू तो कान्फरेन्स की रानी है। हुकूमत भर चलाया कर।"

"जीजी मेरी।" गद्‌गद हो कहती थी रीता।

गोपी उसे अपनी छाती से लगा लेती थी।

पार्टी का आयोजन गोपी ने किया था। रीता और उसकी चुनी हुई सहेलियाँ आई थीं। सिविल और फौजी अधिकारी भी थे। रीता ने तो आश्चर्य से देखा था कि वह अपने उसी पुराने आइ० सी० एस० साथी के साथ बैठाई गई थी। वह अजरज में पड़ गई। गोपी भी वहीं बैठी। रीता बार-बार सोचती थी कि वह सारी सफलता गोपी की मेहनत का फल था। लेकिन गोपी सबसे कहती थी कि रीता एक कुशल कलाकार है। उसके हृदय में इसीलिए बंगाल के प्रति सहानुभूति उठी थी।

चुपके पूछा था गोपी ने, "अब तो सुपने नहीं देखती।"

"क्या गोपी जीजी ?"

गोपी खिलखिला कर बोली, "भारतमाता, गाँधीजी और वे मुर्दों की ढेरियाँ !"

"जीजी।"

गोपी उठकर चली गई। अब वह उस युवक के साथ अकेली छूट गई थी। गोपी इस तरह क्यों चली गई। सामने वह किसी से चुटकी लेकर हँस रही थी। वहाँ कुछ मिलिटरी वाले तथा उनकी पत्नियाँ बैठी हुई थीं। एकाएक रीता भय से काँप उठी। वह देख रही थी गोपी जीजी एक बार फिर 'देवी चौधरानी' बनी सी बैठी है। उसे कभी विश्वास था कि जापान

भारत में आकर स्वतंत्रता की बयार बहा देगा। वह सब बात झूठी निकली। वह तो बंगाल के अकाल का मजाक उड़ाती थी कि गुलाम भूखे मरना पसन्द करते हैं। क्रान्ति करके मरना उनके भाग्य में नहीं लिखा था। यदि चार लाख ने भी अगस्त क्रान्ति में भाग लिया होता तो देश आजाद हो जाता। वही गोपी आज···।

रीता का मन अनायास खिल उठा। आज जीजी ने उसे बल प्रदान किया था। उसे उबारा भी था। बंगाल की सहायता करके देश की रक्षा की थी!

—वे बड़ी रात को पार्टी से लौटी थीं। चुपचाप पैदल चल रही थीं। एकाएक गोपी ने रीता का हाथ अपने में ले लिया। कहा, "एक बात कहूँ।"

"क्या जीजी?"

"मैं तुझे दान देने की सोच रही हूँ।"

"कैसा दान?"

"बंगाल के लिए।" वह खिल खिलाई।

"क्या कह रही है जीजी।"

"यही न कि तेरी शादी अगले महीने होगी। उसी के साथ।"

"जीजी! जीजी!!"

"यह मैंने बहुत सोच-विचार कर तय किया है। तेरी कुछ नहीं सुनूँगी।"

देखा था रीता ने कि गोपी की आँखों की पलकें भीज गई थीं। वह अवाक उसे देखती रह गई।

—गोपी तो उलझन में सोच रही थी कि क्या यह उसकी असफलता थी?

संक्रान्ति

प्रदीप स्टेशन पर गाड़ी की प्रतीक्षा में खड़ा था। गाड़ी नियत समय से कुछ घंटे देर के बाद आने को थी। वह रेल का अन्तिम स्टेशन है। उसके बाद 'हिल-स्टेशन' को लारियाँ तथा बसें जाती हैं। प्लेटफार्म से बाहर कई मिलिटरी ट्रक खड़े थे। कई व्यापारी मोटर कम्पनियों की बसें और कारें भी खड़ी थीं। स्टेशन पर कोई खास चहल-पहल नहीं थी। कुली जानते थे कि गाड़ी 'लेट' है। वह तो अनजान सा वहाँ चला आया था। आते ही उसने सुबह का समाचार-पत्र क्रय किया और एक बेंच पर बैठकर सरसरी नजर सब पन्नों पर डाली थी। फिर वह कुछ समाचारों के भीतरी तह में पैठने की चेष्टा करने लगा था। ग्रीस में गृहयुद्ध हो रहा था। चर्चिल उस वर्ग में से वहाँ की जनता के विरोधी दल की सहायता कर रहा था। उसकी दृष्टि में वह जनता का दल लुटेरों का संगठन था। फिर प्रदीप मन में कुछ सा टटोलने लगा। उस दूसरे वर्ग में जनता के छापेमार सिपाही थे। उन लोगों ने नाजियों को देश से हटा कर आजादी हासिल की थी। अपना सब कुछ खो दिया था। लेकिन यह विडंबना कि वे लुटेरे थे!

वह तो जानता है कि जनता के विचारों पर प्रभाव डालने, उनको बहकाने और उनके विचारों को नष्ट करने में प्रेस से बढ़कर दूसरी शक्ति उपयोग में नहीं लाई जा सकती है। समाचार पत्र, सिनेमा और थियेटर की भाँति ग्राहकों को पहचान कर उनके मन के अनुसार समाचार छापे में ढाल देते हैं। यदि देश पर कोई विपत्ति आ जाय तो वे भाग्यवादी रचनाओं का

प्रकाशन करेंगे। खून, चोरी, डकैती आदि सनसनी पैदा करने वाले समाचारों को भी वे देते हैं। सन् १६३६ का युद्ध का समाचार अपेक्षित सा लगा, यद्यपि लोग सोचते थे कि शायद फिर म्यूनिख की तरह कोई संधि हो जायगी।

उसने वह अखबार रख दिया। फिर शून्य सा चारों ओर देखता रहा। वे ही रेल की पटरियाँ, वे ही इधर-उधर लाइनों पर खड़े सवारी और मालगाड़ी के डिब्बे! शंटिंग करते हुए इंजन। वही रोज का सा जीवन। प्लेटफार्म पर बड़े-बड़े पोस्टर दीवारों पर चिपकाए हुए थे। एक में टेकनिकल रिकर्यूटमेंट डिपार्टमेंट द्वारा नवयुवकों को आश्वासन दिया गया था कि अपना भविष्य उज्वल बनाने के लिए उनको वायरलेस, मेकनिकल इंजीनियरिंग, तथा अन्य कई कामों की शिक्षा लेनी चाहिए। हरएक विद्या आठ-दस महीने में आसानी से आ जाती है। उसके बाद खाकी वर्दियों वाले फौजियों पर उसकी आँखें अटक पड़ती थीं। वे इधर-उधर स्वच्छन्द से घूम रहे थे। प्रदीप को यह युद्धकाल अजीब सा लगता है। वह युद्ध के बारे में केवल कुछ सुनता ही है और अनुभव करता है कि चीजें चोर बाजार में मिलती हैं। कीमतें तेजी से बढ़ती चली जा रही हैं। दूकानों से माल गायब हो गया है। वे खाली नजर पड़ती हैं। जनता को अपनी आवश्यकता की चीजों का अभाव अखरता है। फौजियों को पहले सब सहूलियत दी जाती है।

वह मंजुल तो ··; मंजुल ··! वह न जाने क्यों उसके प्रति वाला आकर्षण नहीं भुला पाता है। आज भी मंजुल कुछ कह दे, वह स्वीकार कर लेगा। मंजुल आसानी से सारी बातें कह देती थी। वह कोई झिझक नहीं बरतती है। बातों को उलझा देना भी उसका स्वभाव नहीं है। प्रदीप तो अपने हृदय में उसका

कोई नारी रूप छुपाए हुए है। क्या वह उसके मन का पाप नहीं है। लेकिन वह कहेगा कि मंजुल तो स्वयं वहाँ आकर कभी-कभी चुपचाप छुप जाती है। वह अनुभव सा कुछ करता है, तो वह भागती है। उसमें कोई खास परिवर्तन नहीं होता है। वह कब चाहता है कि मंजुल वहाँ आया करे। वह रूढ़िवादी प्रेम और रोमांचकारी भावनाओं पर विश्वास नहीं करता है; जब कि लड़कियाँ जूलियट, लैला, शीरी आदि कहलाती थीं। और लाखों प्रेम कहानियाँ, इतिहास के पन्नों में ढकी पड़ी हुई हैं। तो फिर वह मंजुल...! मंजुल कब केवल एक नाम ही था! कोई और नाम उसे याद क्यों नहीं पड़ता है। वह व्यर्थ अपने मन की बसाई दुनिया में रहा करता है। मानों कि आज भी सुनहरी तितलियाँ पकड़ने का लोभ बाकी हो। अन्यथा यह मंजुल न जाने किस पिछली मंजिल पर छूट गई होती। व्यक्ति तो आगे बढ़ जाता है। समाज भी तो प्रगति करता आया है। पुराने विचार और मान्यताएँ, नए रूप और कलेवर में बदल जाती हैं। उसे कहते हैं सामाजिक क्रान्ति.....।

प्रदीप खड़ा-खड़ा देख रहा था। देखा उसने कि घंटी बजी और सिगनल का हाथ भी झुक गया था। कुली पाँती लगाकर बैठ गए। लाहौर वाली गाड़ी आ रही थी। उसका उस गाड़ी से कोई सम्बन्ध नहीं है। गाड़ी जब प्लेटफार्म पर पहुँची तो वह कुतूहल वश आगे बढ़ गया। एक बार उसने हर एक डिब्बे पर नजर डाली। वे फौजी.....। एकाएक इस युद्ध ने नागरिकों के बीच एक नया वर्ग ला दिया था। पहले वह नहीं दीख पड़ता था। आज तो वह पाता है कि युद्ध ने सच ही उनका सारा जीवन ढक लिया है। वे निर्जीव से शहरों के भीतर किसी भाँति दिन काट रहे हैं। और ये फौजी.....!

सिपाहियों की एक बड़ी कतार सी लगी थी। स्ट्रेचर, स्ट्रेचर

और स्टेचर ! उसकी निगाह कुछ डिब्बों पर पड़ी। रेडक्रास ······! एक-एक करके घायल बाहर निकाले गए। किसी की टांग, किसी की आँख, किसी के माथे पर पट्टी थी; यानि हरएक घायल था। एक की टांग कटी थी, दूसरे का हाथ कटा हुआ था—सैकड़ों युद्ध से लौटे हुए घायल थे···। रेडक्रास की गाड़ी···। हिन्दुस्तानी सिपाही—मद्रासी, बंगाली, डोंगरे, सिख, मराठा, नैपाली पठान···; और मुसाफिर पंजाबी, सिंधी, काश्मीरी···; सब वर्गों के लोग थे। वह बड़ी भीड़ धीरे-धीरे छटने लगी। कुछ देर के बाद पाया प्रदीप ने कि वह अकेला है और उसके हाथ पर सुबह का दैनिक समाचार पत्र है। जिसके मुख पृष्ठ पर चर्चिल का फोटो है और उसका कथन छपा हुआ था कि अब ग्रीस पर उनका पूरा अधिकार हो गया है। वे वहाँ के भाग्य-विधाता बन गए हैं।

यह युद्ध······! मानव को आदि काल से संघर्ष करना पड़ा है। उसका पहला संघर्ष था प्रकृति से। वह उसकी बलवती शक्तियों के आगे अपने को निर्वल पाता था। धीरे-धीरे कबीलों के आपसी युद्ध हुए। हारे हुए लोग दास बने। यह भारत भूमि···; शहरों में युद्ध हुए थे; सम्राट बदले, लाखों व्यक्तियों की हत्याएँ हुईं। परिवर्तन भी कई आए। लेकिन गांवों पर उनका कोई असर नहीं पड़ा। वहाँ के सामाजिक जीवन के अङ्ग गाँव के कुम्हार, लोहार, नाई, जुलाहे, सुनार, बढ़ई आदि ही रहे। गाँव के उस ढांचे पर पहला प्रहार ईस्ट इंडिया कम्पनी ने किया था। वहाँ महाजन और बनिए का निर्माण हुआ। लोग बाहर का माल व्यवहार में लाने लगे। लोगों की आवश्यकताएँ बढ़ती गईं और वे गरीब होते चले गए।

सन् १६१४ में तो जैसे ही युद्ध की संभावना होती थी, समाचार पत्र उतना ही जनता की आँखों में धूल झोंकते रहते

थे कि यह सम्भव नहीं है। वे आकर्षक सिनेमा, सरकस, थियेटर आदि का विज्ञापन निकाल कर, खेलों तथा अन्य आमोद-प्रमोद के विषयों पर लेख लिखते थे। उस आने वाले युद्ध की चर्चा कहीं नहीं रहती थी। वह युद्ध तो डाकुओं की तरह चुपके आया था। सोई जनता आश्चर्य चकित रह गई थी। वह उस युद्ध के लिए मानो तैयार नहीं थी। आज फिर १९३९ का यह युद्ध। पाँच साल से अधिक बीत गए थे। जीवन में कोई तत्व बाकी नहीं बचा हुआ है। रोजाना जीवन में कोई उत्साह नहीं है। चोर बाजार को रोकने और रेलों में कम सफर करने वाली शिक्षा के विज्ञापन समाचार-पत्रों में प्रकाशित होते हैं। नागरिकों को पग-पग पर चोर-बाजार में ठोकरें खानी पड़ती हैं। इस ओर से सब उदासीन से लगते हैं। फिर वह 'डिफेन्स ऑफ इंडिया रूल' की धाराएँ! जिनका विस्तार कि पूतना राक्षसी से किसी भी हालत में कम नहीं है।

वह राकेश कहता था, "प्रदीप आज हमारे पास हथियार नहीं है कि हम भी छापेमार सिपाहियों की तरह लड़ सकें। हमें तो पंगु बना दिया गया है।"

मंजुल, भी चुपचाप सुनती रहती थी। प्रदीप उस मंजुल को खास सा नहीं जानता था। वह उसके परिवार से कुछ दूरी पर रहती थी। उसकी भाभी की मामा की लड़की। साँवली पर चेहरा साफ था। बातें करने में बहुत पटु थी। भाभी कहती थी कि मंजु जहाँ जावेगी, तूफान लावेगी।

बात सच होगी, एक दिन अनायास उसके सिर में दर्द हुआ था। इसी समय मंजुल कहीं से आ गई। वह चुपचाप लेटा था। मंजुल सुनकर माथा अनायास सी दबाने लगी। वह माथा दबाती-दबाती ही रही। तो कहा था प्रदीप ने, "हाथ थक गए

होंगे। अब दरद भाग गया है। तू तो जादू जानती है, फिर भला...।"

वह हँस पड़ी थी। प्रदीप को उसने मोह लिया था। उसने चुपके पूछा था, "मुझसे शादी करेगी मंजु। तुझे अच्छी तरह रक्खूँगा।"

लेकिन वह तो हँस कर बोली थी, "राकेश ने भेजा है मुझे, कहा है कि पुलीस-लाइन्स वह गया था। कुछ सिपाही साथ देने के लिए तैयार हैं। सरकार को खुद हिन्दुस्तानी पुलीस पर विश्वास नहीं है। वे फौजें और गोरी पलटनें बुलवा रहे हैं। वे एक थाने पर हमला करने की सोच रहे हैं।"

"मंजुल!"

"वे न जाने कहाँ से तीस-चालीस लड़कों को पकड़ कर ले आए हैं। अपनी उँगली से खून निकाल कर उन्होंने सब को तिलक दिया। मुझे बीच में खड़ा करके माला पहिनाई और बोले—साथियों यह भारत माता है। सब शपथ लो कि इस क्रान्ति से या तो आजादी लेंगे या फिर मर जावेंगे।"

मंजु की वह बात समझ में नहीं आई थी। राकेश कब किसी की मानता था। जब मंजु चली गई तो सोचा था प्रदीप ने कि मंजु उसी की है। यह सब जानते हैं। उसके पिता रिश्ते की बात उठा चुके हैं। भैय्या ने मना नहीं किया। शायद जाड़ों में शादी हो जायगी। क्या फिर यह मंजु इसी भाँति उड़ती फिरेगी। या उसके पंख कट जावेंगे। प्रदीप उसके पंख काटने का पक्षपाती नहीं है। उसका जीवन तो है, मंजु की वह स्वतन्त्र मुसकान!

ये प्रेम कहानियाँ....; ये आदि काल से ही चली आई हैं। कबीलों से परिवारों में आईं। आगे उनका स्वरूप अधिक नहीं बदला। वह उस पर सोचना चाहता है कि क्या वह

कल्याणकारी भावना है ? फिर यह युद्ध, हिटलर का ग्रीष्म आक्रमण शुरू हो गया था। उसकी सेना एक ओर लीबिया से होकर सिकन्दरिया और स्वेज नहर की ओर बढ़ने को थी, तो दूसरी काकेशिया की पहाड़ी पार करने तुल चुकी थी। जापान भी भारत के पूर्वी दरवाजे से झाँक रहा था।

राकेश कहता था, "अब शायद स्वतन्त्रता मिल जाय।"

प्रदीप ने सदा राकेश की बात स्वीकार की थी। पर आज वह उसकी बात पर तर्क करता हुआ अविश्वास प्रकट करता था। राकेश फिर भी बार-बार सुनाता था कि उनको सफलता मिल रही है। यदि कुछ टामीगन और मशीनगन हाथ लग जातीं; तो वे पूरी मोरचाबन्दी कर सकते थे। उनके तीन साथी गोलियों के शिकार हुए थे। राकेश का कहना था कि वे 'डम-डम बुलेट' थे जो कि शरीर के भीतर मुड़ कर निकल जाते हैं। वे बहुत खतरनाक होते हैं। एक रात तो उसने सुनाया था कि बिहार में कुछ स्थानों पर हवाई जहाज से गोली बरसाई गई हैं। जनता फिर भी उसी भाँति शांत रही। सब ने हँस-हँस कर गोलियाँ खाई थीं।

—प्रदीप जानता है कि मुसोलिनी का वह अफ्रीका का साम्राज्य मिट गया है। उसने इटैलियन कैदियों को देखा था। वे सुन्दर बारीकों में रहते हैं, उनके आमोद-प्रमोद के लिए सिनेमा की व्यवस्था है। उनको खाने के लिए गाड़ियों में लद-लद कर शाक-भाजी, फल, डबल रोटी, मक्खन आदि जाता है। जब वे कभी लौट कर घर जावेंगे, तो क्या वहाँ की जनता से कहेंगे कि यह युद्ध असफल रहा है। लेकिन वह तानाशाह, जो सैनिक बल पर फूला करता था, किसानों के उस विद्रोह का सामना कर सकेगा !

युद्ध के कैदी और युद्ध से लौटे हुये घायल सिपाही ! शहर

में रोज वह युद्ध की नई-नई खबरें सुनता है। जर्मन और इटली के कैदी अफसरों की बातें, कभी-कभी जनता तक पहुँच जाती हैं। लेकिन वह विद्यार्थियों की क्रान्ति……। वह शहर में उठा हुआ राजनीतिक तूफान ! प्रदीप दो साल जेल में रहा है। वे दो वर्ष आसानी से नहीं कटे थे। वह तो सदा वहाँ अपने को खाली-खाली सा पाता था। जेल की लाइब्रेरी में कुछ बहुत पुराने अँग्रेजी के उपन्यास थे। उनसे ज्ञान की वृद्धि नहीं हो पाती थी। वहाँ उसे सैकड़ों व्यक्तियों से मिलने का अवसर मिला था। कई वर्ग के कैदी थे, जिनमें बुद्धिवादियों में उसने सहानुभूति का सर्वथा अभाव पाया।

वह रामलाल नामक कैदी के बहुत समीप आ लगा था। वह गाँव का एक किसान युवक था। उसने एक लड़की की हत्या इसीलिए की थी उसने उससे शादी करने का वचन देकर, फिर उदासीनता ठानी थी। वह पहले उससे प्रेम करती थी, किन्तु सुन्दर कपड़े और चांदी के गहनों पर रीझ कर वह गाँव के एक बनिए के घर बैठ गई थी। रामलाल ने सुनाया था कि किस भाँति वे दोनों चाँदनी रात में बैठा करते थे। कभी कभी वह लड़की घास का गट्ठड़ लादकर खेतों से लौटती थी। वह उससे खूब छेड़खानी करता था। वह भी मुँह फट ज़वाब देती थी। उस लड़की ने चुपके एक दिन उसे अपना स्वस्व अर्पण कर दिया था। दोनों ने शादी की प्रतिज्ञा की थी। वह उस लड़की की नित्य चर्चा करता था। कभी-कभी तो उसका स्वर गद-गद हो उठता था। उसकी आँखों की पलकें भीज जाती थीं।

रामलाल और वह प्रेमिका ! रामलाल ने खून किया था। सेशन जज ने उसे फाँसी की सजा दी थी। अब हाइकोर्ट में

अपील की गई। रामलाल को इस सबसे कोई दिलचस्पी नहीं रह गई थी। उसकी तो सारी भावुकता कुन्द हो गई थी। प्रदीप देखता था कि रामलाल किसी से बातें नहीं करता था। कभी उसने उसके चेहरे पर हँसी नहीं पाई। रामलाल को बीड़ी पीने का शौक था। प्रदीप किसी तरह आठ आना बंडल बीड़ी मंगवा, कर, उसे लाकर देता था। उस रामलाल को वह देखता था। एक सरल सा युवक। समझ नहीं पाता था कि क्योंकर उसने गंडासे से उस युवती का गला काटा होगा।

रामलाल की अपनी ही दुनिया थी। उसने कभी रेल नहीं देखी थी। वह मिडिल स्कूल में कुछ दिनों तक पढ़ा था। उसकी बुद्धि में कई बातें भरी हुई थीं। उसने बड़े-बड़े शहरों के नाम किताबों में पढ़े थे। गाँव के पास की बगिया में बैठकर भविष्य के लिए वह बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाया करता था। उसने यह निश्चय कर लिया था कि वह बाप-दादाओं के उस गाँव को छोड़कर शहर चला जावेगा। इस बात के लिए उसने दो-तीन शहर चुन लिए थे। वह इस बात को नहीं भूला था कि उस लड़की को साथ ले जाना होगा। उसने एक घने खेत के भीतर, जहाँ फसलें खड़ी थीं, उसका खून किया था। फिर वह उसकी लाश के पास बैठा रहा। वह घबरा गया। वह तो चाहता था कि वे प्राण लौट सकते तो···। मर कर वह युवती बहुत निखर आई थी! उसने उसके ठंडे शरीर को छूकर कसम खाई थी कि भविष्य में वह इसके लिए प्रायश्चित करेगा। उसके बाद उसे अपने जीवन का कोई मोह नहीं रह गया था। वह बिलकुल चुप सा रहता है। किसी से ज्यादा बातें नहीं करता है। हाइ-कोर्ट से सजा बहाल हो जाय, यही मनाता है। वह इस स्वार्थी दुनिया से छुटकारा पाना चाहता है। उसे यह पसन्द नहीं है।

और मंजुल''। बाहर घनघोर पानी बरस रहा था। बीच-बीच में हवा के तेज झोंके चल रहे थे। वह चुपचाप भीतर आई थी। प्रदीप तो कुरसी पर बैठा हुआ 'विल्की' की किताब पढ़ रहा था। मंजुल ने आकर चुपके चटखनी लगादी थी। प्रदीप अवाक रह गया। मंजुल बिलकुल भीज गई थी। इससे पहले कि वह कुछ बोले कहा था मंजुल ने, "राकेश ने आज नौ बजे सबको बुलाया है। एक जरूरी मीटिंग है। वह सोचते हैं कि आन्दोलन में शिथिलता आ गई है। वह बहुत चिन्तित थे। उनका कहना है कि यदि इस बार असफल रहे, तो फिर सदियों तक गुलामी के बन्धन न तोड़ सकेंगे।"

प्रदीप चुप रहा तो बोली थी वह, "उनका सबसे बड़ा भरोसा आप पर ही है।"

प्रदीप मंजु को क्या समझाता। एकाएक उसे ध्यान आया कि वह बिलकुल भीज गई है। बोला, "तुम बैठो मंजु। मैं कहीं से तेरे लिए कुछ कपड़े चोरी करके ले आता हूँ।" कुछ देर के बाद वह भीतर से कपड़े ले आया था। बार-बार मन में बात उठती थी कि यह लड़की बावली हो गई है। राकेश इसे व्यर्थ झूठी-झूठी बातें सुना कर बहका रहा है। यदि वह उससे साफ-साफ कह दे कि उस आन्दोलन के प्रति उसकी कोई आस्था नहीं है तो''''।"

वह खिड़की के पास खड़ा होकर बाहर की ओर देखने लगा। मंजु ने बत्ती बुझा दी। बाहर पानी की झड़ी के अतिरिक्त और कुछ साफ-साफ नहीं दीख पड़ रहा था। कमरे के भीतर मंजु थी, कहीं इसकी जानकारी घर वालों को हो जाय तो फिर''''। एक अज्ञात गुदगुदी उसके मन में उठी। यह मंजु बार-बार एक आशाप्रद भविष्य उसे सौंपती लगती है। जिसका कि वह बहुत बड़ा विस्तार पाता है। अब तो मंजु ने 'स्विच'

दबाकर रोशनी में बाल गुंथने शुरू कर दिए थे। सामने के बड़े आइने पर उसकी परछाईं पड़ रही थी। प्रदीप तो उस ओर देखता ही रह गया! न जाने कब तक वह उसके उस रूप को देखता ही रहा। मंजु ने घड़ी पर नजर फेरी। "सवा आठ," वह गुन- गुनाई। लेकिन प्रदीप तो उसी भाँति चुपचाप खड़ा था। मंजु उसे लेने आई है। क्या वह जावेगा ?

बोली ही मंजु, "चलिए।"

"मंजु !"

"कपड़े जल्दी पहनिए।"

प्रदीप ने चुपचाप बरसाती मंजु को सौंप दी। छाता ले लिया। गोसलखाने वाले दरवाजे से दोनों बाहर निकल आए। वे उस तेज आँधी-पानी में बढ़ गए। रास्ते में एक बड़ा पीपल का पेड़ टूट कर जमीन पर पड़ा हुआ था। एक जगह बिजुली के तार टूटे थे। मंजु बोली, "ऐसा मेंह तो कभी नहीं बरसा है ?"

लेकिन कहा प्रदीप ने, "भाभी कहती है ·····।"

"क्या कहती है प्रदीप ?" मंजु के स्वर में कम्पन था। जैसे कि इस बात ने एकाएक उसका मन छोटा कर दिया हो।

"यही कि ·····।"

"तुम क्या सोचते हो प्रदीप।"

"भाभी की बात !"

"प्रदीप ! प्रदीप !!"

"भाभी कहती है कि तुम मेरे पंख काट लोगी। यदि तुम एम० बी० बी० एस० होतीं तो शायद मन का 'आपरेशन' भी आसानी से कर सकती थीं।"

"प्रदीप !" मंजु तेजी से बोली। मेह की झड़ी लगी थी। प्रदीप छाता थामे हुए था। उसका एक हाथ मंजु के कंधे पर

था। वह उसके बहुत समीप थी। उसकी परछांई वह देख चुका है। लेकिन यह लड़की बहुत साहसी है। वह उसके उस साहस पर दङ्ग रह गया। वह मंजु तो एकाएक गूँगी लगी। प्रदीप को भला इससे सन्तोष क्यों होता। वह मंजु को छेड़ना चाहता था कि वह गूँगी स्टेचू सी न रहे। मंजु तो चुपचाप चल रही थी। वह कई बार उसका चेहरा पढ़ना चाहता था, पर सफल नहीं हो पाता था।

"भाभी कहती है मंजु कि तू जहाँ जायगी तूफान लावेगी। बात सच है। भला मैं क्या जानता था कि उसकी बात आज से शुरू होगी। तेरा यह इस प्रकार चला आना क्या कम अचरज पूर्ण व्यवहार था।"

मंजु फिर भी चुप। उसका इस प्रकार मूक रहना प्रदीप को अखरा। कहा उसने, "मंजु !"

अब मंजु बोली, "मुझे माफी दोगे प्रदीप।"

"क्या बात है ?"

"मैं राकेश से शादी करना चाहती हूँ। यह तभी संभव हो सकता है, जबकि तुम मुझे मुक्त कर दोगे।"

"मंजु ..... ।"

"यह मेरा पागलपन है, जानकर भी मैं यह करने के लिए उतारू हो गई हूँ। राकेश ने मुझे कई बातें सुनाई हैं। वह बार-बार कहता है कि मैं क्रान्ति की देवी हूँ। वह बिना मेरे अपने को असहाय पाता है। क्या तुम नहीं चाहते हो कि वह क्रान्ति सफल हो जाय। हम सब स्वतंत्र रहें। ऐसी स्थिति में तुम जो आदेश दोगे मैं वही करूँगी। भाभी की बातें ..। वह तो मुझे भी छेड़ा करती है। उसके कहने पर सच ही एक दिन मैंने अपने मन में तुमारी तसवीर रचली है। आज राकेश बार-बार

उसे चकनाचूर करना चाहता है। तुम अस्वीकार करोगे तो मैं राकेश के आगे सारी स्थिति रख दूँगी।"

वह यह सब कह, एक झोंके के साथ अपना प्रस्ताव आगे रखकर, अब चुप हो गई। वह उसके साहस पर दङ्ग रह गया। यह मंजु की भावुकता और वह प्रकृति की तूफानी रात! प्रदीप उन दोनों के बीच तेजी से बढ़ रहा था। वह जानता है कि मंजु की बात का केवल एक ही उत्तर है कि कह दे—मंजु तुम स्वतंत्र हो। जैसा चाहे कर सकती हो। भाभी की बातें तो साधारण भावना की प्रति दिन वाली बातें है। जीवन इन पर भले ही निर्भर रहे, इनको उभारना उचित नहीं है। लेकिन वह कुछ नहीं बोला। पानी थम गया था। प्रदीप सोच रहा था कि आज पहले-पहल उसे ज्ञात हुआ कि वह मंजु सौन्दर्य की राशि है। उसने आज ही सर्व प्रथम उसका निखरा हुआ रूप पाया था। वह मंजु उसके जितने समीप आ लगी थी, उसके सब कह देने के बाद बहुत दूर सी हट गई है। अब वह इतनी दूर हट गई है कि कौन जाने जीवन में कभी भेंट भी हो या नहीं। वह उस संयोग की बात पर सोचने लगा, फिर लगा कि वह भाग्यवादी बन रहा है। जबकि उसे अवसरवादी होना चाहिए था। उससे तो मंजु समझदार निकली। वह चाहती है कि स्वयं अपने जीवन का फैसला करे। इसके लिए सब बन्धनों को तोड़ डालना चाहती थी। क्यों नहीं उसने साफ कह दिया कि देखो प्रदीप, मेरी इच्छा यही है। तुम मुझे माफ कर दोगे। वह आज्ञा न मांगती, सारे बन्धन टूट जाते। प्रदीप को व्यर्थ ही इस मानसिक उथल-पुथल का सामना नही करना पड़ता।

मंजु चुप थी। वह जानती है कि वह अपना दावा पेश कर चुकी है। वह इस प्रदीप को भली भाँति जानती है। लेकिन यह

प्रदीप क्या राकेश की भाँति मंजु को नहीं बहका सकता है। पहिले यदि जानता कि एक दिन ऐसी स्थिति में पड़ेगा, तो सावधान रहता। आज अब वह कुछ नहीं कर सकता है। एक हिंसा उठी थी उसके मन में। वह क्यों नहीं साफ-साफ कह देता कि यह संभव नहीं है। वह चाहे बन्धन तोड़ दे, प्रदीप तो यही कहेगा कि उसने कभी स्वीकृति नहीं दी। भाभी की बात एक कड़ी रेखा की भाँति उसके जीवन में सदा चमकती रहेगी। वह मंजु को मुक्ति नहीं देगा। क्या मंजु उतनी स्वार्थी होगी? यह वह पहिले नहीं जानता था। उसका मन सिकुड़ गया। वह मंजु चुप थी। पानी बरसना बन्द हो गया था। पेड़ों से बड़ी-बड़ी बूँदें टपक रहीं थीं। चारों ओर एक अजीब सा वातावरण था। वह मंजु अब उससे हटकर चल रही थी। उस ओर प्रदीप ने नहीं देखा। वह उसकी दृष्टि से बचना चाहता था। वह चुप रहेगा। इस प्रश्न को स्वयं न हल करके मंजु पर छोड़ देगा। वह जैसा चाहे विचार कर ले।

"प्रदीप!" मंजु धीमे स्वर में बोली।

प्रदीप चुप।

"क्या इसी सबके लिए तुम बड़ी-बड़ी बातें किया करते थे।"

प्रदीप निरुत्तर!

"क्या यह सरासर तुमारा अपने अधिकार वाला अहम् नहीं होगा। तुम पुरुष हो; शायद इसीलिए यह बात आसानी से नहीं भुला सकते हो।"

प्रदीप अब भी कुछ नहीं बोला।

तो मंजु पास आकर बोली, "देखो प्रदीप, मैं तुमारे मन का पाप समझ गई हूँ। बस अब अपनी बात वापस ले लेती हूँ। मैं कृतघ्न नहीं। लेकिन याद रखना इसे वरदान न मान कर, आप

सा ही स्वीकार करूँगी। आज जान गई हूँ कि तुम पुरुष सदा ही आगे भविष्य में भी हमें बेड़ियाँ पहनाकर, दासी से अधिक कोई अधिकार नहीं दोगे। कभी न कभी यह दासता उठेगी। अब असह्य हो गई है।"

मंजु चुप हो गई! ऊपर बादल गरज रहे थे। प्रदीप चुप ही रहा। बीच-बीच में बिजुली की टेढ़ी-मेढ़ी रेखा आकाश पर चमक उठती थी। मंजु सिर झुकाए चल रही थी। मानो कि अपनी इस बाजी के हार जाने पर कोई प्रतिहिंसा वाला दाँव सोच रही हो। वैसे तो वह मंजु बहुत सीधी लगती थी। इतने करतबों से पूर्ण होगी, यह जानकारी पहिले उसे नहीं थी। वह बहुत कम बातें किया करती थी। प्रदीप ने समीप से उसे कभी पहचाना तक नहीं था। अब वह मंजु दूर सरक गई थी। आश्चर्य में सा उसने देखा कि वह एक पग की दूरी पर चल रही है। प्रदीप कुछ कहकर सारी स्थिति सुलझा देना चाहता था। पर उसके मुँह से आवाज नहीं निकल रही थी। क्या वह मंजु की उन सारी बातों का उत्तर नहीं दे सकता है? चाहकर भी अन्यथा चुप क्यों है।

एकाएक मंजु तेजी से आगे बढ़ी और सामने वाले मकान के भीतर घुस गई। प्रदीप ने देखा कि राकेश दरवाजे पर खड़ा था। प्रदीप जब वहाँ पर पहुँचा तो बोला राकेश, "पुलीस को खबर लग गई है। वह शीघ्र ही यहाँ छापा मारने वाले हैं। मैं सोचता हूँ कि दरवाजे पर एक कागज चिपका दिया जाय कि मीटिंग नहीं होगी।"

सच ही उसने लिखकर दरवाजे पर एक नोटिस चिपका दिया था। सांकल चढ़ा दी और जोर से पुकारा, "ताँगे वाले!"

तांगा आ गया था। मंजु तांगे पर बैठ गई। "बैठो प्रदीप, कहकर, राकेश मंजु के समीप बैठ गया।

प्रदीप वहीं उसी भाँति खड़ा था "देर हो रही है प्रदीप। मैंने उस सतीश 'इन्फारमर' को अभी-अभी कोतवाली जाते हुए देखा है।"

अब बोला प्रदीप, "तुम जाओ राकेश। मैं और लोगों के साथ चला आवूँगा। मंजु तुम मुक्त हो। जिस दासता का ताना तुमने मारा था, उसे बिसार देना। मैं उसे मान्य नहीं समझता हूँ। वह तो तेरा भ्रम था। मैंने कभी भावुकता के रंगीन बादलों से खेलना नहीं सीखा है।"

"प्रदीप!" राकेश फिर बोला, "यह तुम क्या कह रहे हो? चलो, यह नहीं होगा। हम तुमको नहीं छोड़ सकते हैं।"

लेकिन प्रदीप ने वह सब कब स्वीकार किया था। उसने सांकल खोल ली थी। कमरे के भीतर बैठ गया था। टार्च की सहायता से दियासलाई ढूँढ़कर उसने मोमबत्ती बाल ली। बाहर तांगे के चले जाने की आवाज उसके कानों में पड़ी। बड़ी देर तक वहाँ घोड़े के टापों का स्वर प्रतिध्वनित होता रहा। उसने पोस्टरों के ढेर में से एक को उठा लिया। कहीं भी उसके मन में क्रान्ति की लहर नहीं उठी। फिर मंजु की याद आई, जिसे कि वह सदा के लिए अपने हृदय से बिदा कर चुका है। उसके मन की स्थिति अब उस शिकारी की भाँति थी जो अपने सामने पशु देखकर, दया भाव प्रदर्शित करता है और आखिर को पछताता है। भाभी की बात सच निकली। वह मंजु तूफान सो लाई थी। अब वह निपट चुका था। प्रदीप हार गया और मंजु ने बाजी जीतली थी! राकेश पर वह कुछ नहीं सोच सका। मनमें उसके प्रति कोई बुरी भावना नहीं उठी। वह जानता था कि राकेश खरा आदमी है। थोड़ा भावुक है तो क्या

हुआ। हरएक में कुछ न कुछ स्वाभाविक कमजोरियाँ होती हैं। फिर यह मानव स्वभाव पढ़ लेना आसान काम नहीं है।

प्रदीप उस कमरे की ओर देखने लगा। वह मंजु के आग्रह पर यहाँ आया था। वह उस पर विजय पाना चाहता था। उसने मंजु की प्रतिछवि आइने में देखी थी। यदि वह जानता कि वह उसे इतनी आसानी से खो देगा, तो शायद नहीं आता। एकाएक उसके मन में बात उठी कि पुलीस आने वाली है। राकेश और मंजुल लौट गए थे। बाहर दरवाजे पर राकेश ने मोटे-मोटे अक्षरों में लिखकर नोटिस चिपका दिया था कि वहाँ पुलीस छापा मारने वाली है। मीटिंग स्थगित कर दी गई है। उसने खिड़की से बाहर झाँका था। कोई व्यक्ति दरवाजे के पास आया और लौट कर चला गया था। वह अंधकार में उसे पहचान नहीं सका। उसने जल्दी-जल्दी आवश्यक कागज जला डाले। वह उनको पुलीस के आने से पहिले ही नष्ट कर देना चाहता था। उसने मोमबत्ती के चारों ओर उनकी काली-काली ढेरी लगा दी।

राकेश का विश्वास था कि क्रान्ति आवेगी। मलाया, ब्रह्मा, ...! जापानी तेजी से आगे बढ़ रहे थे। ब्रह्मा रोड...। प्रदीप यह सब स्वीकार नहीं करता है। वह फिर भी मंजु का दिल छोटा नहीं करना चाहता था कि वह क्रान्ति सफल नहीं हो रही है। पहिले कई अफवाहें सुनने को मिलती थीं। अब मिलिटरी शासन ने सब नागरिकों के मनों पर भय संचारित कर दिया था। वह क्रान्ति जनता से हटकर कुछ व्यक्तियों के दलों तक सीमित रह गई। ये प्रगतिशील लक्षण नहीं थे। राकेश से उसने सारी बातें कही थीं। उस उड़ी-उड़ी फिरती मंजु से क्या कहता!

एकाएक बाहर कई लोगों के आने का स्वर उसके कानों पर

पड़ा। उसने मोमबत्ती बुझा दी। कई मिलिटिरी लारियाँ आकर खड़ी हो गई थीं। वह तो अवाक रह गया। कोई दरवाजा तोड़ रहा था। कुछ देर उससे हो गई। वह अब भाग नहीं सकता था। राकेश और मंजु क्या सोचेंगे। ये लोग उसे पकड़ कर ले जावेंगे। दरवाजा टूट गया। कई टॉर्चों की रोशनी से कमरा जगमगा सा उठा। प्रदीप को उन लोगों ने घेर लिया था। कमरे में तलाशी ली गई। कुछ नहीं मिला, जले कागजों के उस ढेर को वह देख रहे थे। राकेश को बचाने के ही लिए उसने यह सब किया था। पुलीस तो कुछ न पा, उसे पकड़ कर ले गई थी।

प्रदीप को दो साल की सजा हुई थी।

—आज प्रदीप हावड़ा एक्सप्रेस की प्रतीक्षा में खड़ा है। उसने दैनिक अखबार पर दृष्टि फेरी। एक सुन्दर व्यंग-चित्र बना हुआ था। नेता जेलों में बन्द थे और जनता भूखों मर रही थी। किसान कर्जे से दबे थे और जमींदार का कारिन्दा, पटवारी और महाजन फसल पर धावा बोल रहे थे। लोग आपस में एक दूसरे का गला काटने के लिए तुले थे। उसके नीचे ब्रतानिया के मंत्री के शब्द लिखे हुए थे—हमने भारतवर्ष का सांस्कृतिक तल ऊँचा करके उसे शक्तिशाली बनाया है।

अब प्रदीप चाय की दूकान पर खड़ा-खड़ा चाय पी रहा था। उसने जल्दी-जल्दी चाय समाप्त की और चुपचाप एक खाली बेंच पर बैठ गया। वह अखबार पढ़ रहा था। आज युद्ध काल वाले समाचार पत्र में कई नई-नई बातें वह पढ़ता है। कुछ का प्रचार सरकार के सूचना विभाग द्वारा होता है। वह एक बड़े विज्ञापन को देखने लगा। लिखा था—कम खर्चा करके पैसा बचाइए। कम खर्च करने से संकट दूर होता है। बरतन

मरम्मत कराइए। जिस चीज के बिना काम चल जाय उसे मत खरीदिए। इस प्रकार का अजीब सा प्रदर्शन चित्रों द्वारा किया गया था। तौलिया और चादरों पर चिप्पे लगाइए। बड़ों के कपड़े छाँट कर छोटों और बच्चों को पहनाइए।"""इससे युद्ध जीतने में मदद मिलेगी। ये विज्ञापन कितना जनता के मन पर प्रभाव डालते हैं, शायद वे नहीं जानते।

वह रामलाल की प्रेमिका! रामलाल की फाँसी की सजा बहाल रही थी। फाँसी पाने के कुछ दिन पहले रामलाल ने अपनी उस प्रेमिका की कई बातें सुनाई थीं। वह उसकी छोटी-छोटी बातें कह देता था। कभी तो देहाती अश्लील भाषा तक प्रयोग में लाने में नहीं चूकता था। एक बार रामलाल मेले से उसके लिए लाख की चूड़ियाँ लाया था। पहले किस तरह वे खेतों में मिलते थे। फिर बाग में"""। रामलाल सदा वहाँ पहले पहुँच जाता था। वह उत्सुकता से उसकी बाट जोहता था। वह बहुत सजीव प्रेम-कहानी थी। जब वह उसे छोड़ कर चली गई थी तो उसके मन में विद्रोह उठा। एक दिन तो वहाँ मवाद पड़ गया था। उस हिंसा की बात के लिए उसे कभी दुःख नहीं हुआ। उसने अपने उस व्यवहार को सदा ही सही माना। प्रदीप चाहता था कि वह रामलाल से मंजु की बातें करे, पर"""।

फाँसी लगने वाले दिन के चार दिन पहले से, वह किसी से बातें नहीं करता था। चुपचाप बीड़ी फूँका करता था। एक दिन सुबह जब कि सभी वार्डों में सन्नाटा था, रामलाल सबसे राम-राम कहता हुआ आगे बढ़ गया। रामलाल को फाँसी हुई। जजों का मत था कि वह एक क्रूर हत्या थी। यदि रामलाल कुछ बोल सकता तो जज भी शायद प्रभावित हो जाते। प्रदीप अपनी राजनीति की पोथियों के ज्ञान के साथ-साथ रामलाल की बातें भी साथ ले आया था।

८

यदि प्रदीप रामलाल से मंजुल की कहानी कहता तो क्या उत्तर पाता? वह उसे साहसी मान कर आज भी उससे श्रद्धा करता है। प्रदीप तो उस दिन घबराहट में सा गिरफ्तार हुआ। वह मंजु के समाज से आसानी से ही छुटकारा पा गया। वह वहाँ अन्यथा क्यों ठहरा था। मंजु के साथ नाता तोड़ने के बाद फिर उसके साथ जाना उसे मंजूर नहीं हुआ था। जिस मंजुल से वह नाता तोड़ चुका था, उससे वह आगे दूर ही रहना चाहता था। दो साल तक उसने उसके बारे में कुछ नहीं सुना है। जेल से छूटने के बाद उसने भी उसके बारे में जान लेने की कोई चेष्टा नहीं की। वह कहीं दूर नहीं थी, फिर भी वह उसके समीप नहीं जाना चाहता था! कोई उत्साह और उत्सुकता मन में नहीं थी।

मंजुल का तार आया था कि वह आ रही है। आखिर वह आज खुद ही आ रही है। क्यों आ रही है। मंजु उसका पता कैसे पा गई। उसने वह तार दुहरा-तिहरा कर पढ़ लिया। उस तार को भेजने के बाद क्यों मंजु आज उसके समीप आ रही है?

वह प्रदीप कुछ दिन तक पुलीस 'लॉक-अप' में रहा था। उसके बाद मुकदमा चला और उसे आसानी से जेल हो गई थी। बाहरी और भीतरी दुनिया का फासला सोच कर वह निश्चित सा वहाँ रहने लगा था। उसके पास आपत्ति-जनक पर्चे मिले थे। उसने कोई सफाई नहीं दी। यह अनावश्यक लगा। वह तूफानी रात जीवन में न जाने कहाँ छूट सी गई थी, तब से आज तक दुनिया बहुत आगे बढ़ गई है। युद्ध कई परिवर्तन लाया है। जर्मनी के पाँव लड़खड़ा रहे थे। जापानी भारत के पूर्वी दरवाजे से भाग चुके थे। मुसोलिनी का साम्राज्य मिट्टी के खिलौने की भाँति चूर-चूर हो गया था। देश के भीतर

जोश नहीं था। एक बेवशी और बेचैनी थी। नेता अभी तक जेलों में बन्द थे। गांधीजी ने छूट कर राजनीतिक सन्यास ले लिया था। कांग्रेस की संस्था पर डी० आई० आर० की बेड़ियाँ पड़ी थीं। जनता में घबराहट थी। अगस्त की उस क्रान्ति के चिन्ह कहीं दीख नहीं पड़ते थे।

प्रदीप उठकर टहलने लगा। उस प्लेटफार्म पर उसने दृष्टि डाली। वह ह्वीलर की दूकान थी। वह किल्नर का रिफ्रेशमेन्ट रूम, स्टेशन मास्टर का कमरा, टिकट घर; पार्सल बाबू पार्सल तोल रहे थे। बाहर बड़े ऊँचे-ऊँचे अमेरिकन ट्रक खड़े थे। वह चुपचाप इधर-उधर टहलता रहा। वह उस भीड़ में अपने को निपट अकेला पा रहा था। बार-बार मन को समझाता था कि मंजुल आ रही है। लगता कि वह उसे बिलकुल भूल सा गया है। किसी पहचान की याद नहीं पड़ती है। वह साँवली सी थी। लेकिन मंजु क्यों आ रही है; उससे क्या कहेगी? शायद राकेश भी साथ ही आ रहा हो। वह उन दोनों से मिलने के लिए कब उत्सुक था! आज उसके मन में मंजुल से सवाल पूछने की कोई लालसा बाकी नहीं है। वह जीवन में कभी अपने प्रति किफायतशार नहीं रहा है। सदा तो उसने लापरवाही बरती है। वह सरकारी विज्ञापन—साबुन नहाने के बाद सुखा लीजिए, भोजन बनाने में कम ईन्धन खर्च कीजिए, मोटर गैरिज में बन्द कर दीजिए, नया फर्निचर न खरीदिए, शादी का खर्च घटाइए, तार न भेजिए, कम नौकरों से काम लीजिए······।

युद्ध जीतने के लिए ही किफायतशारी कीजिए। वह कब आज मंजुल से कुछ चाहता है। पहले वह बहुत उदार था। कंजूस कुछ होता तो जीवन में कठनाई न पड़ती। कभी जीवन को तोलना उसने नहीं सीखा था। आज अब वह मितव्यता का

कोई सबक सीख लेने के लिए तैयार नहीं था। वह दो वर्ष बाद बाहर आया। नए वातावरण में अपने को तोल रहा है। युद्ध ने नागरिक जीवन नष्ट कर दिया है। पग-पग पर कठनाई पड़ती है। कहीं कोई सुविधा नहीं मिलती है। वह रामलाल और उसकी दुनिया!

रामलाल से उसे मंजुल की बात करनी चाहिये थी। कहाँ तांगे पर बैठी हुई उस लड़की ने अधिक अनुरोध किया था। क्या वह नहीं जानती थी कि पुलीस आ रही है। प्रदीप गिरफ्तार हो जायगा। वह यदि तांगे से उतर कर अनुरोध करती तो प्रदीप उसकी बात स्वीकार कर लेता। वह तो गुमगुम सी रही। वह राकेश के मन का भय समझ गया था। मंजु तो फिर कुछ नहीं बोली थी। वह तांगे पर चुपचाप बैठी हुई थी। उसका सिर झुका हुआ था। उसने एक बार आँख उठा कर उसे देखा तक नहीं। वह उस प्रदीप की सच ही एक हार थी। अब उसने रामलाल के साहस की सराहना की। मक्का के खेत; सफेद और कथई रंग के सूत निकले हुए भुट्टे; ज्वार के फटे बासों की लहलहाहट, ऊख की चोरी...! प्रदीप को लगता है कि वह सब एक व्यंग था। रामलाल की प्रेम कहानी सच्ची थी और उसकी निपद झूठी। वह उस बात को तूल देकर व्यर्थ उसका महत्व बढ़ाया करता है। मंजु ने तार दिया था—मीट 'हावड़ा' फिफ्थ मौर्निङ्ग...; पाँच तारीख सुबह को हावड़ा पर मिलिए। जेल की बाजरे की अधपकी काली रोटियाँ, पानी सी दाल......; नहीं वे मरे सुफेद से कीड़े, जिनको वह निकाल कर फेंक दिया करता था। और यह तार, जिसे कि वह अपने हाथ में लेकर, पढ़ रहा है। कुछ अर्थ निकालना चाहता है। उन कीड़ों की तरह इसे भी फेंक क्यों नहीं देता है।

प्रदीप मंजु को भूल सा गया। रामलाल का व्यक्तित्व बार-

बार ऊपर उठ जाता था। उसकी प्रेमिका को वह अब पहचानने लगा था। रामलाल में कभी उसने कोई परिवर्तन नहीं पाया। कभी उसने उस घटना को अपनी भूल नहीं माना था। फाँसी की चर्चा भी कभी नहीं की। प्रदीप को जेल से छूटे हुए लगभग दस दिन हो गए हैं। आजकल उसे रामलाल के गाँव की झाँकियाँ अक्सर याद आती हैं। वह इस बड़े शहर में मानो कि रामलाल के व्यक्तित्व को पूरा नहीं पाता है! प्रदीप का मन यहाँ घुटता है। वे चने के बूट, मटर की फलियाँ.....! मंजु के आ जाने की बात सोचकर, वह और अधिक घबरा उठता है। वह तय कर चुका है कि उससे साधारण दो-चार बातें करके वह कहीं दूर गाँवों में चला जायगा। वह मंजु बहुत दूर नहीं है। आज तो.......।

घंटी बजी और बजती रही। नवीन में चेतना आई। दूर-दूर लाइन-क्लियर हो गया था। हावड़ा वाली गाड़ी आने वाली थी। प्रदीप का मन फिर भी खिला नहीं। वह दो वर्ष से एकाकी जीवन व्यतीत कर रहा है। आज किसी बड़ी भीड़ का सामना करने की आदत छूट गई है। वह कुछ उत्सुक भी नहीं लगता है। धीरे-धीरे प्लेटफार्म भर रहा था। वह उसी भाँति चुपचाप खड़ा था। उसके हाथ पर सुबह का समाचार-पत्र था। जिसे कि वह पूरा-पूरा पढ़ चुका है। पूरा पढ़कर भी लगता था कि वह उसमें कुछ नहीं पा सका है। वही युद्ध की खबरें, विज्ञापन ...। जेब पर वह तार का फार्म पड़ा हुआ था। उसने उसे एक बार फिर पढ़ा और फाड़ कर टुकड़े-टुकड़े फैला दिए। वह उसे किसी दस्तावेज की भाँति सुरक्षित नहीं रखना चाहता था। अखबार की मोटी टाइप में छपी खबरों पर दृष्टि फेरी। दूर सिगनल पर 'एक्सप्रेस' आ रही थी। वह डेढ़ घंटे लेट आई है। वह चुपचाप उधर देखने लगा। अब तो गाड़ी प्लेटफार्म

पर आ गई थी। एक-एक डिब्बे उसकी आँखों के सामने से गुजरने लगे। डिब्बे खूब भरे हुए थे। गाड़ी खड़ी हो गई। प्रदीप सावधानी से हरएक डिब्बे का निरीक्षण करने लगा।

मंजु जनाने इंटर में मिली। उसकी गोदी पर एक बच्चा था। प्रदीप ने बच्चा ले लिया। मंजु सामान उतरवाने लगी। वह तो बहुत दुबली पड़ गई थी। चेहरे पर वह कान्ति न थी। वह असमंजस में खड़ा भर था।

मंजु सामान गिन रही थी। एकाएक पूछा प्रदीप ने, "राकेश कहाँ है ?"

मंजु चुप रही। वह कुली को सामान सौंप रही थी। कुली ने सामान उठा लिया था। वह चुपचाप उसके साथ होली। प्रदीप से कुछ नहीं बोली। प्रदीप ने बच्चा देखा और राकेश का बचपन वहाँ मिला। मंजु आगे बढ़ गई थी। वह उसी ओर चला गया।

तांगे पर मंजु बोली, "मुझे आशा नहीं थी कि तुम इस प्रकार मिलोगे।"

प्रदीप को याद आया, रामलाल का कहना कि गंडासे चलाते हुए उसे कुछ भी दया नहीं आई। औरत की गरदन चिड़िया की तरह ही कोमल सी होती है।

"बेबी दस महीने का है।" फिर बोली मंजुल।

रामलाल को फाँसी हुई थी। लेकिन प्रदीप समझ नहीं सका कि उससे क्या बोले। वह तो उसे सावधानी से पढ़ सा रहा था। यह मंजु तो आ गई है।

"सताइस घंटे का सफर! न जाने यह लड़ाई कब समाप्त होगी। बड़ा कष्ट होता है।" उसके चेहरे पर से थकान तो टपक ही रही थी।

वह क्रान्ति की देवी मंजु आज लड़ाई खत्म होने की बात सोच रही है। वह एक भूल-भुलैया में फंस गया है।

"प्रदीप!"

उसने मंजु की ओर देखा।

"सुना कि पुलीस वालों ने तुमको थाने में बहुत दुःख दिया। वे तुमसे और लोगों का नाम जानना चाहते थे।"

प्रदीप तो मंजु को पहचान लेना चाहता था। वह छोटा गुड्डा सा 'बेबी' उसकी गोदी पर है; राकेश का बच्चा! मंजु उसकी माँ है। वह कुछ देर तक उसी भाँति चुप रहा। मंजुल ने एक ओर कोहनी टिका करके आँखें मूँदली थीं। वह उनींदी थी। सोचा प्रदीप ने कि यह उसके प्रति अन्याय है। पूछा, "राकेश कहाँ है?"

"राकेश!"

"मैं सोचता था कि वह साथ आवेगा।"

"क्या आपने नहीं सुना।" आश्चर्य से मंजुल बोली।

"क्या?"

"उनके घर वालों को यह रिश्ता स्वीकार नहीं हुआ। राकेश ने अब एक धनी परिवार में शादी करली है।"

"राकेश ने······।"

"वे फिर मुझे नहीं मिले। सुनाकि अपने ससुर के साथ ही रहते हैं। मैंने भी ज्यादा ढूँढ नहीं की।"

"और तू?"

"अपने मामा के साथ रहती हूँ!"

प्रदीप चुप हो गया। और जानकारी प्राप्त करनी अनुचित सी लगी। रामलाल को फाँसी हुई थी। उसने अपनी प्रेमिका का खून कर डाला था। राकेश ने कानून की कोई ऐसी दफा नहीं तोड़ी कि यह 'हत्या' का अपराध माना जाय। वह कई बातें सोच

रहा था। यह मंजु और राकेश का बच्चा ! राकेश ने आसानी से दूसरी शादी करली है। रामलाल सच ही बहादुर था कि फाँसी पर चढ़ गया। यह राकेश डरपोक निकला है।

"तुमारे जेल से छूट आने की बाट जोह रही थी; ताकि आगे के लिए कोई ठीक सा रास्ता तुम सुझा दो।"

क्या प्रदीप रामलाल की बात सुना दे। यह छोटा सा बच्चा चुपचाप सो रहा था। मंजुल राकेश की विवाहिता पत्नी नहीं है। पहले सामन्त कई-कई उप-पत्नियाँ भी रखते थे। आज सात तक विवाह पुरुष कर सकता है। वह उसका अधिकार है, यह नारी···! अन्यथा रामलाल हत्या के अपराध में फाँसी पर नहीं चढ़ता। नारी की वह उच्छृङ्खलता उससे नहीं सही गई। वह पुरुष था।

एक झटके से तांगा रुक गया। आगे मिलिटरी लॉरियों ने रास्ता घेर रखा था। बेबी रोने लगा। मंजुल गोदी में लेकर उसे दूध पिलाने लगी। प्रदीप ने एक बार उसे देखा। आज वह सुन्दर नहीं लग रही थी। उसके ओंठ सूखे हुए थे। आँखों के नीचे काली गहरी झांई पड़ी थी। चेहरे से उदासी टपक रही थी। कहा मंजुल ने, "पानी मिलेगा।"

उसने तांगे से उतर कर पूछा, "तुम पिओगी।"

"हाँ।"

"शरबत ले आवूँ।"

मंजुल ने हामी भरी। प्रदीप चुपचाप सोड़ा वाले की दूकान से कुल्हड़ पर ले आया। मंजु चुपचाप पीने लगी। खाली कुल्हड़ उसे देकर बोली, "बहन ने लिखा था कि आप छूट गए हैं।"

वह कुल्हड़ फेंक, पैसे देकर चला आया। तांगे पर बैठकर बोला, "क्लाइव स्ट्रीट चलना है।"

प्रदीप तो चुप बैठा रहा। तांगा आगे बढ़ गया। राकेश का मंजु के प्रति वाला व्यवहार बार-बार उसके दिमाग में करवटें बदलता रहा। मंजुल उसके बच्चे के साथ है। कोई और लड़की इस असाधारण स्थिति से घबरा उठती। पूछा ही फिर, "राकेश को बच्चे की जानकारी है।"

"बहन ने लिखा था।"

"फिर क्या उत्तर दिया था उसने ?"

"यही कि बच्चा उसके पास भेज दिया जाय। मुझे माहवारी दो सौ रुपए देने का आश्वासन देकर माफी मांगी थी।"

"माहवारी ?"

"दो सौ रुपया मनिआर्डर से आया था। मैंने वापिस कर दिया। फिर उनकी कोई चिट्ठी नहीं आई।"

प्रदीप के मन में साँप के छोटे बच्चे की भाँति मंजु की बात करवट ले रही थी कि वह उसके लौट आने की बाट जोह रही थी। वह आगे कौन सा रास्ता सुझावेगा। इस लड़की ने तो एक समस्या आगे खड़ी करदी है। उसने उसकी दी स्वतंत्रता का सही उपयोग नहीं किया था। वह अपनी भावुकता में निचुड़ गई। सही रास्ते से आज भटक गई थी।

"तुम सोचते होगे प्रदीप कि मैं पगली थी। समझदार होती तो वह भूल नहीं करती। लेकिन एक घटना मेरे मन में बैठ गई थी। पुलीस की गोलियाँ चल रही थीं, फिर भी राकेश झंडा लिए हुए आगे बढ़ा था। उसके बाद वे आजादी की झाँकियाँ! मैंने उसे अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया, तो आज भी उसे अपनी भूल नहीं मानूँगी। राकेश तो अनिश्चित था। मेरी भावुकता में वह बह गया। अपराध मेरा ही है। उस बात का मुझे कोई दुःख नहीं है। राकेश ने कभी विवाह की चर्चा नहीं की थी। वह कभी-कभी यह

कहता था कि उसकी मंगनी उसके पिताजी ने कहीं कर दी है। उसकी उस परवशता पर मैं उसकी हँसी उड़ाती थी। लेकिन जब वह आसानी से मेरे हाथ से निकल गया, तो मुझे होश आया। मैंने उसे शादी करने की आज्ञा दे दी। मैंने रोकने की कोई चेष्टा नहीं की। तुम तो जेल में थे? अपनी इस स्थिति का भी कोई ज्ञान मुझे नहीं था।"

मंजुल ने यह कैसी कहानी शुरू करदी थी। प्रदीप सावधान हो गया। वह अपने एक मित्र के परिवार में टिका हुआ है। वहीं मंजु जा रही है। वह तो यहीं से अपने पक्ष की दलील देकर कहना चाहती है कि उसका दावा सही था। अपने इस दाँव के हार जाने का पछतावा उसे नहीं है। मानों कि जीवन का जुआ खेलने में प्रवीण हो गई हो। यदि रामलाल हत्या न करके भविष्य की प्रतीक्षा करता, तो कौन जाने वह उसकी प्रेमिका लौट कर कह देती कि उनके समाज में छूट की प्रथा भी है। शायद वह लौट कर कभी उसके घर भी चली आती। मंजु के समाज के नियम उससे बहुत कड़े हैं। मंजु दूसरे की अव्याहता पत्नी है। उसके चारों ओर एक सीमा है। यह मंजु माँ है। वह राकेश के लड़के की माँ है!

प्रदीप न समझ सका कि वह यह सब क्या सोच रहा था। उसके हाथ पर सुबह का समाचार-पत्र था। उसमें प्रकाशित समाचार कहीं भी उसके मन को सान्त्वना नहीं दे सके। पूर्व और पश्चिम दोनों ओर युद्ध हो रहा था। इस युद्ध में उसके देश के किसान-युवक भी दूर-दूर विदेश में फैले हुए हैं। युद्ध-काल में दुनिया सिकुड़ सी जाती है। देशों के बीच पहले का सा फासला नहीं रह जाता है। और उसकी जो विचारों की दुनिया है। वह आज के जीवन में उसका साथ नहीं दे पाती है। एक नया सा व्यापार आज चल रहा है। वह उससे परि-

चित नहीं है। लगता है कि उसकी अपनी विचारों की दुनिया कई वर्ष पीछे छूटी हुई है। वह उस दूरी का अनुमान आसानी से नहीं लगा पा रहा है। उसका मन कुछ काम करने को नहीं करता है। हृदय कुन्द हो गया है। प्राण शरीर में हैं, अतएव वह अपने को जीवित पाता है। अन्यथा वह मुरदा सा है। वह दुनिया से दूर रहना चाहता है।

बोली मंजु, "राकेश भी पकड़ा गया था।"

प्रदीप ने मंजु की ओर देखा। पूछा, "कब ?"

"आपकी गिरफ्तारी के तीन महीने बाद।"

प्रदीप चुप हो गया।

"लोग तो कहने लगे थे कि वह पुलीस का आदमी है।"

"मंजु, मैं इस पर विश्वास नहीं करता!"

"और जब राकेश पकड़ा गया तो उसके भावी श्वसुर ने जमानत देकर उसे छुड़ा लिया था।"

मंजु से सारी बातें सुनकर, वह चुप रह गया। वह मंजु प्रदीप को भांप रही थी। सोचती जाती थी कि क्या उसका इस प्रकार चला आना उचित था ? प्रदीप ने अभी तक कोई उत्साह नहीं दिखलाया था। वह अपने मन में अब पछता रही थी। वह समझी थी कि प्रदीप उसी प्रकार सबल होगा! वह कोई रास्ता सुझा देगा। वह तो देख रही है कि वह बात-बात पर उलझता जा रहा है। मंजु उस पर भावुकता की रेशमी डोरियों वाला जाल फैला रही है। वह सँभल गई कि वह कहीं कोई भयंकर खेल तो नहीं खेल रही है। प्रदीप का चेहरा उसी भाँति गंभीर था। स्टेशन पर जब उसे देखा था तो उसमें वह पुराना उत्साह नहीं मिला। वह बदला हुआ लगा। मानो कि जेल में रह कर साधारण शिष्टाचार भूल गया हो। वह उससे कई बातों का निर्णय कराने आई थी। अब तो मन में प्रश्न उठता

था कि क्या वह उससे सारी बातें कह दे। लेकिन उसे उसके जीवन से क्या दिलचस्पी होगी ?

प्रदीप ने पूछा, "यहाँ कब तक रहने का विचार है।"

"कब तक !" वह अवाक सी उसे देखती रह गई।

"मैं परसों जा रहा हूँ। पहले ही चला जाता यदि तुम्हारा तार न मिलता।"

मंजु का चेहरा मुरझा गया। यह नवीन तो मानव-भावनाएँ कुचलने में प्रवीण हो गया है। वह उससे अब कुछ नहीं कहेगी। एक अन्तिम सवाल है, बोली वह, "अब क्या करना चाहिए प्रदीप। सोच रही हूँ कि फिर कालेज में पढ़ने चली जाऊँ। अकेले-अकेले मन भी तो नहीं लगता है। कुछ करना ही होगा।"

प्रदीप ने एक बार मंजु की ओर देखा। बोला, "भाभी की बात याद है मंजु···।"

मंजु चुप !

"भाभी शायद तुमसे अधिक समझदार है। उसने मुझे आज तक इस बात की सूचना नहीं दी। अन्यथा जेल में यह बात मुझे परेशान करती।"

वह अधिक नहीं बोल सका। रामलाल की वह बात फिर दिमाग में चक्कर काटने लगी। उसकी धारणा थी कि ऐसी बेवफा औरतों को नष्ट कर देना चाहिए। उसका सारा शरीर कांप उठा। वह पुरुष की कैसी हिंसा वाली प्रवृति थी।

अब कुछ और सोचकर बोला प्रदीप, "तुम अपने मन को टटोल लो। अभी बहुत समय पड़ा हुआ है। उसके बाद जो तय करोगी, वैसी ही व्यवस्था कर दूँगा।"

"और भाभी की बात प्रदीप···!"

"कि तू तूफानी लड़की है, यही न ! मंजु आज तू फिर अपने हाथों ही अपना न्याय कर ले।"

"यह मुझसे नहीं होगा प्रदीप। आज मेरा पक्ष बहुत निर्बल है।"

प्रदीप ने मंजु की ओर देखा। वह अलग सी हट गई थी। उससे दूर सी थी। बीच में वह बच्चा था।

सामने ट्रक, टैंक, और न जाने किन फौजी-हथियारों से लदी हुई लारियाँ खड़ी थीं। ऊपर बड़ी दूर तक हवाई-जहाजों का एक बेड़ा उड़ रहा था, जिसकी भरभराहट कानों के परदों से टकरा रही थी।

सोचा कि यह युद्ध-काल है और राजनीतिक-क्रान्ति का……!

अवशिष्ट रूढ़ियाँ

रमेश ने धरती पर से बीज उगता हुआ देखा था। खेतों पर नहीं, अपने घर पर पूजा की कोठरी में! प्रति वर्ष आश्विन मास में नवरात्रि आती थी। उस कोठरी के एक कोने में सीमेंट की फर्श पर मिट्टी बिछा दी जाती और उसमें भीगे हुए जौ बो कर उसे हरे-हरे चौड़े-चौड़े पत्तों से ढक दिया जाता था। तंत्र-शास्त्र के आचार्य नौ दिन तक चण्डीपाठ करते थे। वह देखता था कि आठ-दस दिनों में बारह-चौदह उंगुल हरियाली उग आयी है। कालरात्रि के दिन भट्टी में कोदों को बनी शराब पीकर चूर पण्डितजी सब को महापात्र से आचमनियाँ कराते थे। फिर बकरे की पूजा होती। उसके दोनों कानों में पानी भर कर फूँक मारी जाती तथा देवी से विनती की जाती कि वह बलिदान स्वीकार कर ले। बकरा कानों के भीतर पहुँचे पानी को बाहर निकालने के लिए तेजी से सिर हिलाता था। भक्त-मंडली गद्गद् स्वर में कहती कि देवी ने बलि स्वीकार करली है। कुछ तो बकरे की कातर आँखों को देख कर कहते कि माता आँखों में मुस्करा रही है। उसके आगे घर का पुराना नौकर खुँकरी के एक झटके से बकरे का सिर काट डालता था। नशे में चूर उपासक भुना हुआ मांस खा कर, खूब शराब पीते थे। रमेश ने एक बार चोरी करके वह स्फटिक का यन्त्र देखा था। उसमें रेखाओं के घने जाल के अतिरिक्त और कुछ नहीं पाया। सामने दीवार पर माता की एक तसवीर टंगी थी—माता के कई हाथ थे। एक में ढाल था, दूसरे में लहू से भरी तलवार और तीसरे में खून की बूँदे टपकाता हुआ सिर था। भूमि पर एक

मानव लोथड़ा पड़ा था जिसकी कटी गरदन से लहू बह रहा था। भगवती का वाहन सिंह खून चाट रहा था। रमेश 'महाकाली' की उस कल्पना को आज तक नहीं समझ पाया है। देवता तो श्रेष्ठ पुरुष होते थे; पर नारी का यह रूप क्या उसे विश्वास दिलाने के लिए कि वह अबला नहीं है, एक हथियार मात्र था ? शक्ति के उपासकों की बुद्धि की सराहना उसने बार-बार की है।

खड़ी फसलों का ज्ञान भी उसे था। शहर के भीतर एक बहुत बड़ा सरकारी बाग है, जिसकी तीन-चौथाई धरती बंजर थी। वहीं नगर के अधिकारियों ने अधिक 'अन्न उपजाओ' योजना के अन्तर्गत हल चलवा कर खेती की थी। एक दिन उसने वहाँ घनी खड़ी फसल देखी थी। सुन्दर फूल-पत्तों के बीच वह कभी उसे शोभनीय नहीं लगी। उसने तो यह सुना था कि योजना बहुत सफल नहीं रही है। बोये हुए बीज के बराबर भी पैदावार नहीं हुई। चाहे यह बात सच हो, फिर भी जब वह दोनों ओर खड़ी फसल के बीच से निकलता था तो वहाँ एक नया जीवन पाता। सोचता कि लाखों हल इसी भांति देश भर में करोड़ों एकड़ जमीन पर चलते होंगे। वहाँ इसी भाँति फसलें खड़ी होती होंगी। शहर के कोलाहल के बीच यह नगण्य टुकड़ी तो किसी महत्व की न थी। लेकिन देहात की धरती पर जो लाखों गाँव फैले हुए हैं, वहाँ का सामाजिक और आर्थिक ढाँचा वही पुराना सड़ा-गला है। वहाँ आज तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वहाँ ऋषि-मुनियों की बनाई हुई सामाजिक व्यवस्था का वही पुराना स्वरूप चालू है। विधाता की लकीरें मनुष्य को इस जीवन की चिन्ता से मुक्ति देकर परलोक के सुनहरे जीवन का आश्वासन देती हैं। आज की सभ्यता उससे नहीं पनप पाती है। लेकिन वे ऋषि तारे बन कर आज भी शुक्र-

बृहस्पति के रूप में दुनिया को रोशनी दे रहे हैं। अन्यथा सब घनघोर अन्धकार में पड़े रह जाते।

और उसने अन्न की ढेरियाँ भी देखी थीं; पर खलियानों में नहीं, शहर में राशन की दूकान पर जब वह कार्ड लेकर जाता तो देखता कि वहाँ अन्न से भरे बोरे रखे हैं। यह नाज शहर की मंडियों में दूर-दूर गाँवों से आता था। रमेश शहर में नौकरी करता है। उसका अपना छोटा-सा परिवार है—माँ, बीबी तथा तीन बच्चे! एक सौ पच्चीस रुपये तनख्वाह मिलती है। आज वह संयुक्त परिवार से अलग हो बड़ी दूर चला आया है। उसके अपने नाते-रिश्तेदार भी उसी की तरह अलग-अलग शहरों में नौकरी करते हुए अपने परिवारों के साथ रहते हैं। गाँवों की धरती को छोड़कर ये परिवार कभी शहरों में आये थे। कुछ वर्षों तक ये परिवार साथ-साथ रहे, फिर अलग-अलग बँट गये। वह संयुक्त परिवार वाला ढाँचा आर्थिक व्यापार की बयार में टूट कर चकनाचूर हो गया था। इसी भाँति लाखों परिवार शहर-शहर में बिखर कर निकम्मे मध्यवर्ग के स्वरूप में आ गये। एक का दूसरे से कोई आर्थिक सम्बन्ध नहीं रह गया। आत्मीयता और मोह का कच्चा सूत्र आसानी से टूट गया था। किसी को उसको जोड़ लेने का अवसर नहीं मिला। इतिहास साक्षी है कि परिवार सदा से टूटते और बनते रहे हैं। साथ ही साथ उनका स्वरूप और ढाँचा नया-नया रूप लेता रहा है। पहले माया-मोह का एक भावुक सूत्र चला। आगे चलकर तो आर्थिक युग ने अपनी मजबूत दीवारें खड़ी करदीं। एक-सी स्थितिवाले परिवारों ने अपना नया समाज बना लिया। फिर उनकी एक नयी दुनिया बस गयी। उनका सम्बन्ध और किसी से नहीं रह गया था। यह था शहरों का स्वरूप और गाँवों का·····!

रमेश की साइकिल का चालान हुआ था और उसीके सिलसिले में उसे अदालत के दर्शन करने पड़े थे। वहाँ उसने गाँवों के लोगों को आते-जाते देखा था। मारपीट, खून, बेदखली, लेन देन—यह था गाँवों का एक रूप और फिर उनका वह व्यक्तित्व, जिसमें कोई चमक नहीं! वही सदियों की गरीबी आज भी उन पर छाई हुई थी। बार-बार मन में बात उठती थी कि वह वर्ग अब मिटा, अब मिटा! तभी अनायास भारत की नब्बे प्रतिशत आबादी पर आँखें फैल जातीं। आज भी वे लोग पुराने ढाँचे में पड़े हैं, जब कि दुनिया बहुत दूर आगे बढ़ गयी है। आज तो दुनिया का वह पुराना संघर्ष महायुद्धों में बदल गया है। प्रगतिवादी सभ्यता के भीतर मानव के अपने स्वार्थ भर गये हैं और...। लेकिन उसे मजिस्ट्रेट ने पाँच रुपया फाइन इस साधारण बात के लिए किया था कि वह बिना रोशनी के सड़क पर रात्रि को साइकिल चलाता हुआ पकड़ा गया। मजिस्ट्रेट ने अपने पेशकार से कहलाया था कि उसे भगवान की सौगन्ध लेनी चाहिए कि वह अपना बयान सच-सच दे रहा है। वह भगवान वहाँ भी पहुँच चुका था, इसकी जानकारी उसे पहले पहल हुई। विज्ञान के इस युग में धर्म-भीरुता की वह बात अनायास मन में हँसी लाई थी। उसने नजर उठाकर देखा था कि ब्रिटेन के बादशाह का फोटो सामने टंगा हुआ, उस देश का प्रतिनिधित्व कर रहा था। अदालत पर बाहर बड़ा यूनियन-जैक फहरा रहा था, जो उपनिवेशों के गुलामों की रक्षा के भार वाले उत्तरदायित्व की रक्षा करने के लिए लगाया गया था। रमेश को उस भगवान पर बड़ी हँसी आयी कि आज भी वह गरीब जनता के विश्वास को ठगने के लिए एक खिलौना बना हुआ है। गाँव का ग्राम-देवता आज सही रास्ता न दिखला सकने के कारण अन्तिम साँसें ले रहा था।

याद आये उसे वे दिन, जब तूफान उठा था गाँवों में। लगान-बन्दी शुरू हुई थी। उस आन्दोलन ने एक नूतन जागृति का नया उपहार दिया था। पर फिर वह ग्राम-देवता चुपके कहीं भाग कर चला गया था। उस खाली स्थान पर राष्ट्रीयता का तिरंगा झंडा फहराने लगा। गाँव उसमें स्थिर खड़े रह कर बलवान बन गये थे। आँधी अस्थायी थी। पर उसके कुछ चिह्न अभी तक वहाँ विद्यमान थे। वे दर्दनाक घटनाएँ, घावों से आज यादें बन गयी थीं। फसलों का जलाया जाना, पुलिस की गोलियाँ, जेल यात्रा··! एक कदम आगे बढ़ कर वे पीछे हटना चाहते थे, पर ग्राम-देवता उनको सहारा देने वहाँ कहाँ था! धीरे-धीरे राष्ट्रीय देवताओं ने उनके जीवन में प्रवेश किया। उस राष्ट्रीय बयार से वहाँ का वह पुराना ढाँचा नष्ट होने लगा। लेकिन वे खेत, वे हल-बैल, वह धरती··!

रमेश की जो अपनी गृहस्थी है। तीन बच्चे देकर देवीजी के लिए फिर दाई तलाश करने का प्रश्न आगे आया है। अम्मा कहती है कि बहू की सेहत भली नहीं है। फिर भी वह बहू घर की मर्यादा की रक्षा के लिए सुबह छः बजे उठ कर सब कमरों में झाड़ू देती है। चाय बनाती है, सब को खाना बनाकर खिलाती है; बच्चों की देखभाल, चौका-बर्तन और रात्रि के ग्यारह बजे थकान से चूर-चूर शरीर लेकर सो जाती है। इस पर भी माँजी का रोना है कि आजकल की बहुएँ तो गुलाब के फूल की भांति आँच-पानी से मुरझा जाती हैं। न हुआ पुराना पचीस तीस व्यक्तियों का संयुक्त-परिवार, जहाँ कि छोटी बहू को सारी रसोई का काम करना पड़ता था। वह रसोई दिन के दो बजे तक चलती थी और रात को तो कम से कम बारह बजते थे। लेकिन बहू इस पर तकरार नहीं करती है। मन ही मन सोचती है कि कै दिन उसे जीना

है। आज न सही कल तो इस जीवन से छुटकारा मिल ही जायगा। वह तो अपने चूल्हे-चौके और इस परिवार की सीमाओं से बाहरवाली किसी बात से दिलचस्पी नहीं रखती है। इस मोहल्ले में रहते हुए सात साल गुजर चुके हैं, पर किसी से जान-पहचान नहीं है। बच्चे परेशान करते हैं। वह रोज रमेश से कहती हैं कि कम से कम बड़े लड़के को स्कूल में भरती कर दो, एक से तो छुटकारा मिल जाय। बाहर किसी खोंचेवाले की आवाज सुनकर सबकी पैसों की मांग होती है। बहुत चीं-पों करने पर मार पड़ती है। वे अपनी दादी की गोद में जाकर रोने लगते हैं। दादी बहू को कोसती है कि वह बच्चे पैदा करने में जितनी तेज है, उतनी उनकी माया-ममता उसे नहीं है। वह चुप रहती है। सास की बातों का उत्तर देकर व्यर्थ तकरार नहीं बढ़ाती है। उसकी जीवन-धरती पर शीघ्र ही जो नया आगन्तुक प्रकट होनेवाला है, वह उसके लिए जरूर ही चिन्तित है। सुबह उठकर कुछ काम करना चाहती है, तो आँखों के आगे धुन्ध छा जाता है। थोड़ा सा काम करती है, तो बस थक जाती है। वह रमेश से कुछ नहीं कहती है। लेकिन मन ही मन डरती रहती है कि अबके वह जरूर मर जायगी। उसका मर जाना आसान है, पर ये बच्चे ? पुरुष के भाग्य पर ईर्ष्या होती है। उनका क्या, चट दूसरी शादी कर लेंगे। पर इन बच्चों का भविष्य क्या होगा ? उसके सामने पिछली कई तसवीरें आती हैं—उनका विवाह, पहले लड़के का जन्म, फिर दूसरा, यह मोहल्ले का मकान, सास...। अब वह भयभीत सी रहती है। कोई उत्साह नहीं। दाई कहती है—बहूजी, तन्दुरुस्ती ठीक रहेगी तो सब-कुछ है। अन्यथा...! यही न कि वह लूली हो जायगी। रोगी रहना ठीक नहीं, पर वह क्या करे ? परिवार की सीमित आमदनी कहाँ स्थिति

सँभाल पाती है? इस युद्धकाल में सब मिलाकर कर्जा दो हजार तक पहुँच गया है। गिनी गिनाई एक सौ पच्चीस रुपल्ली आती हैं। कोई ऊपरी आमदनी नहीं है। उनके पड़ोसी कन्ट्रोल के बाबू को कुल सौ रुपया तनखाह मिलती है। उसकी पत्नी रोज नई-नई साड़ियाँ खरीदती है। सोने का भाव पचासी होने पर भी पिछले छः महीनों में उसने डायमंड कट की चार चूड़ियाँ, कानों के टाप्स तथा दो अंगूठियाँ खरीदी हैं। और यहाँ वह अपनी गृहस्थी से ऊब गई है। अधिक दिन तक गृहस्थी को चलाने की सामर्थ उसमें नहीं है। मन में कोई उत्साह नहीं है। आखिर वह किस महत्वाकांक्षा के लिए यह सब मुसीबतें झेले। कभी तो उसे अपने पर बहुत गुस्सा आता है। ये तीन-बच्चे न हुए होते तो सम्भवतः हालत न बिगड़ती। महीने में बीस रुपये का तो वे दूध ही पी जाते हैं। मकान का किराया तेईस रुपये है। गेहूँ, चांवल कन्ट्रोल तो हुए पर भाव सवा-तीन सेर और और डेढ़ का है। महीने में सौ रुपये तो राशन जुटाने में ही खर्च हो जाते हैं।

मध्यवर्ग की उस पोली धरती पर यह परिवार कितने दिन टिका रहेगा, यह रमेश के अनुमान के परे की बात है। वह पाता है कि इस युद्धकाल में वह सम्पूर्ण वर्ग नष्ट हो गया है। अधिकतर अपाहिज परिवार अन्तिम साँसें ले रहे हैं। पहले तीन-चार रुपये माहवार पर कहार के लड़के नौकर मिल जाते थे। वह कुछ काम से फ़ुरसत पा जाती थी। आज नौकर रखना और हाथी पालना बराबर है। यहाँ घर का काम-काज अब बहुत बढ़ गया है। पुष्पा सब नहीं सँभाल पाती। इस तरह यह गृहस्थी अधिक दिन नहीं चल सकती। रमेश आजकल बहुत सोचने के बाद पाता है कि उसकी शक्ति का दुरुपयोग छोटी-छोटी बातों में हो रहा है। लकड़ी का कन्ट्रोल है। जब दूकान

पर लकड़ी आती है तो लोग ऐसे टूटते हैं, जैसे गिद्ध किसी लाश पर ! वह अपने पुराने संस्कारों के कारण दूर खड़ा का खड़ा रह जाता है। अच्छी लकड़ी छूँट जाती है और नीम की या और कोई लकड़ी उसे मिलती है। उस कच्ची लकड़ी को जलाते और आग फूँकते-फूँकते पुष्पा की आँखें आँसुओं से भर जाती हैं। उन गुलाबी आँखों को पाकर वह आज कहाँ झुँझलाती है। उनका पड़ोसी कन्ट्रोल का इन्सपेक्टर है। वह मस्त जीव है। वह सदा नई-नई बातें रमेश को सुनाया करता है। उसने एक बात हाल में कही थी कि वे एक कस्बे में कपड़े बेचने की व्यवस्था देखने के लिए गये थे। कपड़े के बँटवारे की बात सुनकर लगभग बीस हजार किसान तहसील पहुँचे थे। बरसात के दिन, मेंह की झड़ी, फिर भी वे कपड़े पाने की आशा में खड़े थे। लेकिन सौदागर ने मँहगे दामों में पहले ही कपड़ा चोर-बाजार में बेच दिया था। बचा हुआ कपड़ा वहाँ बेचकर उसने सुनाया कि अब माल नहीं है। उस खड़ी जनता को इस पर विश्वास नहीं हुआ। कुछ नौजवान आगे बढ़कर सौदागर से झगड़ा करने लगे। पुलिस ने बलवा करने के अपराध में उनको गिरफ्तार कर लिया।

कपड़े का यह व्यापार—मिट्टी के तेल की एक बोतल का दाम डेढ़ रुपया ...और सन् १९४२ के आन्दोलन में गाँव वालों से वसूल किया गया अठारह हजार का सामूहिक जुर्माना ! गाँव की भीड़ पर गोलियाँ चलायी गई थीं, जिससे गाँव के ग्यारह नवयुवक मरे थे।...गाँव की औरतों पर अत्याचार के...; गाँव वाले अभी इन आफतों के बाद ठीक तरह उठ भी नहीं पाये थे कि कपड़े का अकाल, नमक का अकाल, मिट्टी तेल का अकाल, गुड़ का अकाल...! धरती अन्न देती है, वह भी उनके घरों में नहीं रहने पाता है। मुरझाये मर्द, श्रीहीन स्त्रियाँ,

नंग-धड़ंग बच्चे···! वह किसानों की दुनिया, जहाँ रमेश की कोई पहुँच नहीं है। उसका यह अपना मध्यवर्ग है, जिसकी धरती पर माताओं, बहुओं, बहनों का जीवन भी नष्ट हो रहा है। वे सब अस्वस्थ हैं और इस युद्धकाल के झोकों को सहने की सामर्थ उनमें नहीं है। कहा तो था पुष्पा ने---बिना नौकर के काम नहीं चलता है।

रमेश एक लड़का सात रुपया माहवार तनखाह और खाने-कपड़े पर लाया था। चुपके सुनाया था पुष्पा को कि वह चमार का लड़का है।

पुष्पा चौंक उठी थी। उसके पुराने संस्कारों पर यह कड़ी चोट थी। कहा था हँस कर---अब यह भी देखना बदा है।

बड़ी देर तक बहस करने के बाद समझौता हुआ था कि वह केवल बच्चों का तथा घर का ऊपरी काम करेगा। कुछ दिन तक यह व्यवस्था चालू रही। मांजी को एक दिन यह भेद ज्ञात हो गया। आॉफिस से लौटने पर रमेश को पता चला कि नौकर का हिसाब कर दिया गया है।

रमेश तो चुप रहा, पर पुष्पा की आस्था उस धर्म की निष्ठा पर से उठ गई। उसे परलोक सुधारने की चिन्ता नहीं है! वह बहुत झुँझलाई। रमेश ने एक बार पुष्पा को देखा। वह बच्चों को मारा करती है। शाप देती है कि उनको कोई रोग भी नहीं होता है कि वे मर जावें। पुष्पा के उन आशीर्वादों के बाद भी बच्चे अपनी शरारतों से बाज नहीं आते। अन्त में पुष्पा अपनी हार मान लेती है। क्या रमेश नहीं जानता कि आज सदियों के बाद इन परिवारों के ढाँचों पर समय का एक बड़ा झोंका टकराया है। यहाँ तो वही परम्परावाली व्यवस्था चालू थी। आज भी कुम्हार सदियों से वही मिट्टी के बर्तन बनाया करता है। उनका वही पुराना स्वरूप है। किसान के पास वे ही पुराने

हथियार हैं। परिवार की बहू आज उसी भाँति खाना, चौका-बर्तन के काम के साथ-साथ बच्चों की माता बनी हुई जीवन व्यतीत करती है। इन परिवारों का आर्थिक-ढाँचा आज के इस युद्धकाल में बिलकुल नष्ट हो गया है। कल की दुनिया में ये खड़े नहीं रह पावेंगे। या तो इनका कोई नया स्वरूप बनेगा अथवा ये उस नव-निर्माण में दीख नहीं पड़ेंगे। देहात की धरती के बाद यह धरती भी उसी भाँति बंजर और बेकार हो गई है। विज्ञान की प्रगति से दोनों का कोई सम्बन्ध नहीं है। इतिहास की पुरानी पगडंडियों की चमक वे पीछे मुड़कर देखते हैं, पर नया रास्ता कहाँ पा सके हैं। वे वर्षों से इसी भाँति चुपचाप खड़े हैं। उनका आर्थिक ढाँचा कभी से टूटता-टूटता हुआ आज बिलकुल चकनाचूर हो गया है।

माँजी बार-बार कहती हैं कि आजकल के लड़के नास्तिक हो गये हैं। इसीलिए यह सब हो रहा है। उनके जमाने में इतनी कठिनाइयाँ नहीं थीं। तब आज की हालत पर कोई सोच तक नहीं सकता था। पिछली लड़ाई का समय भी ऐसा न था। वह सांत्वना रमेश और पुष्पा के लिए सन्तोषप्रद नहीं है। मांजी द्वारा कथित वह पिछला जमाना...! तब ये परिवार अपनी अन्तिम रोशनी में टिमटिमा रहे थे। उस युद्ध के बाद दुनिया में जो आर्थिक संगठन हुआ, उसका भारी असर आज पड़ा है। लेकिन इसी शहर के व्यक्तित्व में एक उच्च मध्यवर्ग रहता है, जो जागीरदारों और पुराने सामन्तों की टूटी धरती से पनप रहा है। वह यदा-कदा उस वर्ग के यहां सन्ध्याएँ व्यतीत करता है। वहाँ स्वादिष्ट भोजन और बढ़िया शराबें चलती हैं। उस सुख का क्षणिक अनुभव उसकी तृष्णावाली आँखें खोल देती हैं। उन लोगों की चरबी प्रति दिवस सुबह को व्यवहार में लाये जाने वाले 'साल्टों' और 'बाइकारबोनेटों के बाद भी

बढ़ती जा रही है। उनका कथन है कि गरीब भूखा पैदा होकर, एक दिन भूखा ही मर भी जाता है। उसके भाग्य में जीवन भर संघर्ष करना ही लिखा हुआ है। फिर इसके बाद उन लोगों की महफिलें आती हैं। वे रास और रंग··?

मालती पूछती थी—ये कौन हैं?

दोस्त खिलखिला कर हँसते थे—नहीं पहचानती हो?

मालती सावधानी से रमेश की ओर आँखें गड़ाकर अपनी अज्ञानता प्रकट करती थी कि पहले-पहल आये हैं।

दोस्त कहकहा लगा कर कहते—शहर के बिगड़े हुए रईस हैं।

वह नारी अपनी आर्थिक-दासता की बात भूलकर, एक चित्री जीवन-रेखा सी अपने को साबित करती है। बार-बार अपनी मोहनी शक्ति से सब को हरा देने की ओर सचेष्ट है। नशे की खुमारी में कई बार रमेश ने सोचा है कि यह मालती है और वह पुष्पा··! मालती को सावधानी से भाँपता है, तो एकाएक लगता है कि वह एक छूत की बीमारी है; जो प्लेग से कम खतरनाक नहीं है। मालती अक्सर उसे ताका करती है, मानो पूछती हो—तुम्हारा आर्थिक-दरजा कौन सा है? यहाँ तो सब··!

पुष्पा, तीन बच्चे, एक सौ पच्चीस रुपया माहवार तनख्वाह और दो हजार का छोटा-बड़ा लेन-देन; फिर चौथे बच्चे की सम्भावना; पुष्पा की बिगड़ती हुई सेहत और परिवार की सीमाएँ··!

मालती और उसके साथी··! वह उनसे दूर रहना चाहता है। एक दोस्त डेढ़-दो सौ की दो साड़ियाँ मालती के लिए लाये थे। पर मालती ने खास अहसान नहीं माना था। बोली थी कि

पहले तो पन्द्रह-बीस में मिलती थीं। अब चोर-बाजार के करिश्मे जो न कर दिखलावें।

पुष्पा, वही चौका-बर्तन, चूल्हा, बच्चों की फसल...! मांजी का वह कथन कि उनके कुल की देवी को एक बकरे की बलि पिछले सात-आठ साल से नहीं मिली है। कल स्वप्न में देवी ने दर्शन दिये थे। वह बहुत रूठी हुई थी।

यह बकरों की बलि...! यदि कसाई नित्य बकरे के माथे पर रोली लगाकर उसे काटें, तो क्या वह बलि कहलावेगी? वे सम्भवतः धर्म-भीरु नहीं हैं! यह तो उनका पेशा है। मां का वह सवाल......। यह धर्म कहाँ मध्यवर्ग को जीवित रख सका है।

मालती ने अपनत्व दिखाते हुए पूछा था—फिर कब आवेंगे आप?

वह कुछ उत्तर न दे सका था। जानता था कि वह अब नहीं आयेगा। चुपचाप दोस्तों की आड़ में बाहर निकल गया। उसे डर था कि उसकी जेब में जो आठ-दस रुपए दवा लेने के लिए पड़े हुए हैं, कहीं उनको मालती अपने लुभाव से ठग न ले। वे आठ-दस रुपए तो उसके लिए आठ-दस सौ रुपये के बराबर हैं। मालती को देखकर उसे बहुत भय हुआ था! यह वह जानता है कि इन नारियों की आर्थिक-दासता को एक वर्ग अपनी आर्थिक-व्यवस्था के साथ बांध चुका है। वह अपने को जागीरदारों और सामन्तवादियों के नाती-पोतों के बीच की समझती है। वह अपना वर्ग उसीको मानती है। वह कभी भी अपनी दासता को उनके आगे स्वीकार नहीं करती है और न वह उनका बड़प्पन स्वीकार करती है। वह जिस धरती पर रहती है, वहाँ नारी का अपमान, अनादर आदि फैला हुआ मिलता है। वे सब फिर भी वहाँ रहती हैं, वहीं पैदा होती हैं;

अपना व्यवसाय चलाती हैं और वहीं मर जाती हैं। शहर के व्यक्तित्व में उनका वह मोहल्ला सदा ही गतिशील रहा है। लेकिन आज वह गति भी स्थिर हो चुकी है।

आजकल रमेश बात-बात में स्थितियों तथा अनुभवों की तुलना करता है। यह तुलना फिर भी मन का मैल साफ नहीं करती है। परिवार शहर में फैले हुए हैं। वेश्याओं का परिवार भी एक सारे मोहल्ले में फैला हुआ है, लेकिन वहां की चमक उसे कभी शोभनीय नहीं लगी है। अक्सर वह नारी की इस मर्यादा पर सोचता है। समाज में कई विचारों के परिवर्तन आये; राजनीतिक तूफान उठे; धार्मिक आन्दोलन चले; लेकिन समाज की मजबूत बेड़ियों की कुछ लड़ियाँ ही टूट सकी हैं। समाज की नीति, विचार, मर्यादा आदि पर अभी और मजबूत प्रहार चाहिए। वह परम्परा जो चालू है, उसके ऊपर राजनीतिक बवंडर आकर उड़ जाता है। परिवार छितर कर टूट गये, फिर भी उसके बीच का एक झूठा-बन्धन चला आ रहा है। जनता जो कुछ सोचती है, उसके विचारों में अभी वही रूढ़िवादी हड्डियों का मजबूत ढांचा है। मालती और पुष्पा···! वे उसके मित्र····! पुष्पा की सेहत भली नहीं रहती है। उसे आराम चाहिए। यदि रमेश अपनी आर्थिक-स्थिति सुधार सकता तो सब कुछ आसानी से निभ जाता। अपने दोस्तों से वह अपनी स्थिति की चर्चा करे तो शायद वे उसका मजाक उड़ावेंगे। वे दोस्त दिल बहलाने के लिए मालती के यहाँ आते हैं। उनका कहना है कि वही पुराने देवता कहने वाले संस्कार उनकी पत्नियों के हैं—बिल्कुल सड़े-गले! लाख चेष्टा करने पर भी वे आधुनिका नहीं बन पाती हैं। वे अपने पातिव्रत धर्म से सीता-सावित्री को बार-बार चुनौती देती हैं। यही दलील शायद मालती भी देगी कि वह आधुनिक विश्वामित्र की तपस्या भङ्ग

करने की क्षमता रखती है। वह अप्सरा ही है, आज कलयुग में कुछ धन-कुबेर देवता रह गये हैं। लेकिन उनकी गिनती की संख्या है।

यह मध्यवर्ग की नारी पुष्पा···! समाज के इस पुराने वातावरण में कई बार राजनीतिक आंधियां आयी हैं। आज भी परिवारों पर उनकी स्पष्ट छाप दीख पड़ती है। उन राष्ट्रीय झोंकों के साथ बहुत पहले कभी पुष्पा घर की चहारदीवारी फांद कर निकलती थी। उसकी वह केसरिया-साड़ी तार-तार कर के फट गयी और चर्खा टूटकर आज परिवार के कबाड़खाने में पड़ा हुआ है। बच्चे मां से उस खिलौने को मांग लेने का बार-बार आग्रह करते हैं। लेकिन देव-मूर्ति की भांति पुष्पा उसकी रक्षा करना चाहती है। कई स्मृतियाँ आज तक साथ हैं। वे विसारी नहीं जा सकती हैं। असहयोग-आन्दोलन के दिनों में उसने भी नमक का कानून तोड़ने की चेष्टा अपनी सहेलियों के साथ की थी। नमक तो नहीं बना, लेकिन चौबीस घंटे उसे सब के साथ जेल में रहना पड़ा था। वह राष्ट्रीय-धरती आज के उसके परिवार से बहुत दूर हट गई है। उसे तो समय ही नहीं मिलता है कि घर से बाहर जा सके। आज राष्ट्रीय धरती मानो चूल्हा, चौका बर्तन, बच्चों के प्रति झुँझलाहट और हर दूसरे वर्ष मां का प्रमाणपत्र पाने भर में सीमित रह गयी है। वह मोहल्ले की और औरतों की ओर देख कर पाती है कि वे सब की सब—उनकी सारी जाति, आज गृहस्थी की चहरदीवारी के भीतर कैद हो गयी हैं। पुष्पा का तो दम घुटने लगता है। वह परेशान हो जाती है। अब के उसका खयाल है कि चुपके मौत आ जावेगी। चलो रोज के झगड़ों से छुटकारा मिल जायगा। मौत के साथ नष्ट हो जाने की भावना सुखद लगती है। वह रहस्य-सी रह जानेवाली बात! फिर एकाएक रमेश आता है।

वह अब उसके समीप अधिक से अधिक समय व्यतीत करता है। पुष्पा मौत की बात भूल जाती है। वह जब कभी बहुत च्चिन्तित-सी घर की आर्थिक-स्थिति की बात रमेश से करती है, तो वह हँसी में टाल देता है। भारी संकोच के साथ कोई मांग आगे रखती है और रमेश आश्वासन देता है कि वह पूरी करेगा। रमेश उस परिवार की रक्षा करने पर उतारू हो गया है। वह जान रहा है कि पुष्पा की रक्षा करना उसका पहला कर्तव्य है।

रमेश और पुष्पा, युद्ध के बाद के काल के लिए परिवार के नव-निर्माण का एक नया ढांचा बनाते हैं। पुष्पा इस बात पर अपना अधिक अधिकार समझती है। रमेश उसकी इस उत्सुकता को अपेक्षित गिनता है। लेकिन वह पड़ोस के इन्सपेक्टर की श्रीमती जब कभी मुरशिदाबाद की सुन्दर साड़ी पहन कर आती है, तो वह सोचती है कि भविष्य में वह भी एक मोल लेगी। सोना सस्ता होते ही कानों के लिए छोटे-छोटे नए 'टाप्स' बनवा लेगी। उसे गाने का बड़ा शौक है। जब पड़ोसियों के रेडियो पर रिकार्ड बजते हैं, तो वह कुछ देर तक बर्तन मांजना भूल कर उन गानों को गुनगुनाती रह जाती है। पहले वह परिवार के साथ महीने में एक बार सिनेमा देख आती थी। आज तो एक बार सिनेमा जाने में आसानी से आठ-दस रुपया खर्च हो जाता है। चार साल से वे वहाँ नहीं जा सके हैं। इस बीच शहर में दरजनों फिल्में आकर चली भी गयी हैं। वे सिनेमा की बात सोच तक नहीं सकते हैं। फिर भी उसका मन सिनेमा जाने के लिए तड़पता है। इसे भविष्य के लिए नहीं छोड़ा जा सकता है। वह इन्सपेक्टर की बीबी उसे बहुत बातें सुनाती है। सोने का भाव अट्ठासी है। उसकी नीले नगों वाली अंगूठी नब्बे में पड़ी है। वह कई फिल्मों की चर्चा भी

करती है। कहती है कि उसके बाबूजी सीधे हैं; न हुआ और कोई, नहीं तो आज तक लाखों रुपये जमा कर लेता। अपना अभिमान का प्रदर्शन करती है कि यदि उनको चीनी या मिट्टी के तेल की जरूरत हो तो वह प्रबन्ध कर देगी। कपड़ों के लिए वह कोई आश्वासन नहीं देती है। बड़ी मुश्किल से एक बार पेटी-कोट के लिए मारकीन दी थी। वह कभी-कभी पुष्पा को अपने 'पासों' पर सिनेमा जाने का निमन्त्रण देती है। पुष्पा आसानी से उसकी बात टाल देती है; यह कह कर कि बच्चे और घर गृहस्थी के काम से फुरसत कब मिलती है। उन लोगों का नया रेडियो आया है। वह बार-बार उसकी चर्चा करती है। कहती थी कभी डेढ़-सौ का मिलता था, पर आज तो साढ़े चार सौ देने पड़े हैं। जमाने को कोसती है। पुष्पा सोचती है कि लड़ाई के बाद सस्ता हो जाने पर वह सेकंड-हैंड रेडियो लेगी और दिन को काम-काज से थकी-मांदी चारपाई पर लेटी-लेटी रिकार्डों का प्रोग्राम सुना करेगी। यह उसकी बड़ी पुरानी हवस है। और कपड़े सीने की मशीन भी लेगी, दरजी का बिल देख कर आज-कल बुखार चढ़ जाता है।

मांजी निश्चय कर चुकी हैं कि अबके नवरात्रि के दिनों में इष्ट-देवी की मनौती करने बलि दी जायगी। बिना इसके अरिष्ट कटता नजर नहीं आता है। इसका रमेश विरोध करता है; तो पुष्पा कहती है कि तुम्हारी आस्था इस पर नहीं है, हमारी तो है। हम औरतों ने अभी भगवान से लड़ने की नही ठहराई है। आप समर्थ हैं, लेकिन हम परिवार की सीमाएँ कहाँ तोड़ पा रही हैं। इसीलिए उन सनातन विचारों, विश्वासों और धारणाओं को आसानी से नहीं त्याग सकती हैं। मालती का तर्क होगा कि समाज के लिए सनातन से उसका वर्ग इसी भांति त्याग करता आ रहा है। आज भी हमारी धरती उसी तरह की

है। हम पर समय का कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा है। इस कलयुग में हम उर्वशी, मेनका आदि हैं। लेकिन मानव वह बलिदान का सवाल, बकरे से अधिक अपने स्वार्थों के लिए करता है। इस युद्ध ने कई बातें साफ करदी हैं। दुनिया का पुराना नक्शा मिट गया, कल नया नक्शा सामने आवेगा। आज हरएक देश का नौजवान अपने मुल्क की आजादी की बात सोचता है और अपने देश की भूगोलिक सीमाओं के बाहर वाले देशों में रहने वाली जनता के प्रति उसकी सहानुभूति है। आज विचारों का दायरा, राष्ट्रीय से अन्तर्राष्ट्रीय परिधि पर पहुँच चुका है। आज इस युद्ध ने मानव की कोमल भावनाओं को उभार कर अभी किसी भावुक-स्थिति को जन्म नहीं दिया है। वह भावुकता पिछले महायुद्ध के बाद तो बड़ी तेजी से फैली थी। मानव-समाज का अपना क्षेत्रफल उसके प्रभाव से अलग नहीं रह सका था।

पुष्पा का जी ठीक नहीं रहता है। बच्चे बार-बार तङ्ग करते हैं। माँजी चूल्हा-चौका करते-करते बार-बार अपने भाग्य को कोसा करती है कि उसकी पूजा-पाठ और यात्रा करने की उम्र इस झूठे माया-जाल के बीच नष्ट हो रही है। रमेश घर आता है तो उसका मन करता है कि वह बाहर भाग कर चला जाय। वहाँ उसके लिए आज कोई आकर्षण नहीं है। वह बड़ी रात तक यार-दोस्तों की चौकड़ी में समय व्यतीत करता है। चुपके घर लौट कर सो रहता है। सुबह देर से उठता है। वह घर के हरएक व्यक्ति से दूर रहना चाहता है। उसे अब मालती की दुनिया भली नहीं लगती है।

पुष्पा ने रमेश को बुलाने के लिए बड़ा लड़का भेजा था। रमेश चार दिन से पुष्पा के पास नहीं गया था। पुष्पा पड़ी

थी। बोली अब, "जी घबराता है। डाक्टरनी को बुलवा कर दिखला दो।"

"दाई नहीं आई थी?"

बात की अवज्ञा कर पुष्पा बोली, "ताली सिरहाने के नीचे से निकाल लो। सन्दूक में रुपया रखा है। जो फीस लगे दे देना।"

रमेश ने पुष्पा की बुझी आँखें देखीं। वह चुपचाप बाहर निकला। वह डाक्टरनी को लावेगा। पुष्पा की माँग सही है। वह अबके बहुत कमजोर है। डाक्टरनी ने आते ही दाई को बुला लाने का सवाल किया। माँजी स्थिति समझ कर, इस नई फसल को काटने की तैयारी करने लगी। उसमें एक नया उत्साह आ गया था।

पुष्पा के बिना तकलीफ के लड़का हुआ। माँजी ने प्रण किया कि बकरा न सही, श्रीफल की बलि अबके वह कुल की देवी को अवश्य भेंट करेगी। इस युद्धकाल में इस नये प्राणी को पाकर पुष्पा खुश नहीं हुई। रमेश उस मध्यवर्ग पर सोचता है, जो नवरात्रि मनाता है, वहाँ जौ बोया जाता है। दूर जो धरती गाँवों में है वहाँ अन्नदाता किसान रहता है और नारी की अपनी धरती...! समाज के कई प्रश्नों पर अब वह चुपचाप कुछ सोचता-सोचता रह जाता है।

कल्पवृक्ष

मधुसूदन बार-बार चाहता है कि वह शशि की हँसी को भुला दे। वह शशिबाला जिसे कि वह शशि कह कर पुकारता था।

रेलगाड़ी तेजी से अरावली की श्रेणियों के बीच से रेंगती हुई बढ़ रही थी। अभी-अभी सुबह हुआ है! वे पहाड़ियाँ अलसा कर एक धुँधले वातावरण के बीच से उठी थीं। रेल की लाइनें साँप की भाँति टेढ़ी-मेढ़ी पीछे छूट रही थीं। कभी तो गाड़ी बड़े-बड़े चट्टानों के दर्रों के मध्य से गुजरती थी। फिर नदी के पुल को पार करने लगती थी। आगे दूर सा एक किसान मारवाड़ के अतीत का कोई गीत गा रहा था। और गाँव के कुएँ से पानी निकाल कर अपनी पत्नी को पिलाता हुआ वह युवक राजपूत भी पीछे छूट गया था।

पुरातन......! कभी मुगल सेनाएँ इन घाटियों से देश के भीतर प्रवेश करना चाहती थीं। दूर दिल्ली से आकर वे यहाँ भटकती रहीं और एक दिन पराजित होकर लौट गई थीं। वह इतिहास आज किताबों के पन्नों में कुछ अक्षरों भर में चमकता है। अन्यथा लोगों के बीच कई घटनाएँ आज तक जीवित सी लगती हैं। वह तार के खंभों पर चिड़ियाएँ बैठी हुई हैं। दूर आकाश में चील उड़ रही है। गाड़ी की अपनी गति है और मधुसूदन के जीवन की.......!

छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हैं। जो भले ही हिमालय की भाँति बड़ी शिखर वाली न लगें; इन घाटियों में तेज तूफान न आवें, किन्तु वहाँ मानवता का जो महान इतिहास छुपा हुआ है, उसे आसानी से नहीं भुलाया जा सकता है। यह जीवन ही कब-कब

छोटी-छोटी बातों से अलग रहा है। मन भी तो कभी-कभी छोटी-बड़ी घटना को कच्चे बाटों से तोलता है। मधुसूदन चुप-चाप कुछ पिछली जीवन-घटनाओं को फैलाकर, उन पर विचार करना चाहता है। मन में कुहरा जम गया है। वह मोह की किसी जंजीर को तोड़ने में बार-बार अपने को असमर्थ पाता है। भावुकता का वह झोंका उसके जीवन को गति और निर्जीव शरीर को प्राण देता है।

कहती थी शशि, "प्रेम अंधा होता है मधु !"

मधुसूदन इसका कुछ उत्तर सोचे कि खिलखिला कर हँस पड़ती थी शशिबाला। वह तो उसे टकटकी लगा कर देखता भर रह जाता था।

आज अब वह चुपचाप उन छोटी-छोटी घटनाओं पर विचार करना चाहता है। मन में कुहरा सा जम गया है। वह मोह की उन जंजीरों को तोड़ने में असमर्थ है। जान कर कि वह साधारण भावुकता उसके जीवन को गति प्रदान करती है। उसे प्राणदान देती है।

—रेल के डिब्बे में और भी मुसाफिर थे। सामने कोई सैनिक अधिकारी बैठा हुआ था। उसकी बुश-शर्ट पर लगे चिन्हों से स्पष्ट था कि वह कर्नल है। उसने अपनी अटेची खोल कर पनीर का डिब्बा निकाला। उसका टिन काट कर वह उसे बिस्कुट के साथ खाने लगा। युद्ध समाप्त हो गया। सम्भवत: वह सुदूर पूर्व की ओर से लौट रहा है। युद्ध-काल के अवशिष्ट-चिन्ह अभी नहीं मिटे हैं और नागरिक-जीवन में अभी वही पिछले वर्षों वाली दुरूहता है। कर्नल के चेहरे पर बुढ़ापे की छाया फैल रही थी। बीते हुए वर्षों में समेटी गंभीरता की रेखायें चमक रही थीं। उसके विजय-उपहार चिन्हों से लगता था कि उसने पिछले महा-युद्ध में भी भाग लिया था। यह युद्ध कब

करवट बदल ले, साधारण व्यक्ति नहीं जानता है। भले ही उस का प्रति दिन का संघर्षमय जीवन है !

और वह दूसरी बर्थ पर एक बच्चा बैठा हुआ है। उसकी माँ लम्बा घूँघट निकाले हुए है। उसका पहनावा मारवाड़ की अतीत की याद दिलाता है। वह कई-कई सजीव रङ्गों से पूर्ण है। यदा-कदा वह बच्चे के साथ बैठे हुए और लोगों को भी कनखियों से देख लेती है। उस माँ के प्रति अपार श्रद्धा और स्नेह वह अनायास बटोर लेता है। वह नटखट बच्चा अपनी शरारतों से नहीं चूकता है। कभी तो माँ के घूँघट हटाने की चेष्टा करने में कुछ सफलता पा जाता है। उसका वह व्यवहार उसे पसन्द नहीं है, जो कि व्यर्थ उसकी दिलचस्पी को बढ़ा देता है कि माँ कहाँ छुप गई है ! माँ उसे अपने पास बुलाती है। वह पास आकर माँ का चेहरा पढ़ लेना चाहता है। कुछ देर बाद भी जब माँ अपना घूँघट नहीं हटाती है, तो वह उलझन में स्वयं प्रयत्नशील हो जाता है। पहले मां इस खेल में आनन्द लेती है और फिर सावधान होकर सिकुड़, घूँघट के भीतर छुप जाती है। वह अपने को बच्चे के 'लुका-छिपी' वाले खेल से बरी पाती है। अब वह बच्चा कांच पड़ी खिड़की के पास खड़ा होकर बाहर देखने लगता है। सारसों के एक झुण्ड को उड़ता हुआ देख कर तालियाँ पीटता हुआ खुशी-खुशी मां के पास जाता है। मां तो चुपके उसे अपने आँचल के भीतर छुपा लेती है।

खिड़की से बाहर जो दुनिया है, वह तेजी से पीछे छूटती जा रही है। वह पीछे छूट जाने वाली बात कल इतिहास में रल जावेगी। सामने एक बड़े किल्ले पर दृष्टि टिक जाती है। सामंतवादी-युग में महीनों तक मुगलों की सेनाएँ वहाँ घेरा डाले रहीं और अंत में पराजित होकर लौट गईं। सामन्तवाद की वे

रेंगती हुई सल्तनतें कछवे की भाँति कुछ सौ वर्ष जीवित रहीं। अजगर की भाँति व्यर्थ हजारों वर्ष जीना उनके भाग्य में नहीं लिखा हुआ था। और मनुष्य के जीवन की सीमाएँ······!

मधुसूदन कब-कब जीवन घटानाएँ बटोर लेने में सफल रहा है। वह तो आसानी से सब कुछ बखेर देना भर जाना है। यदि शशि ने कभी कुछ कहा है तो वह उसकी अपनी बात है। मधुसूदन तो तब उन पर अधिक विचार करना नहीं सीखा था। वह दुनिया को बहुत सरल समझता था। उसकी दृष्टि में वहाँ अधिक रुकावट नहीं थी। आज भी वह जीवन को उलझा देने का पक्षपाती नहीं है। वह आसानी से आगे बढ़ जाना चाहता है। उसकी महत्वाकांक्षाएँ इतनी नहीं हैं कि उसे कहीं जरा भी अड़चन पड़े। लेकिन कभी तो वह अनायास ही कुछ बातों पर विचार कर लेना चाहता है। तभी एकाएक स्मृति में एक चित्रा चित्र उतर आता है। वह है उसकी माँ का बहुत बड़ा आयल-पेंटिंग! वह न जाने कितनी रातों उसके सामने खड़ा रहा और टकटकी लगा कर उसे देखा करता था। मां की सच्चे काम वाली बनारसी साड़ी, लम्बी नाक, बड़ी आँखें और सुन्दर चेहरा! जब उसकी मां जीवित थी तो वह उसके समीप जाता था। मां हँसती थी कि आठवीं कक्षा में पढ़ने वाले उस पुत्र का वह स्नेह तो चार-पाँच साल के बच्चे की भाँति था। इस व्यंग के बाद भी उसके मन की भावना थी कि वह सदा अपनी मां के समीप रहे। वह उसके कपड़े, गहने, बुनने की सलाइयों तथा अन्य छोटी से छोटी चीज को बहुत सावधानी से छूता था।

मां की फटकार पाकर भी वह सदा उसे भाँपा करता था। जितना ही वह उससे अलग रहना चाहती थी, वह उतना ही उसके समीप, अति समीप पहुँचना चाहता था। उसने कभी

अपनी मां के चेहरे पर हँसी नहीं पाई। वह तो सदा मूक रहती थी। बहुत कम बातें करती। घर का सारा प्रबन्ध नौकरों के सुपुर्द था। पिता सरकारी नौकर थे और दौरे पर अधिक रहा करते। मधुसूदन को एक पबलिक स्कूल में भरती करके वे निश्चित हो गए थे। मधु तो बोर्डिङ्ग में अपने को एकदम अकेला पाता था। माँ की याद आती। आगे एक साल तो उसे अपने पिताजी का पत्र मिला था कि उसकी मां किसी अच्छे सेनिटोरियम में भेज दी गई है। उसकी सेहत बिगड़ गई थी और डॉक्टरों ने यही सलाह दी।

इस समाचार को सुनकर मधुसूदन का मन बहुत व्याकुल हुआ था। लेकिन तभी शशिबाला ने उसके जीवन में प्रवेश किया। शशि कौन थी, यह उसने देर से जाना। लेकिन मां जिस नारी स्नेह से दूर भागती थी, वह शशि में अपेक्षित था। शशि को वह समझ लेता था। मां की भावना की जानकारी कठिन लगती थी। मां के प्रति एक पवित्रता की भावना को फिर भी वह शशि में ढूँढ लेना चाहता था। शशि के बहुत समीप पहुँच कर उसने मां वाली धुधकार नहीं पाई। शशि ने यह कभी नहीं कहा कि वह इंटर में पढ़ने वाला लड़का, उसके इतने समीप क्यों रहता है? शशि बहुत बातूनी थी, लेकिन मधु तो गुमसुम सा खड़ा रह कर सब सुना भर करता था। शशि जब कुछ सवाल पूछती थी तो वह उनका उत्तर नहीं देता था। उसने शशि से कभी कुछ नहीं कहा। शायद इसी भाँति उसके जीवन में रह जाता, यदि एक घटना घटित नहीं होती।

शशि का पत्र मिला था कि उसकी मां की सेनिटोरियम में मृत्यु हो गई है। मधुसूदन के पिता ने वह पत्र लिखवाया था। शशि ने अधिक कुछ और न लिख कर तीन-चार लाइनों में पत्र समाप्त किया था कि जो भगवान के प्यारे होते हैं, वह उनको

जल्दी अपने पास बुला लेता है। माफी माँगी थी कि यह भार उसे सौंपा गया है।

उस रात्रि भर मधु को नींद नहीं आई थी। बार-बार उसे अपनी माता का उदास चेहरा याद आता। वह सुबह की गाड़ी से घर के लिए रवाना हुआ था। अपने घर न जाकर वह शशि के स्कूल पहुँचा था। शशि उसे देख कर घबरा गई थी। वह तो अपनी मां की मौत की सारी बातें सुनने के लिए आया था। शशि को उसकी पूरी जानकारी कब थी। वह अपनी लाचारी में चुप रही। मधु ने उसे फटकारा था कि वह झूठी बात है। उसकी मां कभी नहीं मर सकती है। शशि निरुत्तर हो गई। वह उसकी जिज्ञासा की केवल अवहेलना करके सिर नीचा किए खड़ी भर रही। मधु ने उससे पूछा था कि किस बुनियाद पर उसने वह झूठा पत्र लिखा था। शशि उस आधार की चर्चा अपने पत्र में ही कर चुकी थी। अधिक क्या कहती। लेकिन शशि संकोच में पड़ कर जितनी ही दबती गई, मधु उतनी ही तेजी से उसे डाटने-फटकारने लगा। चारों ओर लड़कियाँ इस अजनबी तमाशे को देखने के लिए खड़ी हो गई थीं। शशि लड़कियों के उस गिरोह के बीच अपने को ऐसी स्थिति में पाकर संकोच से गड़ गई! अभी तक वह मधु जो मन में आता कह ही रहा था। शशि का मन बाँध तोड़ कर उमड़ आया। गुस्से से उसका चेहरा लाल पड़ गया। ताव में वह तेजी से बोली—सुनो मधुसूदन जिस बात के लिए तुम मुझे कोस रहे हो, उसके लिए तुम्हारे पिता दोषी हैं। उनका चरित्र ठीक नहीं है! तुम्हारी मां क्या करती! उन्होंने उसकी कोई परवा नहीं की। दवा तक की सही व्यवस्था न कर सके। वह बेचारी अपाहिज की भाँति सेनिटोरियम में मर गई। और तुम्हारे पिता अपनी नई रखेल के साथ काश्मीर—भ्रमण कर रहे हैं। पिताजी को उन्होंने पत्र

लिखकर, उनसे अनुरोध किया था कि मैं तुमको यह सूचना दे दूँ। क्यों तुम मुझे अब क्या देख रहे हो ?

उस उत्तर से मधुसूदन अवाक रह गया था। उसने शशिबाला की ओर देखा। वह चुपचाप खड़ी थी। वह वहाँ रुका नहीं। फिर उसने चारों ओर देख कर पाया कि वह लड़कियों के एक बहुत बड़े झुण्ड से घिरा हुआ था। शशि ने एक बार आँखें उठा कर नीची करली थीं। अभी भी उसका चेहरा गुस्से में तमतमाया हुआ था। मधुसूदन का वह व्यवहार अनुचित था। लेकिन जो बातें शशि ने कही थीं ! मधुसूदन वहाँ अधिक देर तक खड़ा नहीं रहा। चुपचाप लौट आया था।

फिर वह दिन भर फक्कड़ों की भाँति शहर में इधर-उधर मारा-मारा फिरता रहा। पिता की नई रखेल पर सोचता; किन्तु पिता तो बहुत उदार थे, उनमें सहृदयता कूट-कूट कर भरी हुई थी। अपने गणित के अध्यापक से वह जितना ही घबराता था, उतना ही सरल उसने अपने पिता को पाया। उसकी माँ ने तो कभी उसका ठीक सा दुलार तक नहीं किया था। माँ के समीप जितनी ही वह पहुँचने की चेष्टा करता, उतनी ही दुतकार कर वह उसे अपने से दूर रखती थी। माँ के स्नेह और ममत्व को अपने हृदय में भर लेने की तृष्णा बार-बार उठती थी। वह सब न पाकर वह नितांत एकाकी जीवन व्यतीत करता था। अपने संग के लड़कों के साथ खेलने का कभी उसके मन में उत्साह नहीं हुआ। न उसने कभी किसी खास वस्तु के प्रति अपने सम्मान का प्रदर्शन ही किया था।

जाड़े के दिनों में जब कि माँ सुन्दर कपड़े पहन कर बाग के चबूतरे में कुर्सी पर बैठ कर अपने बालों को सुखाती, धूप सेंकती होती थी, तो वह चुपचाप उसके पीछे खड़ा होकर उसके बालों को निहारा करता। माँ आहट पाकर चौंक उठती और

फिर मुसकरा कर कहती थी—क्या पढ़ाई पर मन नहीं लग रहा है। जा बाहर खेल। यहाँ क्यों खड़ा है? वह उसके आगे कभी भी अपना हृदय न खोल सका। माँ के व्यवहार से वह सदा ही भयभीत होकर, डर जाता था।

चारों ओर काली रात छा गई। शशि की बात मन के भीतर भारी-भारी चोट कर रही थी। यह कैसा व्यंग था?,वह रखेल! अब घना अंधकार फैल गया। उस धुंधके में सड़क के बल्ब चमक रहे थे। उस अंधकार के प्रकाश में आस पास तक खड़ी इमारतों की छाया तैर रही थी। वह घबड़ा गया। एकाएक लगा कि वह रखेल सामने खड़ी थी। वह कोई ऐसी नारी थी जिसे वह पहचानता नहीं है। केवल उसकी रूप-रेखा भर जानता है।

अब वह जल्दी-जल्दी घर की ओर पाँव बढ़ाने लगा। बाहर बरांडे में पाँव रखा था कि पाया शशि की माँ खड़ी है। वह तो बोली, "दिन भर कहाँ रहा बावले! सारा शहर ढूँढ डाला है। शशि ने कहा था कि तू आया है। अरे, तेरा तो चेहरा सूख गया है। शायद कुछ खाया-पिया नहीं है।"

वह आँखें फाड़-फाड़ कर शशि की माँ को देखता रहा। उसका दिल भर आया। वह अपने को नहीं रोक सका। शशि की माँ की गोदी में सिर रख, फूट-फूट कर रोने लगा। न जाने कितनी देर वह वैसे ही रहा। उस माँ ने मधु को कोई सांत्वना नहीं दी। वह उसे और अधिक विचलित नहीं करना चाहती थी। वह तो इतना ही बोली थी कि अब उनके घर चलना है। वे लोग प्रतीक्षा कर रहे होंगे। तो क्या उसे शशि के घर जाना था? उसने तो निश्चय किया था कि वह वहाँ नहीं जावेगा। बस कुछ सोच कर तेजी से भीतर चला गया और उस कमरे में पहुँचा, जहाँ कि उसकी माँ का 'आयल-पेंटिंग' टंगा हुआ था।

भीतर से दरवाजे पर चटखनी लगा कर उसे बन्द किया। वह बड़ी देर तक टकटकी लगा कर अपनी मां के पेन्टिग को देखता रहा। फिर एकाएक उसका गला भर आया और वह फूट-फूट कर रोने लगा। आखिर थक कर वह दुःख सिसकियों में सीमित हो गया। अब वह सावधान हुआ। उसे अपनी स्थिति का ध्यान आया। मन में बात उठी कि मां तो सदा के लिए बिछुड़ गई है। और वह चुपचाप मां के फोटो को निहारने लगा। वह अपनी माँ के उस चित्र को पूरा-पूरा हृदय में उतार कर संवार लेना चाहता था। अपने इस भेद से वह किसी से साझा करने के लिए तैयार नहीं था।

कमरे के भीतर सन्नाटा था और न जाने कब से बाहर कोई दरवाजा खटखटा रहा था। लेकिन हृदय का तूफान उतर चुका था। मन शान्त था। कुछ सोचने-विचारने के लिए नहीं था। खाली मन वह चुपचाप खड़ा का खड़ा था। वह जानता था कि बाहर शशि की मां दरवाजा खुलवाने का आग्रह कर रही थी। वह कैसा अहसान था? कोई सही रास्ता नहीं सूझ रहा था। मां कभी पास नहीं रही। सदा उसने दूर भाग जाने की चेष्टा की। कभी भी वह उसे भली-भांति पहचान तक नहीं सका था। वह सवाल अब हल नहीं होगा। मां खो गई है। दुनिया में ढूँढ़ने पर भी वह नहीं मिल सकेगी। यदि वह सेनिटोरियम जाकर वहाँ के डाक्टरों और नर्सों से जाकर पूछे, वहाँ शायद कोई चिन्ह नहीं बचा होगा। पुराने रिकार्डों के बल पर थोड़ा अधूरा हाल जान कर कुछ प्राप्त नहीं होगा। वह निश्चय सही नहीं जँचा। अब वह अपने को खाली-खाली-खाली और बिलकुल अकेला पाने लगा।

दरवाजे पर फिर खटका हुआ। उसने चुपके चटखनी खोल ली। शशि की मां ने सांत्वना दी। उसकी बात स्वीकार

कर वह चुपचाप 'कार' पर बैठ गया। उस आदेश को आज्ञाकारी बालक की भांति उसने मान्य गिन लिया ! 'कार' तेजी से बढ़ रही थी। वह उस रमणी की गोदी में मुँह छुपाकर लेटा हुआ था। एकाएक अज्ञेय किसी बात ने मन की चोट को दुखा दिया और वह फफक-फफक कर रोने लगा। वह माँ तो उसके बालों को सहला रही थी। बोली कुछ नहीं। बड़ी-बड़ी आँसू की बूँदों से उसकी सारी भीग गई। वह फिर भी चुप रही। वह मधु की उस दुनिया में प्रवेश न करने का निश्चय कर चुकी थी। मधु तो अपने को असहाय और अकेला पाने लगा। पिता समीप होते तो वह आसानी से उनसे सब कुछ पूछ लेता। कई बातों की जानकारी प्राप्त करता। अब तो वह बात नहीं थी शशि से उसे यह आशा नहीं थी कि वह ऐसी बातें कहेगी। वह उनके यहाँ पहुँच कर चुपचाप गोल-कमरे में बैठ गया। शशि के पिता अभी क्लब से नहीं लौटे थे। शशि अपने कमरे में कुछ सहेलियों के साथ ग्रामोफोन सुन रही थी। वह आते ही उन सबको देख चुका था। बीच-बीच में उनकी हँसी की खिलखिलाहट उसके कानों में पड़ती थी। वह शशि जान कर भी उसके समीप कब आई थी। चाहती तो आसानी से बाहर बरांडे में उसके आने का स्वागत करती। सारी स्थिति सहज ही सुलझ जाती। वह अपनी सहेलियों से बाहर उसको रखना चाहती है। वह कमरे के भीतर अकेला-अकेला बैठा हुआ ऊब रहा था। शशि के कमरे का एक-एक शब्द उसके कानों में आकर एकाएक भारी गूँज कर रहा था। उसका हृदय उस एकान्त में फिर पिघलने लग गया। वह चारों ओर सूनी और फीकी आँखें फैलाकर कुछ पा लेना चाहता था। लेकिन वह उसका एकाकीपन उसे उद्विग्न करने तुल गया। वह हृदय उमड़ कर मानो अब

भारी लहरों के साथ उसे कहीं बड़ी दूर बहा कर ले जाना चाहता हो।

शशि की मां लौट आई थी। उसका पहनावा देख कर वह दङ्ग रह गया। वह सिलेटी-रंग की सारी पहने हुए थी। उसका जामुनी ब्लाउज चमक रहा था। पावों पर कामदार सिलीपर थे। वह छोटे बच्चे की भांति कुतूहल के साथ उसका चेहरा टकटकी लगाकर देखता रहा। एकाएक वहाँ अपने मां की छवि पाकर उसका हृदय भर आया। लेकिन अब वह दुःख स्थिर हो गया था। केवल आँखों की पलकें भीज गई थीं। उस माँ ने अपने आंचल से उनको पोंछ डाला। समझाया फिर कि नारी का जन्म व्यर्थ है। उसकी माँ को उस परिवार में कभी कोई सुख प्राप्त नहीं हुआ। उसके गुणों और सारल्य भाव की चर्चा गदगद स्वर में की। भविष्य की ओर इशारा किया कि चलो इस संसार के माया-जाल से तो उसे छुटकारा मिल गया है। उसकी आत्मा को जरूर शान्ति मिलेगी।

वह आत्मा की शान्ति! मधु कोई दार्शनिक नहीं था। वह तो साधारण युवक था, जो कि भावुकता की लहरों के बीच अनायास ही तैरने लगता। वह स्वर्ग क्या होगा, इस पर उसने विचार नहीं किया। माँ से जीवन में कभी भेंट नहीं होगी, यह बात हृदय-पट पर कोई खींच गया था। वह वर्तमान सदा के लिए एक दुःखदाई सबक उसे पढ़ा गया है। और शशि की सहेलियां चली गई थीं। वे तो बरांडे में कुछ देर खड़ी रहीं। शशि फिर भी गोल-कमरे में न आकर, अपने कमरे में जाकर बैठ गई थी। उसे शशि का यह व्यवहार अनुचित लगा। उसका अभाव अखरा। यह शशि की शरारत थी। वह उसे कोई सहारा नहीं देना चाहती है। और अपने घर आए हुए का अपमान करने का दम भर रही है। उसके उस प्रकार आने के प्रति मानो कोई

व्यङ्ग मूक-प्रश्न सुझा रही हो ! शशि के वे शब्द कि उसके पिता अपनी रखेल के साथ काश्मीर-भ्रमण कर रहे हैं, मन में फैलने लगे।

मधुसूदन सावधानी से उठा और कमरे से बाहर निकला। देखा उसने कि शशि के टेबुल पर सुन्दर गुलदस्ते धरे हुए थे। वह अपने बालों में एक सुन्दर गुलाब का बड़ा लाल फूल खोंसे हुए थी। उसके चुपचाप आने की आहट पाकर भी वह अपनी पुस्तक पढ़ने में संलग्न थी। यह कैसा ढोंग था ? अतिथि का यह अपमान ! उसे यह सब असह्य लगा। उसने उसके हाथ से किताब छीन करके खिड़की से बाहर फेंकदी, फिर दोनों गुलदस्ते उठाकर जमीन पर पटक दिए। अब, उसने एक, दो, तीन, चार, पांच, छै ····· करके ग्रामोफोन के रिकार्डों को बाहर फेंकने का क्रम शुरू कर दिया। अंत में बोला, "क्यों शशिबाला, मुझे अपमानित करने के लिए ही तूने अपनी माँ को भेज कर यहाँ बुलवाया है।"

शशि चुपचाप अवाक सी उसे देखती भर रही। वह इस स्थिति के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थी। यह मधु को क्या हो गया था !

"चुप क्यों है ? बोलती क्यों नहीं है। मैं सब कुछ सुनूँगा। तू गूँगी सी क्या सुन रही है। बोल, बोल न !"

शशि ने इस बात का भी कोई उत्तर नहीं दिया। वह तो एक घमंडी लड़की की भांति चुपचाप बैठी हुई रही। जरा भी हिली-डुली नहीं।

"बोल न फिर—तेरे पिता··············!"

लेकिन शशि ने बात बीच में ही काट डाली; "मधुसूदन, तुम किसकी आज्ञा से मेरे कमरे के भीतर चले आए हो ?"

वह मधुसूदन से इसका कोई उत्तर न पाकर, गुस्से में तेजी से बोली, "तुम यहाँ से चले जाओ।"

लेकिन मधुसूदन उसी भांति खड़ा रहा। उसने शशि की उस धमकी की अवज्ञा करने का निश्चय कर लिया था। अब तो शशि की आँखें लाल हो आईं, चेहरा तमतमाया। वह सिर ऊँचा करके बोली, "तुम यहाँ बैठे रहो, मैं ही रास्ता साफ करके चली जाती हूँ।"

सच ही शशि मंथरगति से बाहर चली गई थी। वह तो उस बड़े ग्रामोफोन के पास खड़ा हो, एक-एक रिकार्ड उठा कर उस पर अंकित पंक्तियाँ पढ़ने लगा। अब उनको बाहर फेंकने वाली सामर्थ चूक गई थी। शशि तो गोल-कमरे में पहुँच कर अपने पिता से कर रही थी, "पिताजी क्या आप इसी आवारे के साथ मेरी शादी करने का निश्चय कर रहे हैं। मैं मर जावूँगी। मैं यह नहीं-नहीं चाहती हूँ। आप मेरे प्राणों की रक्षा कीजिए। आपसे यह भीख मांगती हूँ।"

उस 'आवारा' शब्द पर मधुसूदन चौंक उठा। फिर उसने उस पर विचार करना शुरू किया। न जाने कितनी देर तक वह वहाँ पर खड़ा का खड़ा ही रहा। इस नए रिश्ते का ज्ञान आज तक भला उसे कब था! यह शशि क्या कह रही थी? उसका सारा क्रोध ठंडा पड़ गया। वह माँ की तसवीर भी खो गई। वह अपने हृदय-पट पर शशि का कोई रेखा-चित्र ढूँढ़ने लग गया। ओं माँ ने जिस स्नेह से उसे सदा वंचित रखा, क्या वह उसी की माँग को पूरा करने के लिए शशि के पास नहीं आया था। यह शशि तो कह रही है कि वह कसूरवार है। वही दोषी भी है। इसमें भला उसका क्या कसूर है? क्यों शशि ने उसे पत्र लिख कर सूचना दी थी कि उसकी माँ मर गई थी। क्या वह शशि के पास यह भेद नहीं खोल चुका था कि

वह अपनी माँ से बहुत स्नेह रखता है। उस प्यार के स्थायित्व के लिए ही उसने पिछले वर्ष शशि को अपनी माँ का फोटो उपहार-स्वरूप भेजा था। कब उसने शशि से अपनी कोई बात छुपाई है? लेकिन इस शशि ने आज तक कभी उसके पिता के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा था। यदि वह सब कुछ साफ-साफ कह देती, तो वह एक बार उस सेनिटोरियम में जाकर अपनी माँ से जरूर मिल आता। भला उसे यह कब मालूम था कि उसकी माँ एकाएक इतनी जल्दी मर जावेगी। वह जिस भाँति अपनी माँ के समीप कभी नहीं पहुँच सका, उस दूरी के बीच 'मौत' वाली खाई को पाकर डर सा जाता है। यदि यह शशि चाहती तो वह अपनी माँ की उन उदासी भरी आँखों का जाला हटाने की अवश्य चेष्टा करता। शशि और वह मिल कर यह काम आसानी से कर सकते थे।

शशि ने तो यह उसके हृदय पर एक नया प्रहार किया था। कभी उसने अपने इस रिश्ते की चर्चा तक नहीं उठाई थी। वह कुछ कहता तो वह आसानी से बात काट कर कह देती—प्रेम तो अंधा होता है मधुसूदन! वह सरल बात नहीं है!

सदा ही शशि ने अपनी इस रंगीन दुनिया से उसे बाहर रखा है। स्वयं वहाँ खेलती रही हैं। यह भेद छुपाना अनुचित बात थी। वह उसे बहुत सीधी और सरल समझता था। उसे क्या मालूम था कि वह इतनी पक्की होगी। वह न जानता था कि वह चतुर है। उसके विश्वास की अवहेलना उसने की थी। अपनी बातों को चुपचाप चुन-चुन कर छुपा लेना अनुचित था। उस आवारे शब्द सुनने के बाद, यदि शशि को वह पकड़ पाता तो खूब मारता। शशि को वह कहने का अधिकार नहीं था। अपने पिता और माता की नजरों में गिराने का वह हथियार झूठा था और अहंकार से भरा हुआ था। वह शशि अपने

पिता के समीप थी, जहाँ कि उसकी कोई पहुँच न थी। वह वहाँ नहीं जाना चाहता था।

एक बार मधुसूदन ने सारे कमरे के चारों ओर दृष्टि डाली। वहाँ वही शशि का अपना वातावरण था। उसकी किताबें; उसकी तसवीरें, उसकी……! कुछ निश्चय करके वह कमरे से बाहर निकला। चुपके बरांडा पार किया। वह किसी को अपने इस प्रकार चले जाने का आभास तक नहीं देना चाहता था। बाग की बटिया पार कर वह बाहरी घेरे की दीवार को लांघ, सड़क पर पहुँच गया। वहाँ एक जाते हुए तांगे को पकड़ करके स्टेशन पहुँचा था। पहली गाड़ी से वह रवाना हो गया था। हॉस्टल पहुँच करके उसने जरा सांस ली। लगता था कि वह जीवन की किसी बीहड़ बटिया में भटकता रहा हो। दिन भर सोया रहा। वह बहुत थका हुआ था। रात्रि को उसने शशि को पत्र लिखा था कि उसे अपने किसी व्यवहार के लिए दुःख नहीं है। उसका वही सही कर्तव्य था, जिसे कि उसने सही तौर पर निभाया है। वह सबल है और उससे शादी न करने का दृढ़ निश्चय कर चुका है। भविष्य में वह उससे कोई सम्बन्ध भी नहीं रखना चाहता है। वह अपना अहसान स्वयं धोले। साथ ही चेतावनी दी थी कि वह उसे भविष्य में पत्र लिखेगी तो वह बिना पढ़े ही फाड़ करके जला देगा। वह अब तक की सब पुरानी बातों को बिसार चुका है।

उसे आशा थी कि इस धमकी के बाद शशि पत्र लिखकर उससे माफी मांगेगी। वह पत्र का उत्तर नहीं देगा, तो वह दूसरा पत्र लिखेगी। शशि को अपनी भूल का पछतावा जरूर होगा। उसका वह आवेग तो उसकी अपनी निर्बलता है। वह आगे कई-कई पत्र लिखेगी। आगे एक दिन वह उसके आगे खड़ा होकर, एक जज की भाँति फैसला देगा कि उसका 'माफीनामा'

स्वीकार हो गया है। वह शशि को आसानी से मना लेगा। यह बहुत कठिन बात न लगती थी। लेकिन शशि ने तो एक लाइन भी नहीं लिखी। मधुसूदन की वह बहुत बड़ी हार थी। क्या अब बात असाधारण नहीं थी ? वह चुप रहा। उसने समझौते की कोई चेष्टा नहीं की। मां की कई झाँकियाँ अनजाने ही आँखों के सामने आती थीं, फिर शशि के रेखा-चित्र आगे पड़ते गए। वह उद्भ्रान्त हो उठता था। अब तो वह आसानी से भावुकता की कूचियाँ उन पर फेर कर उनको मिटाने लगा। वक्त के साथ वे स्वयं ही ओझल सी हो गईं। मां तो दूर पीछे छूट गई। लेकिन कभी-कभी शशि किसी मोड़ पर प्रतीक्षा में खड़ी हुई सी प्रतीत होती थी। वह बार-बार चाहता था कि कुछ पीछे लौट कर उसे मना लावे। यह नहीं हुआ। वह बीमार पड़ गया था। उसके पिता ने आकर उसकी देखभाल शुरू करदी थी। डबल-निमोनिया डेढ-मास तक रहा। शशि कहीं नहीं दीख पड़ी। जब वह अच्छा हुआ तो वह बहुत निर्बल था। पिता से लड़ने की सामर्थ तक न बची थी। उसे लगा कि वह उस लम्बी बीमारी के दौरान में अनजाने अपने पिता को क्षमा कर चुका है। वह अपने पिता के बहुत समीप आ लगा था। वह पिता की रखेल साथ आई थी। उसके व्यवहार पर वह मुग्ध था।

बीमारी के बाद पिता, रखेल और वह साथ-साथ कई बातों पर विचार करते थे। उस समय मधुसूदन ने बार-बार चेष्टा की कि वह उन दोनों से अलग रहे। मन में चाह करके भी वह उनसे दूर नहीं रहा। वह भारी कुतूहल के साथ उस रखेल को पढ़ लेना चाहता था। लेकिन कहीं भी उसने मधु के हृदय को डस लेने की चेष्टा नहीं की। शशि से हारने के बाद वह पाता कि यह उसकी दूसरी बहुत बड़ी हार है। वह उन दोनों

को स्वीकार करते हुए आज हिचकता नहीं है। वह श्राप सा उसे जानकर भी उससे दूर नहीं रह सका। शशि अब उस रखेल के नारी व्यक्तित्व में खोती-खोती, बिलकुल खो गई। मधुसूदन ने स्वयं शशि की स्मृति को जीवित रखने की चेष्टा के प्रति उदासीनता बरतनी शुरू करदी थी। शशि की·····

फौजी-अफसर और वह बच्चा अपनी मां के साथ न जाने पिछले किन-किन स्टेशनों पर उतर गए थे। मधु ने उस मां की अन्तिम झांकी देखी थी। वह बच्चे को अपनी छाती से चिपकाए हुए थी। गाड़ी के उस डिब्बे के भीतर दो बड़े-बड़े फोटो टंगे हुए थे। जिनमें सामन्तवाद के स्मृति-चिन्ह दो बड़े-बड़े महल खड़े थे। एक के चारों ओर पानी का बहुत बड़ा ताल था उनके बड़े शीशे पर लिखा हुआ था—मारवाड़ स्टेट रेलवे। इस जनयुग में उन महलों को सावधानी से देख कर वह बहुत हँसा। उसे लगा कि आज की इस दुनिया में जब कि मानव-समाज बहुत आगे बढ़ गया है, ये महल अतीत का एक थोथा घमंड दिखला रहे हैं। वह महान् अतीत आज उपनिवेश की गुलामी की काली चादर में छुप गया है। वह इस अपमान वाली स्थिति को असह्य पाता है। वह उसका परिवार जो अठारह सौ सतावन की गदर के बाद चमका था। उस दादा, पड़ दादा की जमींदारी के कर्जे के बोझे को नहीं संभाल सकी और टुकड़े-टुकड़े होकर टूट गई। स्वयं उसने उसे संभाल लेने की चेष्टा नहीं की। पिताजी आज भी परिवार की पीढ़ियाँ गिनते हैं। उसे उस सबसे कोई दिलचस्पी नहीं है। पिता साम्राज्यवादी गुमाश्तों से पाए हुए खिताबों की रक्षा करना आज तक परिवार की प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक समझते हैं। लेकिन मधु

उस सारे पुरातन को रबड़ से मिटा देना चाहता है। उसमें कोई जागरूक भावना उसे नहीं मिलती है। वह तो समस्त पारवारिक पुराने बन्धनों को तोड़ कर शक्तिशाली नए बन्धन जोड़ना चाहता है। क्या वह उन टूटी हुई पुरानी कड़ियों को जोड़ने में सफल हुआ है ?

बाहर तो वे ही पहाड़ियां थीं और उनके ऊपर चमकता हुआ मध्यान-काल का सूर्य ! नीचे हरी-भरी घाटियाँ थीं। वह गाड़ी तेजी से ढाल की ओर बढ़ रही थी। और यदा-कदा कई सुरंगों को पार करती थी। वह अजनबी मुसाफिरों के बीच बैठा हुआ था। किसी से उसकी कोई पहचान नहीं है। कल भविष्य में शायद ही कभी उनमें से किसी से भेंट हो। इस बड़ी दुनिया का फैलाव क्या कम है ? वह तो आज की बड़ी भीड़ में कुछ को पहचानने की चेष्टा करता है और फिर उन सबको भूल जाता है। कहीं हृदय के कोने में कुछ लोगों की झाँकियाँ हैं, पर उन पर गर्द पड़ गई है। वे बहुत धुँधली लगती हैं।

उस शशिबाला के पास ही तो वह आज जा रहा है। मां की मौत की सूचना देने के बाद, आज ठीक नौ साल बीत जाने पर उसने यह पत्र लिख कर, अनुरोध किया है कि यदि संभव हो तो कुछ दिनों के लिए वह वहाँ चला आवे। और अधिक उसने कुछ भी नहीं लिखा था। इस पर मधुसूदन ने अधिक मान-सम्मान की बात नहीं सोची। वह वहीं शशिबाला के पास जा रहा है। आज उसके पास उसकी कोई खास स्मृति नहीं है। उसके प्रति बार-बार अपनी भावुकता को उबारने की चेष्टा करके भी असफल हो रहा था। इस बीच उसने दुनिया में इतने चेहरे देख लिए कि उसके बीच कहीं शशि वाली पहचान से सरोकार नहीं रह गया है। शशि को पहचान लेना भी तो अब आसान नहीं लगता है। वह बहुत बदल गई होगी। शशि

ने यह पत्र क्यों लिखा है ? इसका कोई उत्तर उसके पास नहीं है। आज वह शशि के बुलावे को अपना अपमान नहीं समझता है। शशि से आज उसका कोई नाता ही कब है ?

पिताजी ने कभी कहा था, "मधुसूदन, किसी दैविक वरदान से तेरा पुनर्जन्म हुआ है। तेरे इस मानसिक कष्ट के लिए मैं उत्तरदाई हूं। क्या तू मेरी मानव-दुर्बलताओं के लिए मुझे क्षमा नहीं करेगा ? मैं उसे अपनी भूल कभी स्वीकार नहीं कर सका हूँ।"

"पिता जी !" वह गद्गद स्वर में बोला था।

"तेरी माँ से मेरा केवल दो वर्ष सम्बन्ध रहा है। बचपन से ही उसके फेफड़े कमजोर थे। तुमारे जन्म के बाद उसे टी० बी० हो गया। मैं आदर्श पति से यथार्थ पति बनने के लिए मजबूर हो गया। दुःख को ओढ़ लेने की मेरी आदत कभी नहीं रही है। मैं इतना दुनियादार अवश्य हूँ। वह लोभ मैंने नहीं भुलाया। इसके लिए समाज की आज्ञा है ही।"

वह पिता की बात को सावधानी से सुनता रहा। समाज की वह आज्ञा तो आज समझ सका है। अप्सराओं से आज तक की नारी······! सत्युग, द्वापर, त्रेता और कलयुग में भी वह शोषण से बाहर नहीं रही है। लेकिन पिता की वह रखेल असाधारण सुन्दरी थी। उस पर मधुसूदन मुग्ध था। वह बात-बात में मुसकरा कर सारी गुत्थियाँ सुलझाया करती थी। मधु को उसके समीप जाते हुए कभी कोई हिचक नहीं हुई। वह उस की जरा-जरा बात में परवा करती थी। किस समय उसे क्या चाहिए इसका पूरा-पूरा ज्ञान उसे था। वह तो एक सुघड़ दाई की भाँति उसकी हिफाजत करती थी। कुछ दिनों में ही वह उस परिवार की सम्मानित सदस्या बन गई थी। मधु के मन में उसके प्रति कभी कोई विद्रोह नहीं उठा। और अपनी रक्षा के

अधिकार के साथ-साथ, उसकी रुचि के अनुसार रहना भी वह सीख गया था। अब वह परिवार में अपनी एक हैसियत पाता था, जो कि पहले प्राप्त नहीं थी। उसे अपनी आवश्यकताओं के प्रति कहीं कोई रुकावट नहीं मिली। पहले से अब उसे अपना जीवन आसान लगता था।

एक दिन उसने मधुसूदन से कहा था, "शशि की मां कहती है कि·····?"

"नहीं नहीं—वह असम्भव बात है।"

"तुम्हारे पिताजी चाहते हैं कि·····।"

"मैं वहाँ शादी नहीं करूँगा, न करूँगा।"

"यह हठ ठीक नहीं है मधुसूदन।"

"नहीं! नहीं!! नहीं!!!"

वह शशि का मान-भंग करना चाहता था। सोचता था कि उसकी उस दिन की बात, जिसे कि वह घमंड में कह चुकी थी, उसे चूर-चूर कर डालेगा। स्वयं शशि ही आकर विनती करे तो भी वह पिघलेगा नहीं। उसने अपने पिता से साफ-साफ कह दिया था कि वह कम से कम पाँच साल तक शादी नहीं करेगा। इस शस्त्र से वह शशि को घायल करके एक झूठा बदला चुकाना चाहता था। वैसे कभी-कभी मन में बात उठती थी कि शशि बेकसूर है। शशि को वह प्यार करता है। शशि के बिना उसका जीवन बेकार है।

वह गाँठ आगे भी सुलझ नहीं सकी। मधुसूदन को एक दिन शशि के बिवाह का निमंत्रण मिला था। उस जानी हुई बात के लिए उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ, मानो कि वह उसके किसी कर्तव्य के अन्तर्गत बात नहीं थी। उस अवसर पर उसने उस लड़की को एक कागज का टुकड़ा भेंट-स्वरूप दिया था। जिस पर लिखा था—माँ बनो और आने वाले युग में पुरुष द्वारा

सौंपी गई गुलामी को तोड़ दो। शशि उसे पढ़कर अप्रतिभ हुई थी, फिर भी उसने अपनी यह भावना किसी के आगे प्रकट नहीं की। मधुसूदन ने जिस बल के भरोसे वह लिखा था, वह उसे बिसार चुकी थी। वह पति रूप में उसका ढाँचा बनाकर आज मिटा रही थी। अपने किसी सन्तोष की बात वह भले ही नहीं थी; इतना वह अवश्य जानती थी कि जीवन में एक पग आगे न बढ़ कर, वह पीछे हट गई थी। वह उस परिवार में जा रही थी, जो जागीरदारों का एक सम्पन्न परिवार कभी था। और उस सतरहवीं शताब्दि में बनी हवेली के भीतर वे पिछली आत्माएँ आज भी चमगादड़ के रूप में जरूर मंडराती होंगी। परिवार का अन्तिम वैभव अभी नष्ट नहीं हुआ था। वह राजरानी बनकर जा रही है। जिसको महारानी किलोपाट्रा की भाँति उस महल में दास, दासियों और आमोद-प्रमोद के साधनों की कमी नहीं है। शायद वह उन बातों का उल्लेख मधुसूदन से जरूर करती, यदि वह थोड़ा झुक जाता और पुरुष के अहम् को ऊपर उठा कर वे वाक्य नहीं लिखता। लेकिन उसने एक बहुत कीमती नीलम की अंगूठी भी उसे भेंट की थी, जिसको वह उसकी माँ की उङ्गलियों पर देखा करती थी। अपनी माँ की उस अन्तिम निशानी को इस प्रकार फेंक देना संभव होगा, यह विश्वास शशि को नहीं था। यह उसने एक बहुत बड़ा त्याग किया था। शशि ने भारी गर्व के साथ उसे पहना था। लेकिन उसके मन में एक बार भी उसके आगे खड़े होकर क्षमा माँगने की भावना नहीं उठी। उसे डर था कि कहीं मधुसूदन ने उसका मजाक उड़ाना शुरू कर दिया तो कौन जाने अनर्थ ही हो जाय। वह उस स्थिति के लिए तैयार नहीं थी।

बिदाई के दिन अन्तिम पार्टी मधुसूदन के पिता ने दी थी।

वह शशि, मधुसूदन और अपने भावी पति के बीच बैठी हुई थी। मधुसूदन बिलकुल मौन रहा। डर कर शशि भी उससे बातें न कर सकी। पिताजी की वह रखेल न जाने उसके पति से क्या-क्या बातें कर रही थी। शशि ने जिस रमणी का कभी उपहास उड़ाया था, आज उसका ओछा व्यक्तित्व नहीं था। शशि को वहां का वातावरण फीका लग रहा था। लाचारी फिर भी वह वहां बैठी रही। लेकिन मन नहीं लगा। वहां एक उदासी फैलकर उसका गला घोंट रही थी। वह उठी और साधारण अभिवादन कर भीतर चली गई। इसके बाद जुदाई का अवसर आया। शशि ने भी आंसू बहाए थे। मधुसूदन उस समय भी समीप नहीं आया। शशि ने उसे चारों ओर तलाश किया था। उसे यह आशा कब थी कि वह इतनी दूर हट जायगा। फिर वह भारी मन लेकर ससुराल चली गई। आगे फिर कभी मधुसूदन से भेंट नहीं हुई थी। उसने तो कोई चेष्टा नहीं की और शशि परिवार की सीमाओं के भीतर अपनी गृहस्थी की छान-बीन करती, अपनी जगह को समझने-बूझने में ही रह गई।

—गाड़ी किसी स्टेशन पर रुक गई थी। मधुसूदन बाहर देखने लगा। वह घाटी के बीच एक छोटा सा स्टेशन था। एक चारण गा रहा था :—

तन तलवारा तिल छियो, तिल-तिल ऊपर सीव,
आला घावों उवसी, छिन एक ठहर नकीब;

उसके मन के भीतर एक-एक शब्द गूँज उठा। वह राज्यों को विजय करने वाला युद्ध, जबकि सामन्तवाद अपने चिर शिखर पर था। और आज यह विचारों की दुनिया कहां पहुँच गई है ?

गाड़ी तो चल पड़ी थी। वह गीत उन घाटियों में ही वायु की लहरों के बीच खो गया। ध्वनि और गूँज फिर भी हृदतंत्री

में झंकारित हो रही थी। दुनिया का वह बड़ा इतिहास—कबीले, परिवार और व्यक्ति .....! परिवार का स्वामी कभी कुम्हार की भांति अपने खिलौने रूपी परिवार की रक्षा करता था। कुम्हार चाक चलाता है और मिट्टी से बरतन गढ़ता है। पड़दादा से दादा और दादा से नातियों तक फैलने वाला परिवार भी तो एक से ढ़ाचों के विभिन्न रूपों में बढ़ता जाता है। आज व्यक्ति और परिवार के बीच संघर्ष चल रहा है। व्यक्ति परिवार से अलग हो जाना चाहता है।

मधुसूदन ने उस दिन दावत में पिताजी की उस रखेल को फिर सावधानी से जाँचा था। उसकी आँखों में उसे एक दु:खद रहस्य सा छुपा मिला। वह पत्नी नहीं थी। और उस गुलाम जाति की नारी थी, जो केवल पुरुष के आमोद-प्रमोद का साधन मात्र थी। उसने सुना था कि वह एक नामी वेश्या थी, जिसकी गाने की शोहरत दूर-दूर तक थी। उसके पिता ने धन के बल से उबार लिया था। बस वह उनके साथ चली आई। आज भी वह बहुत लुभावनी बातें कर सबको मोह लेती थी। उसकी वाणी में लोच थी और एक-एक मुस्कान में कोई अज्ञात समोहनी शक्ति छुपी हुई।

दावत के बीच से जब शशि उठ कर चली गई तो वह भी उठी थी और शशि के साथ चली गई। वह क्यों चली गई, यह बात कभी निकट भविष्य में वह उससे पूछ लेगा। वह उसको बहुत समीप से देख कर अपना मत प्रकट कर चुका था कि वह अवसर के साथ सावधानी से चलती है। उसमें कभी कोई घबराहट दृष्टिगोचर नहीं हुई। शशि जितनी ही भावुक थी, वह उतनी ही गंभीर थी। शशि छोटी नदी के समान सरल थी, तो वह सागर की भांति गंभीर! आज वह यह तुलना क्यों कर रहा था। यह बात जान नहीं सका। क्या शशि में सागर

बन जाने की क्षमता है?

शशि को वह अपनी मां की नीलम की अंगूठी भेंट कर चुका था। यह तो उसकी मां ने अपनी पुत्रबधू के लिये उपहार रख छोड़ा था। घर के सब लोग इस बात को जानते थे। उसने वह पिताजी से मांग कर साफ-साफ कह दिया था कि वह उसे शशि की भेंट करेगा। पिता ने जब माँ की बात याद दिलाई, तो वह बोला कि वह बात आज उस पर लागू नहीं होगी। शशि को मां का वह उपहार मिलना चाहिए। वह उस शशि के लिए इतना उदार था, फिर भी उससे बिछुड़ गया। पिता की रखेल को वह कभी अपनी मां के आसन पर नहीं बैठा सका था। वह उस घर का पूरा संचालन करती थी। मधुसूदन को कभी कोई कठनाई नहीं पड़ी। उसे अपनी जरूरत की सब चीजें आसानी से मिल जाती थीं। देखा था उसने कि उसकी मां के उस बड़े आयल-पेन्टिंग पर पहले जाले लगे रहते थे। अब वह कमरा चतुराई से सजा हुआ रहता है। उस पेन्टिंग पर उसे मालाएँ पड़ी हुई मिलती थीं। माँ के प्रति उस आदर की भावना से उसका हृदय गदगद हो उठता था। लेकिन उसके मन में स्वयं माला लाकर मां के उस फोटो पर डालने का प्रश्न कभी नहीं उठा।

एक दिन खबर मिली थी कि पिताजी और रखेल के बीच झगड़ा हुआ और दोनों अलग-अलग हो गए। उसे पिता ने इसकी सूचना देते हुए बताया था कि अब मधुसूदन को उस गृहस्थी को सँभालने में उनका साथ देना चाहिए। उसके रिश्ते के लिए कई जगह बातचीत चल रही थी, उनकी फेहरिस्त भी साथ भेजी थी। यह भी लिखा था कि वह बिल्कुल स्वतन्त्र है। अपनी इच्छा से जहाँ चाहे रिश्ता स्वीकार करले। मधुसूदन ने उसका उत्तर केवल इतना ही दिया था कि आज उसका अपने

पिता पर से सब विश्वास उठ गया है। वह उनके उस तर्क से सहमत नहीं है कि वह उनकी रखेल उस परिवार के लिए एक कलंक थी। वह उनको इतना स्वार्थी नहीं समझता था। इस कृतघ्नता की केवल एक मात्र सजा वह उनको यही देगा कि उनसे अपना सम्पूर्ण नाता तोड़ देगा। पत्र पढ़ कर पिता ने उसे समझाने के लिए अपने मैनेजर को भेजा था। मधुसूदन अपनी बात पर अड़ा ही रहा। उसे खुश करने के लिये पिता ने एक 'कोरा चेक' भेजकर विनती की थी कि कम से कम पिता की यह भेंट तो वह स्वीकार कर लेगा। उसने वह 'चेक' भी लौटाल दिया था। पिता को इस प्रकार अलग हटाते उसकी आत्मा कांप उठी थी। लेकिन वह सारी स्थिति को संभाल लेने के लिए तैयार था।

और इसी बीच शशि का पत्र आया था। तीन-चार लाइन की साधारण चिट्ठी थी। अधिक कुछ न कह कर केवल अनुरोध किया था कि समय निकाल सकें तो वहाँ चले आवें। पिताजी की चिट्ठी, लड़कियों की फेहरिस्त और कई बातें बटोर कर वह शशि के पास जा रहा था। आज वह शशि के प्रति वाले अपने गुस्से को विसार चुका है। जानता है कि स्वयं शशि आज बहुत स्वतंत्र नहीं होगी। वह पत्नी है और कौन जाने संभवतः माँ भी हो। शशि से वह कई बातों पर सम्मति लेना चाहता था। वह अब जरूर दानी-सयानी बन गई होगी। सात साल के गृहस्थी के अनुभव कम नहीं होते हैं। फिर लड़कियाँ स्वभाव से ही बहुत जल्दी पुरखिन बन जाया करती हैं। और बड़ी-बुढ़ियों के समान बातें करने की आदत पड़ते भी कुछ देर नहीं लगती है।

लेकिन मधुसूदन कल रात से सफर कर रहा है। चौबीस घंटे व्यतीत हो चुके हैं। वह छोटी गाड़ी भी उसके विचारों के

साथ दौड़ लगा रही है। खिड़की से बाहर दूर आकाश में एक चील उड़ रही थी। वह अब गाड़ी के समानान्तर उड़ने लगी थी। वह दूर से अपने शिकार को ढूँढ़ रही है। उसकी भी यदि ऐसी ही पैनी दृष्टि होती तो वह व्यर्थ इतना नहीं उलझता। गाड़ी चल ही रही थी। फिर धीरे-धीरे लाइनें फैल गईं। गाड़ी एक बड़े जंकशन पर खड़ी हुई और उसने बाहर देखा तो शशि बाला उसकी प्रतीक्षा में खड़ी थी। वह स्तब्ध रह गया। यह सच बात थी कि वह उसके आमंत्रण पर आया है।

शशि तो बोली, "बाहर निकलो। नहीं-नहीं मैं तुमारे साथ चल रही हूँ।"

आज भी वह चुप रहा। वह तो बोली, "उस घर को छोड़ आई हूँ, मधुसूदन। वहाँ मेरी कोई हैसियत नहीं है। मैं चौथी पत्नी हूँ।"

शशि की कातर आँखों को देख कर वह भयभीत हुआ, तो शशि ने समझाया, "तुम मेरी सहायता नहीं करोगे तो बतलाओ मैं क्या करूँ। जीवन को नष्ट कर देने वाली किसी भावना पर मैं विश्वास नहीं करती हूँ।"

शशि ने अपना सामान भीतर रखवा लिया था। कहा फिर, "क्या आज भी हम 'दासी' हैं मधुसूदन! तुम इसका उत्तर क्यों नहीं देते हो। गुमसुम कब तक खड़े रहोगे। आज तुमारी वह उदंडता कहाँ खो गई है। तुमने मेरे जीवन को नष्ट करने में कोई कमी नहीं छोड़ी। आज मैं उसका बदला चुकाने के लिए खड़ी हूँ।"

मधुसूदन कुछ उत्तर दे कि शशि ने बटुए से पैसा निकाल कर कुलियों को बिदा कर दिया। तभी गाड़ी चलदी थी।

मधुसूदन के मन में शशि की वह पुरानी बात गूँज रही थी—प्रेम अंधा होता है मधुसूदन!

तूफान

मेह की झड़ी लगी थी। भादों मास की बरसात। आकाश पर काले-काले छाए हुए बादलों की टूटती घटा छाई हुई थी। बार-बार बिजुली कड़क उठती थी। उसकी चमक से सारी धरती, पेड़ और पौधे कांप उठते थे। एक अज्ञेय कम्पन धरती पर फैल जाती थी। इसी समय वे दोनों सहेलियां सिर पर घास के बड़े-बड़े गट्ठर धरे हुए जंगल से गांव की ओर लौट रही थीं। उस झुकी सी बटिया पर पानी भरा हुआ था। और दूर तक घना अभेद कुहरा फैला हुआ था। चारों ओर दृष्टि फेरने पर नर-कंकाल की भांति पेड़ और पौधों की निर्जीव काली पर-छाइयां खड़ी मिलती थीं। नीचे की ओर बहती हुई पहाड़ी नदी का विकराल स्वर मन में भय संचारित कर रहा था। उनकी पावों की भैंवरियाँ पथ पर फैले हुए पानी की छप-छप के साथ झन, झन, झन बज रही थीं। मेंह का वेग बढ़ रहा था। आगे बढ़ना संभव न समझ कर वे देवदारु के पेड़ों के गिरोह के नीचे पहुँची। वहां भैरवनाथ की मुंडेरी पर घास का गट्ठड़ रख दिया। एक ने धोती का पल्ला निचोड़ कर, चेहरे पर फैली बालों की लटें हटा, सिर पर रख लिया।

दूसरी सावधानी से पहली को भांप रही थी। अब तो वह मुस्करा उठी। बात की थाह पकड़ कर बोली, "क्यों री?"

पहली इस हमले के लिए शायद तैयार नहीं थी। वह एका-एक भयभीत हुई, फिर कातर आंखों से उसे देखा। वह बहुत थक गई थी। सांस का गहरा कम्पन नहीं संभाल पा रही थी।

वह एक विशाल पेड़ के तने के सहारे बैठ गई। अब तो उसने आंखें मूँद लीं। मानों कि वह अपने में कोई दृढ़ निश्चय कर रही हो। धुले हुए सुन्दर चेहरे पर गहरी नीरवता छाई हुई थी। उसके चूर-चूर शरीर से अल्हड़ता टपक रही थी। वह मुंदी आँखों में दुनिया से दूर छुप जाने का झूठा प्रयत्न कर रही थी।

भला दूसरी कब मानने वाली थी! वह पास बैठ गई और उसकी कलाई पकड़ कर झरोखते हुए मजाक में बोली, "रूठ गई!"

वह व्यंग चुभ गया। धीरे-धीरे सीने से हृदय में पैठा और फिर लहू की छोटी-छोटी शाखाओं द्वारा समस्त शरीर पर फैल गया। चूड़ियाँ खनखनाईं। उसने कलाई छुड़ाने की कोई चेष्टा नहीं की। वह तो आंखों की पलकें ऊपर उठा कर उसे निहारती रह गई। उसकी बड़ी-बड़ी कागजी-बादाम सी कंटीली आँखों में विवशता थी। मानों कि वह अपनी उस भूल के लिए प्रायश्चित कर रही हो। अपने व्यवहार के लिए लज्जा से उसका चेहरा गुलाबी पड़ गया था।

पेड़ से पानी की बड़ी-बड़ी बूंदें टपक रही थीं। भूमि पर कई छोटी-छोटी धाराएँ बहती रहीं। हवा के तेज झोंके चल रहे थे। कुहरा भी घना-घना और घना सा फैलता जा रहा था। आँखें उसे भेद नहीं पाती थीं।

"कौन है वह?"

पेड़ पर कोई चिड़िया फड़-फड़, फड़ पंख फड़फड़ाने लगी। अब लगा कि वह जोड़ा है। उनके रंगीन भीगे पङ्ख भूमि पर गिर पड़े। वे घने पत्तों के बीच अपनी रक्षा कर रहे थे। लेकिन वह तो उसी भांति मूक बैठी थी। दूसरी उसका मुँह ताक रही थी। अब पहली ने एक रंगीन पंख उठा लिया। दोनों तो बिलकुल

चुप थीं। पहली अपने में कुछ स्मृतियां फैलाकर, कुछ रंगीन घटनाओं से झगड़ रही थी। उसका हृदय बार-बार उमड़ आता था। आंसू वेग के साथ बहना चाहते थे। वह अपना नारी बल खोती जा रही थी। दिल तो पसीज चुका था। उधर दूसरी का उत्साह निचुड़ चुका था। वह अपनी स्वाभाविक वाक-पटुता भूल गई! दोनों अपने में किसी गहरे भेद की छानबीन करने में संलग्न थीं।

एकाएक पहली ने दूसरी का हाथ पकड़ लिया। उसकी आंखों में आंसू छलछलाए। वह कुछ देर उसी भांति चुप रही। आखिर साहस कर बोली, "चौथा महीना है।"

"चौथा!"

पहली ने आंखें झुकालीं। कुछ बोल नहीं सकी।

"मैंने तुझे समझाया था न नादान!"

पहली ने आंखें उठाईं। वे डबडबाईं लाल थीं।

"समझी, वहीं होगा। नदी के किनारे तू गाएँ चराने गई होगी; वे अखरोट, नाशपाती, खुमानी के पेड़; नारंगी, नींबू, अनार की क्यारियाँ! वहाँ प्रेमियों को पागल बना देने वाली बयार सदा बहती रहती है। वहाँ कब कौन बावला नहीं बन जाय, यही आश्चर्य है!"

पहली मूक रही।

"घास का भरा हुआ मैदान; फ्यूंली, इन्द्र-धनुष, करनफूल, सूर्यमुखी, गेंदा, गुलबहार, गुलाब के फूल.....! तू उसके गीतों पर रीझ गई होगी। सोचा होगा कि सारी दुनिया सीमित हो गई है। तू वेगवती नदी के समान जीवन लुटाने लगी होगी। भला मुझे क्या मालूम होता! कलमुंही मैं तो तुझे सीधी समझती थी। तूने तो औरों के भी कान काट लिए हैं। यह बात अभी कोई नहीं जानता है। किसी को विश्वास भी नहीं

ही होगा। सब कहते हैं रामी को देखो, पति को गए पाँच साल हो गए हैं। पूरी हवलदारिन है। कोई उसके पास नहीं फटक सकता है। वह कितनी नेक है। गांव भर अब······!"

बात सच थी। उसने सदा मानवीय-दुर्वलताओं से अपने को दूर रखा है। एक दिन पति भरती होकर युद्ध में चले गए थे। धीरे-धीरे गांव के और युवक भी चले गए। अधेड़ और बच्चों तक को लड़ाई ने खींच लिया था। गांव तो सूना-सूना लगने लगा। लगता था कि मानो कोई वहां का समूचा जीवन हर कर ले गया हो। गांव में कुछ बूढ़े बचे थे, या दस साल के भीतर के बच्चे। उनका उनसे कोई सगा सम्बन्ध नहीं था। गांव के भीतर भले ही वे थे। मौसमें बदलती थीं, पर कोई खास अन्तर उनके मानवीय जीवन के भीतरी अस्तर पर नहीं पड़ता था। प्रकृति का सौन्दर्य और उसका उपहार-दैनिक-जीवन से दूर हट गया था। पोस्टमैन महीने में आता और मनिआर्डर बांट कर चला जाता था। आठ-दस मील पर हफ्ते में मङ्गल वार को हाट लगता था। वहां से वे चीजें खरीद लाती थीं। पहले कुछ महीने तक गांव में सन्नाटा रहा। नए जीवन में हरएक अपने को निभा लेना चाहता था। फिर न जाने किस युवती ने पहले लक्ष्मण की रेखाओं को मिटाया। फिर वह चर्चा हर एक परिवार में गूँज उठी। आगे गांव के जीवन में कुछ खोए हुए बच्चों का आगमन हुआ, जिनकी किलकारियों में केवल मातृत्व भरा हुआ था। अपने अज्ञान पिता की पुकार की अपेक्षा उनको नहीं थी।

आस-पास के गांवों में भी वह नशा फैलता चला गया। एक बावली बयार बहने लगी थी। हरएक उससे दूर रहना चाहती थी। कुछ झूठे संस्कार साथ थे। उनकी लड़ियां टूट गईं। बन्धन ढीले पड़ रहे थे। एक ने दूसरी का सहारा और

सद्भावना का आश्रय लिया। आपस में आंखें मिला कर बिना किसी लज्जा के वे मुसकरा उठती थीं। किसी का माथा कभी शर्म से नहीं झुकता था। पहले चेहरे यदा-कदा गुलाबी पड़ जाते थे। अब उनमें स्थिरता आती गई। एक में भी भावुकता की बाढ़ न दीख पड़ी।

—नदी का शोर पागल प्रेमियों के चीत्कार सा कानों में पड़ कर गूँज रहा था। पहाड़ों की हिमच्छादित चोटियों पर उषा की लाली फैलती थी। कभी पहाड़ के आंचल में नदी कल-कल नाद करती हुई मैदानों की ओर बढ़ी चली जाती। और वहाँ की नारी भी प्रकृति की गोदी में नदी के किनारे; बांज, देवदारु, चीड़, सुरई, के घने बनों में, जहाँ रंगीन परों वाली चिड़ियाएँ रहतीं या सेव, नारंगी, आदि की क्यारियों में उलझी-उलझी घूमती थीं। वे अज्ञात प्रेमी ज्ञेय नहीं थे। कोई तो उनका खास सा परिचय तक नहीं जानती थी। यह असाधारण भेद प्रत्येक ने अपने तक ही सीमित रहने दिया। किसी की आकांक्षा पर उसका उत्तरदाइत्व नहीं रहा।

मेह की झड़ी रुक गई थी। हवा साँय-साँय चल रही थी पहली युवती उसी भाँति चुपचाप बैठी हुई थी। दूसरी उसे निहारती रही। वह आश्चर्य चकित थी। पहली का फूल सा चेहरा कुम्हला गया था। ओठों पर काली झाइयाँ पड़ी मिलीं। उसके स्वस्थ कोमल शरीर से थकान टपक रही थी। लगता था कि वह चूर-चूर थक गई है। हवा वेग के साथ बह रही थी। नीचे की ओर बहती हुई पहाड़ी नदी का शोर व्यर्थ ही भयभीत कर रहा था। वह नदी धुँधके के बीच छुपी हुई थी। आंखों से दूर लगती थी।

"कांति का पति आ गया है।"

पहली चौंक उठी।

"दो बच्चों को पाकर अवाक् रह गया। कांति के अविश्वास पर उसका गला घोंटने तुल गया था। लोगों ने बीच-बचाव किया अन्यथा वह तो हत्या करने पर उतारू था। कहता था इटली में मुसोलिनी की फौज की सारी टुकड़ी को उसने अपने साथियों की मदद से नष्ट कर दिया था। उसने अपनी मसीनगन से सैकड़ों सिपाही मारे हैं। उसे लोग बहादुर मसीनगन वाला कहते थे। अब वह उन दो बच्चों और उसकी हत्या करेगा। यह पाप नहीं होगा। कांति तो चुप थी। उसकी गोदी की लड़की किलकारी मार रही थी। वे बच्चे आगन्तुक के उस प्रमाद पर अवाक् खड़े, अचरजपूर्ण भेद भरी दृष्टि से उसे देख रहे थे। उनका वह कुतूहल अमूल्य था। मां को वे पहचानते थे और किसी को नहीं। उस नए अधिकार की घोषणा सुनकर चीखने-चिल्लाने लगे।"

लेकिन रामी ने कांति को कभी क्षमा नहीं किया। वह कांति खुले आम पुरुष जाति के प्रति विद्रोह फैलाती थी। सैनिक जीवन पर उसकी आस्था नहीं रह गई थी। चार-पाँच साल एक विधवा की भांति काट लेना उसे असह्य लगता था। वह सबसे हँस-हँस कर कहती रहती थी कि फिर तो बुढ़ापा आ जायगा। यह पगली जवानी जीवन में एक बार ही आती है। उसने प्राइमरी तक पढ़ा था। पिता मैदान में नौकरी करते थे। वह कहीं से तोता-मैना की एक जिल्द चुराकर ले आई थी। जिसके बाहर एक तसवीर थी—पेड़ की एक टहनी पर तोता बैठा था, तो दूसरी पर मैना। तूफान उठा था। दोनों वहाँ आश्रय लेने आए थे। दोनों एक दूसरे की जाति के प्रति अविश्वास की बात उठा कर, अपनी भावना की रक्षा करना चाहते थे। कांति किस्से पढ़-पढ़ कर सुनाती, समझाती थी। श्रोता-मंडली बढ़ती चली गई। कुछ उनमें रात्रि को स्वप्न में राजकुमारी बन कर किसी

राजकुमार के आने की प्रतीक्षा करती। कुछ बीमार बनी प्रेमी को सन्देश भेजतीं कि वह वैद्य बन कर एक बार दर्शन तो दे जाय। वे ही स्वप्न कभी-कभी जीवन के सजीव अंग बन जाते थे। पहले तो वे सावधान रहतीं, फिर जीवन में गति आ जाती थी। अंत में वे भावुकता के तीव्र प्रवाह में बह जाती थीं। जब वह सच्चा सुपना टूटता तो ...!

वह कांति पास के पन्द्रह-बीस मील दूरी वाले भूटानी गावों से भी आसानी के साथ सम्पर्क स्थापित कर लेती थी। अक्सर वे भूटानी नीचे राज–मार्ग में जाड़ों में पड़ाव डालते। छोटे-छोटे तम्बू-लद्दू घोड़े, भेड़ें, कुत्ते उनकी एक नई दुनिया बस जाती। कई लड़कियाँ गांव में भी चीजें बेचने पहुँचती थीं। कांति उनसे आसानी से दोस्ती कर लेती थी। कई दिन तक तो वह नीचे उनके डेरों में ही रह जाती थी। उनका नाच-गान उसे बहुत पसन्द था। वहाँ की छाँछ, लौंदा मक्खन मिली चाय और जुए के खेल की बातें भी वह सुनाती-सुनाती थकती नहीं थी। वह वहां से मूँगा की माला, झुमके, कस्तूरी आदि कई चीजें लाती थीं। सब उसकी लुभावनी बातें सुनने के लिए लालायित रहती थीं। जब कान्ति के पहला लड़का हुआ था तो सबके मन में एक नई लहर दौड़ी थी। लेकिन तोता-मैना की कहानियों से किसी को भी अश्रद्धा नहीं हुई। एक दिन सुबह को एक नौ-जवान लड़का सुफेद खच्चर पर चढ़ कर आया था। उसके बड़े बालों वाला झबरा सा कुत्ता दिन भर घर के दरवाजे पर बैठा भूकता रहा। संध्या को वह चला गया था। सुना कि वह बहुत सामान दे गया था। उसकी कोई खास चर्चा वहां नहीं हुई। आगे फिर वह कभी नहीं आया।

जब कांति के लड़की हुई थी तो वह घंटों कराहती रही थी। कई चतुर दाइयां परेशान हो गईं। किसी को आशा नहीं थी

कि वह बचेगी। पचास घंटे तक वह मौत और जीवन के बीच झूलती रही। कभी कोई सुनाता था कि वह मर गई है। फिर खबर आती कि वह जीवित है। उसके घर पर गांव की सब औरतें जागरण करती रहीं। लड़की के भूरे बाल और नीली आंखें थीं। कान्ति तो कुछ दिनों के बाद फिर उसी पुरानी मस्ती के साथ गीत गाती फक्कड़ सी घूमती हुई मिली। सहेलियों के साथ वही नाच-रंग! उसमें कहीं कोई परिवर्तन नहीं दीख पड़ा।

लेकिन एक दिन दुपहरी को उसका पति लौट आया। पति की समझ में तो वह सारी परिस्थिति नहीं आई। वह नए वातावरण को समझने में असफल रहा। कांति का चेहरा उतर आया। एकाएक उस सैनिक का चेहरा लाल पड़ गया। उसकी आंखों से तेज चिंगारी फूट निकली। उसने कांति की झोंटी पकड़ली। फिर उसे घसीटता हुआ कमरे के भीतर ले गया। कांति के गले की माला टूट कर बिखर गई। उसकी हाथ की चूड़ियाँ भी टूट गईं। उसने उसे कमरे के भीतर पटक दिया। दरवाजा बन्द करके बड़ी देर तक उसे मारता ही रहा। पहले कांति की चीख सुनाई पड़ी, फिर एकाएक चुप्पी छा गई। लोगों ने अनुमान लगाया कि वह मर गई है। दूसरे दिन तो वह नदी के किनारे पानी भरती हुई दीख पड़ी। आंखें सूजी हुई थीं। कनपटी पर खून का बड़ा नीला धब्बा था। उसका गोरा चेहरा विभत्स सा लग रहा था। लेकिन वह तो हँस-हँस कर सुना रही थी कि उसने मैना वाली दलीलें दीं। क्या मर्द बेवफा नहीं होते हैं? वह अलग ही रहेगी। उससे नाता तोड़ दिया है। अपने बच्चों को पालेगी। उसका सही स्त्री-धन तो बच्चे हैं—पति नहीं। फिर जब तक उसके हाथ-पांव में ताकत है, वह किसी की गुलाम बन कर नहीं रह सकती हैं। इस न्याय की बात पर किसी को आश्चर्य नहीं हुआ।

तेज आँधी चल रही थी। फिर मेंह बरसने लगा! भैरव नाथजी की लाल ध्वजा कभी-कभी फहराती दीख पड़ती थी। अब उसका काफी रंग उड़ गया था। वे देवता बर्षों से वहाँ हैं। प्रति वर्ष एक बार सिन्दूर का लेप और आठ-दस बकरों का बलि आज भी उनके भाग्य में लिखा हुआ है। बसन्त में अक्सर कोई प्रेमियों का जोड़ा उनकी मढ़ैया में बसेरा ले लेता है। वे देवता मौन रहते हैं। इधर वहाँ रहने वाले उनके आशीर्वाद की अधिक परवा नहीं करते हैं। गाँव से पुजारी सुबह-शाम वहाँ आकर पूजा कर जाता है।

रामी का मन उमड़ रहा था। जिस-भेद को अब तक कोई नहीं जानता था। अब वह प्रकट हो गया है! वैसे वह शरम की खास बात व्यवहार में नहीं रह गई है। उसे वह एक भारी अविश्वास फिर भी मान लेती है। उसके वे पिछले संस्कार नहीं मिटते हैं। वह तोता-मैना के किस्सों पर कभी विश्वास नहीं करती है। क्राँति से वह सदा दूर रही है। और लड़कियों की प्रेम-गाथा से कभी उसका हृदय रोमाँचित नहीं हुआ। वह उनकी परछाँई से भागती थी। उसने न जाने भादों की कितनी काली-काली रातें अकेली काटी थीं। बादलों के गर्जन ने कभी हृदय को निर्बल नहीं बनाया था। वहाँ कोई कम्पन नहीं हुआ। बसन्त की भीनी-भीनी हवा भी उसे छूकर, उसके हृदय की थाह कभी नहीं पा सकी थी।

"पिता का भूत·····!" दूसरी गुनगुनाई।

पहली चौंक उठी। एकाएक अचरज में पूछा, क्या दीदी?"

"शरद की चाँदनी रात थी। यही भैरव की मढ़ैया। पिछली लड़ाई का जमाना। एक नव-बधू यहाँ पूजा करने आई थी।

उसका पति फ्रान्स की लड़ाई पर गया था। पुजारी के चेले······!"

पहली की समझ में बात नहीं आई।

तब दूसरी बोली, "उसका पति वहीं मर गया था। वह अपने मायके चली गई थी। आठ साल बाद वह फिर गाँव में लौट कर आई थी। उसके साथ सात साल का लड़का था। वह लड़का··!"

भूत! यह शब्द पहली के मन पर फैल गया। उसे लगा कि उसका गला घुँट रहा है। बड़ी बेचैनी लगी। एकाएक सारा बदन सिकुड़ गया, फिर वहाँ सिहरन फैली। हृदय भारी हो आया। वह तेजी से बोली, "भूत! भूत दीदी!!"

"वह लड़का फौज में भरती हो गया था। पाँच महीने हुए वह गाँव छुट्टी पर आया था। और·······!"

पहली अवाक् रह गई। अब के होलियाँ आईं और चली गईं। गाँव में कोई खास बहार नहीं आई। एक संध्या को वह नदी के किनारे गई थी और पाया था कि गाँव का एक फौजी ऊँची चट्टान पर बैठा हुआ बल्सी से मछली पकड़ रहा था। नदी फेन उछालती स्थिर थी। उसने उसके देखते ही देखते तीन चार मछलियाँ पकड़ ली थीं। वह तो कुतूहल के साथ उस खेल को देख रही थी। धुँधली रात पड़ रही थी। अब वह सँभली, गगरा भरा और गाँव की बटिया पर लौटने को थी कि आहट पाकर उसने इसे देखा था। वह रंगीन तौलिए पर मछलियां बाँधता हुआ मुसकरा उठा था। वह सन्न रह गई और जल्दी-जल्दी गाँव की ओर बढ़ गई थी।

और वह भूत······। पुजारी का लड़का··वह नव बधू···! भैरवनाथ की मढैया! उसे इस सबका ज्ञान पहले नहीं था। पहले एक दो-बार उस लड़के को देखा था, फिर वह फौज में

चला गया और भूत बन कर लौटा था। इसका ज्ञान पहले किसी को कब था। वह बहुत बातूनी था। दिन भर युवतियाँ उसे घेरे हुए रहती थीं। वह उनको कई मुल्कों के किस्से सुनाया करता था। और ब्रह्मा—वहाँ के घने बन, हाथियों के समूह को देखकर भय लगता है। लताओं के बने कुदरती पुल। शेर, रीछ, चीता आदि जंगली जानवरों से पग पग-पर खतरा था। सागौन, सिन्दूर, बाँस के जंगल। गांवों में बांस के बने छोटे-छोटे घर। जंगलों में दीमकों के बनाए नौ-नौ फुट के थुहे, मांडले, रंगून जहां रमणियाँ दूकानें चलाती हैं। उनका गले पर बँधा हुआ चमकीला रेशमी रूमाल, बहुरंगी चोलियां, चकमक आँचल और बालों में सजाए हुए रंग-बिरंगे फूल। वे बात-बात पर मुसकराती और शिष्ट मजाक करतीं। वे तो चुरट भी पीती थीं। वह इरावदी नदी का किनारा, जिसके दोनों ओर शिलाएँ ही शिलाएँ हैं। वहां का सुन्दर दृश्य···!

एक दिन वह बोला था, "दुपहरी को आओगी वहाँ ?" उंगली से नदी की ओर इशारा किया था। वह तो डर गई थी। बस चुपचाप भाग आई। बहुत डर गई थी। लेकिन शाम को वह एक।एक नाशपाती और खुमानी की क्यारियों के बीच की बटिया पर मिल गया था। वह अब क्या करे, असमंजस में पड़ गई। कठफोड़वा पत्ती अखरोट के पेड़ पर चोंच मार कर खट, खट, खट, खट की आवाज कर रहे थे। जो दूर से प्रति ध्वनित हो रही थी। नीचे नदी शोर मचाती हुई मचल रही थी। कठफोड़वा अब दो हो गए थे। आड़ू के पेड़ों के गिरोह से तोतों का एक झुंड उड़ कर आकाश पर छा गया। उस बाग में बसन्त की मतवाली बयार अनायास ही बहने लगी। उसने सिर पर एक रेशमी रूमाल बांध रखा था। वह एक लता पर पत्तियां बांधे, सिर पर गट्ठड़ धरे थी। बकरी का बच्चा उसके पावों में

लिपट रहा था। उसके सिर का बोझा गिर पड़ा। वह अवाक् उसे देखती ही रह गई। फिर संभली और तेज कदम बढ़ाती हुई घर की ओर बढ़ गई।

आगे एक रात्रि को वह मलाया की कहानी सुना रहा था। वहां के नारियल, सुपारी, चंदन, केला आदि के बागों का हाल; तितिलियाँ, घोंघे, बारहसींगे, गैंडा, चीता, मनुष्य की तरह वाले बन्दर और उड़ने वाली लोमड़ियाँ··· ! फिर वह समुद्र का किनारा, प्रवाल, सीप, स्पंज हरा कछुआ·····। रात्रि को ज्वार उतर जाने पर पेराग की नदियों का शान्तिमय किनारा। जहां चिरैया मछलियों का शिकार करती है। वह तो वहां के गीत सुनाता और नाच नाचता था। सब युवतियां चाव से उसकी बातें सुनती रहती थीं। उसका एक-एक शब्द मधुर और गुंथा हुआ होता था। बीच-बीच में वह किसी युवती से चुटकी भी ले लेता था। उसकी बातों में लोच और प्राण थे, जिनको वह पाना चाहती थी।

उसके पीछे कई युवतियां पागल थीं। वह फक्कड़ लड़का छुट्टियां व्यतीत करने के लिए आया था। जल्दी ही लाम पर चला जावेगा। वह युद्ध की कई दिलचस्प घटनाओं का वर्णन करता था। बात-बात में स्त्री जाति के प्रति घोर घृणा व्यक्त करने में भी नही चूकता था। उसकी आंखों में एक पैना पन था जो हृदय को आसानी से बेंध लेता था। उसकी छुट्टियाँ एक-एक करके बीत रही थीं। वह जीवन-मुक्त था, किसी बात की खास परवा उसे नहीं थी। गांव की कुछ युवतियों उससे घनिष्ठता बढ़ा रही थीं। तरह-तरह की बातें सुनाई पड़ती थी। वह तो सबको बैठा कर अमरीकन राशन वाले टिन खोल कर उनको खिलाता था। कई और राशन की टीन में बन्द चीजें लाया था। उसके रङ्गीन किस्से कभी समाप्त नहीं हो पाते थे।

—एक दिन वह गाय दुह रही थी कि एकाएक किसी की आहट पाकर उस ओर देखा। वह लड़का आया था। पास आकर बोला, "मैं कल सुबह जा रहा हूँ रामी।"

वह उसी भांति गाय दुहती-दुहती रही।

"सुनती हो?

सुनना ......। वह आजकल कुछ कब सुन पाती है!

"रात को घूमने चलोगी।

वह चुप रही।

"मैं रात को दस बजे झरने के पास वाली चट्टान पर मिलूँगा।" कह कर वह बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए हुए ही चला गया था।

वह बड़ी देर तक उसे जाती हुई देखती रह गई। बछिया ने चुपके मां के थन पर धावा बोल दिया था। दूध से भरा हुआ बर्तन लुढ़क पड़ा और सब दूध बह गया। वह चौंकी और घबरा कर घर की ओर भाग गई। दरवाजा बन्द किया। बिना दिया बाले ही लेट गई। नींद नहीं आई। चांद की रोशनी कहीं किसी सूराख से भीतर आ रही थी। कहीं दूर जंगल में कोई पत्ती तेजी से बोल रहा था। वह बड़ी देर तक करवटें बदलती हुई लेटी रही। अब उठी और कमरे के भीतर टहलने लगी। बाहर से जानवरों के गले की घंटिया कभी-कभी बज उठती थीं। उससे वह चौंक उठती थी। एकाएक उसे लगा कि उसके हृदय की गति बन्द हो गई है। वह अब मर रही है। कमरे के किसी कोने से कोई उसका नाम पुकार रहा था। वह उठी। एक नई चेतना आई। नया ज्ञान मानों कि पा लिया हो। उसने दरवाजा खोला और तेजी के साथ भागती हुई झरने की ओर बढ़ गई। उसकी धोती का छोर उड़ रहा था। वह जल्दी में गरम ओढ़नी ले जाना भूल गई थी। ठंडी हवा तेजी से बह

रही थी। कभी तो वह शरीर पर कंपकंपी फैलाती थी। और वह तो झरने के पास वाली चट्टान पर बैठा हुआ कुछ गुनगुना रहा थी। वह उसे देख कर लाज से भर गई।

"तुम आ गई। मुझे आशा नहीं थी।"

उसका शरीर एक बार रोमांचित हो उठा। वह थक कर चट्टान के सहारे खड़ी हो गई। उजली चांदनी रात थी। आकाश पर तारे झिलमिला रहे थे। सामने वाले घास के मैदान में रंगीन फूल खिले हुए थे। नदी का कल-कल स्वर उस निस्तब्धता में गुनगुना रहा था। कुछ दूरी पर जो ऊँची पहाड़ी चोटियां थीं खूब बरफ से ढ़की थीं। वे चमक रही थीं।

"मैं लड़ाई की बात सोच रहा था।"

वह तो कुछ नहीं जानती है। उसका युद्ध से जो सम्बन्ध है, वह पति हैं। जो कि पांच साल से लौट कर नहीं आए। जो बातें सहेलियों से उसने सुनी हैं, वे तो मनोहर और सुन्दर कहानियां भर लगती थीं।"

कहा उसने, "काला पांजिन घाटी पर हम लोग तोपें लेकर बढ़ रहे थे। घनघोर मेंह बरस रहा था। कभी-कभी तो हमें कमर-कमर तक पानी वाली छोटी नदियां पार करनी पड़ती थीं। हम चार थे और जापानी चालीस-पचास। खूब गोलावारी की। जापानियों ने दस्ती-बम फेंके थे। हम भी पीछे नहीं हटे। उसके बाद मैं बेहोश हो गया था। सुबह मालूम हुआ कि मेरे साथी मर गए हैं और मैं तोप के नीचे दबा हुआ था। उस दिन मर जाता तो······।"

मर जाना! इस लड़ाई में लोग मर जाते हैं। वह जानती है। पास के गांव के बहुत लोग एक पल्टन में थे, जो कहीं रेगिस्तान की लड़ाई में मर गए थे। और वह लड़ाई की बात

जानती है। वह कह रहा था कि वह बहुत सरल लड़की है। वह उसे धोखा नहीं देगा। आजीवन उसे प्यार करेगा।

अब वह चैतन्य हुई। वह रात को घर से निकल कर आई थी। उसका सारा शरीर कांप रहा था। कोई देख लेगा तो क्या होगा ? उसकी सहेलियाँ हँसी उड़ावेंगी। वह साहस बटोर कर बोली, "मैं घर जावूँगी।"

वह तो खिलखिला कर हँस पड़ा था। वह तीष्ण हँसी तो तोता-मैना की कहानी वाले जादूगर राजकुमार की थी। कांति ने ऐसी ही एक कहानी कभी सुनाई थी।

अब वह चट्टान पर से उतरा और उसका हाथ पकड़ कर बोला, "वहां इन सुन्दर बनों में घूमने के लिए मन तड़पता था। ऐसी चांदनी वहां नहीं चमकती है। फिर न जाने कब आवूँगा और मर गया तो याद करेगी तू......!"

छी मर जाना। क्यों मरेगा वह ?

वे बड़ी रात तक देवदारु से बनों में घूमते रहे। वहाँ उन स्वस्थ पेड़ों की भीनी-भीनी महक बह रही थी। वे विशाल पेड़ स्थिर खड़े थे। वहाँ उन्होंने कई सुन्दर झरने ढूँढ निकाले। सेव, खुमानी, नाशपाती की क्यारियां ; अखरोट के पेड़......; वह एक बालिका की भांति उस नई दुनिया को समझ लेना चाहती थी।

और वह थकी भारी सी घर लौटी थी। अगले दिन दोपहर तक सोती रही। जब उसकी नींद टूटी तो वह नदी किनारे पहुँची। वहां सुना कि वह चला गया था।

—कुहरा छन रहा था। अब मेंह का वेग भी कम हो गया। पहली चुप बैठी ही हुई थी। दूसरी बोली, "चल अब। ज्यादा सोचने से क्या होता है।"

पहली तो रो रही थी।

"क्या हो गया री !"

पहली की आँखों में आंसू की बूँदे चमकने लगीं।

"पुरुष युद्ध करते हैं अपनी शक्ति का दिखलावा करने के लिए और हम जो निर्बल हैं......।"

"क्या कहा दीदी ?"

"प्रकृति से झगड़ा करना हमने नहीं सीखा है। यह हमारा अपराध नहीं ! सदा से यही होता रहा है।"

"क्या दीदी ?"

"ये भूत हमारे पड़-दादा, दादा और न जाने किन-किन पुरखों के काल से चले आ रहे हैं। तुझे दुःख किस बात का हो रहा है री ?"

पहली अवाक् चुप थी। मातृत्व का यह पहला पैना कटाक्ष था।

दूसरी ने घास का गट्ठड़ उठा लिया। बोली, "चल अब।"

दोनों गांव की बटिया की ओर बढ़ गईं।

क्यूँ ?

शहर के जीवन में जिस भांति लम्बी-चौड़ी सड़कों के बाद गलियों का घना जाल रहता है, उसी भाँति मनुष्य के जीवन में बड़ी-बड़ी घटनाओं के बाद भी छोटी-छोटी घटनाएँ अपना महत्व रखती हैं। शहर की गलियाँ नीरस लगती हैं। वे शहर के बाहरी निखरे व्यक्तित्व के भीतर पिछवाड़े की धुंधली और मटमैली झांकियों के अतिरिक्त और कुछ नहीं सी हैं। कभी तो नया मुसाफिर अनुमान तक नहीं लगा पाता कि वह गली एकाएक कैसे समाप्त हो गई, कारण कि उसे रास्ता नहीं मिलता है। वह तो उलझन में असहाय-सा भौंचक्का खड़ा भर रह जाता है। आज गोपाल भी जीवन की एक गली के भीतर पहुँच कर स्थिर-सा खड़ा है।

आगे का रास्ता उसे ज्ञात नहीं और पीछे मुड़ जाना जैसे कि उसकी एक मौत होगी। कभी वह भावुकता वाली आत्म-हत्याएँ करने में प्रवीण था। आज अब वह बात नहीं है। यद्यपि वह जानता है कि आज युद्ध के इस जमाने में भावुकता का प्रवाह बहुत तेज है। यह युद्ध मानव भावुकता में उफान तो लाया ही है, विचारों की भी एक नई दुनिया बसाने में आगे बढ़ गया। मानो कि वे बड़ी-बड़ी घटनाएँ आर्थिक-व्यक्ति से आर्थिक परिवार तक ही सीमित न रहकर, अब विचारों वाले परिवार की ओर बढ़ गयी हों।

क्या गोपाल उस सब पिछले जीवन को तोड़ कर एक-एक घटना बिखेर देना चाहता है? सरला से सुबह उसने यह बात

कही तो वह मलिन हँसी हँस कर बोली, "आप तो बेकार डरा देते हैं। देखो, आज कैसी भी धोतियाँ मिलें, जरूर ले आना। आखिर तन तो ढकना ही है।"

आज अब उसमें उस कन्ट्रोल की दूकान के आगे 'क्यू' बना कर खड़े होने की सामर्थ नहीं है। कल वह छै घंटे खड़ा रहा था। उसके आगे शायद कोई मछली बेचने वाला था, जिसके शरीर से मछलियों की गंध आ रही थी। पीछे कोई रेलवे स्टेशन का कुली अपनी लाल वरदी में था। उसका मन उस भीड़ से उकता गया। उसके संस्कारों पर वह एक कड़ी चोट थी। क्या वे पुराने सड़े-गले संस्कार चकनाचूर हो जावेंगे ? एक बार उसके मन में यह भाव उठा था, फिर भी वह चुपचाप उस अपार भीड़ में खड़ा ही रहा। साढ़े दस बजे रात को एका-एक दूकानदार ने दूकान बन्द कर दी। तभी वह रेलवे का कुली तेजी से बोला, "बाबू जी, साला बदमाश है। सब गाँठें छिपा लेगा और कल से छुपा-छुपाकर माल बेचेगा।"

गोपाल ने सुना था और उसके सामने उस चोर-बाजार और कन्ट्रोल की मैली धुंधली तसवीरें आ गईं। वह बड़ा बङ्गाल का अकाल, जिसने कि चालीस लाख की आबादी को अपने काले आंचल से ढक लिया था। वहाँ का वह समाज जो कि आज मिटता जा रहा है। वहाँ की वह पुरानी संस्कृति जो आज अनाचार, व्यभिचार, कॉलरा, चेचक आदि की मैली-मैली चादरों में छुपी हुई है। और सरला की माँग कोई बड़ी नहीं थी। कहा था, "जनानी धोती न मिले तो मरदानी ही लेते आना। मैं अपनी पुरानी धोतियों की किनारी उस पर लगा लूँगी।"

बात सरला ने ठीक ही कही थी। किसी तरह मुन्नी को तो वह सजा लेती है। उसके सारे शादी वाले जंपर, ब्लाउज एक-

एक कर मुन्नी को काट-छाँटकर पहना दिए गए। वह मुन्नी तो आज 'रानी बिटिया' घोषित हो चुकी है। उसे उसका हक पूरा पूरा मिलना चाहिये। कई बार गोपाल ने प्रतिवाद किया कि इस तरह इन सब कपड़ों की काँट-छाँट अनुचित है, तो सरला कहती है, "एक तो लड़की है, और ···।"

"और तुम सरला ?"

"अब लड़ाई के बाद हवस पूरी करूँगी।"

सरला की हवस कब बड़ी रही है। वह तो सफेद वायल की एक साड़ी का कपड़ा चाहती थी। पिछले साल नुमायश में उसने एक अच्छा उन्नाबी-रङ्ग का चार अंगुल चौड़ा बाउडर खरीदा था। वह तो पन्द्रह महीने से पड़ा-का-पड़ा हुआ है। गोपाल कभी भी अच्छे पति की तरह पाँच गज सफेद वायल तक कहीं से नहीं ला सका था। सरला अब इस माँग पर बहस नहीं करती है। पहले तो वह बार-बार ताना मारती थी कि कंगाल घर में माता-पिता ने फेंक दिया है। गोपाल ने भी कई स्कीमें बनाईं कि वह उसे ठग ले। पर यह आसान नहीं लगा। कागज पर लिपटा हुआ बाइल का बंडल वह कभी संध्या को सरला को नहीं सौंप सका था। एक तहसीलदार साहब से उसकी दोस्ती थी। एक पुलिस इन्सपेक्टर ने आश्वासन दिया था, कपड़ा कन्ट्रोल अफसर के एक बाबू ने तो कहा था कि अगली गाँठ के आते ही पाँच क्या दस गज सफेद वायल दे देगा। सबके वायदे आज भी जैसे-के-तैसे ही हैं।

गोपाल इस कन्ट्रोल और चोर बाजार दोनों से परेशान है। मुन्नी पिछले दिनों बीमार हुई थी, डाक्टर ने गल्यूकोज देने को कहा था, वह बड़ी कठिनाई से चोर बाजार में मिला। लकड़ी का कन्ट्रोल हुआ तो वह पाँच पंसेरी से दो पर पहुँच गई। लेकिन वह डेढ बोतल माहवारी वाला मिट्टी के तेल का राशन

कार्ड भी अब घर को पूरे दिनों रोशनी नहीं दे पाता है। अतएव सरला बार-बार झुंझलाती है कि बत्ती ऊँची न करो। तुम्हारा क्या है ? अंधेरे में चौका-बरतन तो मुझी को करना होगा। खुद तो ठाठ के साथ मच्छरदानी ओढ़ कर सो जाओगे।

वह सरला शायद नहीं जानती है कि गोपाल बाबू हमेशा से मिट्टी का तेल इफरात से खर्च करने के आदी हैं और एक-एक जासूसी उपन्यास पढ़ने में रात-भर में एक-एक बोतल तेल खर्च कर चुके हैं। राशनवालों के आगे आज इस वकालत से काम नहीं चलेगा। सरला तो अंधेरे में चौका-बरतन कर सकती है; परन्तु गोपाल जो 'एक रात में चार खून' पुस्तक लाया है, उसे अंधेरे में नहीं पढ़ सकता ! सरला थक कर सो जाती है, तो वह बड़ी रात तक 'ब्लेक' साहब की आत्मा को कोसता है कि ऐसे उपन्यास क्यों लिखे, जिनको पूरे पढ़े बिना चैन नहीं पड़ता है।

ओः गोपाल राह चलते-चलते एक बात भूल गया था। वह बात जैसे कि सरला की धोती के ऊपर थी, जो कि उसके ऊबड़-खाबड़ विचारों में दब गई। वह था 'आधी पाउण्ड' ऊन का 'परमिट'। एक दिन सरला की सहेली आई थी। वह एक छोटी बुनी हुई ऊनी-चादर ओढ़ कर आई थी। पूछने पर उसने सरला से कहा था कि एक पाउण्ड ऊन में यह आसानी से बन जाती है। उसकी बुनाई भी सिखलादी थी। संध्या को गोपाल आफिस से लौटा था कि सरला उससे बोली, "देखोजी, सुना है सांवलदास की दूकान पर पाँच रुपया 'पाउण्ड' वाली ऊन आई है। एक पाउण्ड लेते आना। एक चादर बन जायगी, तो बाहर निकलने पर कुछ तो ओढ़ने को हो जायगा।"

साइकिल पर पैडिल मारता-मारता जब वह दूकान पर

पहुँचा तो मालूम हुआ कि ऊन के लिए, 'परमिट' चाहिये। उसने 'परमिट' के लिए अरजी दी तो आधी पाउण्ड का आदेश-पत्र मिला। सरला तो यह सुनकर बोली, "मेरा तो भाग्य खोटा है, तुमने तो पूरी कोशिश की थी। आधी पाउण्ड में तुम्हारी 'जरसी' डाल दूँगी।"

"मेरी जरसी ?"

"हाँ, सकरपारे वाला डिजाइन कैसा रहेगा ?"

"तू अपने लिए क्यों नहीं बना लेती है सरला। मेरे पास तो दो पुरानी हैं ही।"

"तुमको आफिस जाना होता है। मैं बाहर तो जाती नहीं हूँ।"

बहुत समझा-बुझा कर उसने सरला को राजी किया था कि वह अपने और मुन्नी के लिए ही बुनले। सरला ने उसकी पूरी तैयारी भी कर डाली। अपने सन्दूक से ढूँढ-ढाँढ़ कर 'सिलो-लाइट' की सींकें निकाल लीं। साथ ही यह भी निश्चय कर लिया था कि किस 'डिजाइन' की बुनेगी। भारी उत्साह से उसने यह सब बात गोपाल से कही थी। वह तो सरला के उस सरल व्यवहार पर मुग्ध रह गया था।

—लेकिन अब तो वह गोपाल फिर एक बार जीवन की उस गली में खड़ा था जो चमकीली नहीं थी। वहां उसे जीवन का बाहरी विज्ञापन नहीं मिला था। वह उसी जगह में खड़ा था, जहां उसे आशा थी कि आज धोती जरूर मिलेगी। आज वह एक बार फिर सरला को खिली हुई देखना चाहता है। सरला का अनायास इस भांति जीवन में मुरझा जाना उसके लिए असह्य होता जा रहा है। वह सरला के आगे इस युद्ध से आई मुसीबतें, यह कन्ट्रोल, यह राशन और उस चोर-बाजार की दलीलें देता-देता थक गया है। सरला उनको सुनना नहीं चाहती

है। न वह यह सब आगे दुहरावेगा। वह निर्बल सरला को युद्ध की इन मैली झांकियों से अलग रखना चाहता है कि उसके कोमल हृदय पर उनकी भद्दी छाप न पड़े। फिर भी परिस्थितियां मजबूर कर देती हैं। अन्यथा वह तो आसानी से अपने इस परिवार को चला लेता था। अब वह थक गया है। तो क्या यह उसकी हार ही है। हार पर वह विचार करता है। और उस 'परमिट' से वह ऊन खरीद लाया है। परन्तु वह भी उसकी एक बड़ी हार थी। रंगीन ऊन कभी की बिक चुकी थी। सफेद ऊन आधी पाउण्ड उसे मिली है, जो कि सरला के किसी काम की नहीं। सरला का वह मन आज फिर मुरझा जायगा, आंखें फीकी पड़ जाएंगी। क्या सरला आज अपनी रोजाना की बनी आदत के अनुसार चुप रहेगी ? या उसका विद्रोह सुलग उठेगा। आज यह सरला पहले जैसी नहीं है। वह उसमें एक अन्तर भांपता है। कभी-कभी वह कहती है कि उसकी कमर दुःखने लगती है। मेहरी का प्रबन्ध वह नहीं कर पाया है। इधर दो-तीन महीने से वह खुट-खुट खांसती भी है। वह यह सब चुपचाप सुनता और देखता जा रहा है। कभी-कभी वह पाता है कि सरला गरम लग रही है। वह चुपके कहती है कि शायद उसे बुखार रहता है।

—वह गोपाल जिस 'क्यू' में खड़ा है वह उसके परिवार की सीमाओं से आज बहुत निकट है। वह जानता है कि इस क्यू पर विजय पा लेना आसान बात नहीं है।

'क्यू' अंग्रेजी में पंक्ति को कहते हैं।

नया रास्ता

कादम्बरी तो कहती है· · · ?

कालिका उसकी बात नहीं सुनता है। वह कहती है, रोज कहती है और कहती-कहती कभी थकती नहीं। बार-बार अपनी बातों को दुहराना-तिहराना उसकी आदत बन गई है। कालिका जान कर नहीं सुनता है। वह तो सुन कर बोगा बन जाता है। मन में कभी बात जड़ पकड़ती है, तो उसे उखाड़ फेंकता है। वह उस लड़की की सारी बातें याद नहीं रखना चाहता है।

वह घर लौट रहा है। सड़कों पर अपार भीड़ और जनता में भारी उत्साह पाता है। सड़कें बन्दरवारों और झंडियों से सजी हुई हैं। जगह-जगह पर तिरंगे झंडे लटके हुए थे। नगर राष्ट्रीय पर्व मना रहा है। नेहरूजी जेल से छूट आए हैं। जनता भारी उत्साह और उमङ्ग में उनका स्वागत कर रही है। ८ अगस्त सन् १९४२ को देश में एक तूफान आया था; और १८ जून, १९४५ को ठीक ग्यारह सौ एकतालीस दिन के बाद नेता जेल से छूटे थे। एक नई आशा की बयार बह पड़ी थी।

किन्तु, वह तो उलझन में पड़ जाता है। कान में कोई चुपके से कहता है—राजनीति पैसा खींचती है! पैसा खींचती है!! पैसा खींचती है!!!

कालिका को जैसे कि ठोकर लगी हो। वह तिलमिला उठता है। देश की तसवीर आगे पड़ती है। जो कि धूल से भरी हुई है। जहाँ कि उस आन्दोलन के बड़े-बड़े घाव अभी भरे नहीं जा सके हैं। उसका मन मुरझा जाता है। फिर राष्ट्रीय नेताओं

की कई झाँकियाँ वह पाता है। वह एक महान् नेता के समीप चार साल रहा है। यदि उसके……! वे दयालु थे, कुछ अहिंसा के पुजारी थे, बहुत बड़े त्यागी थे और एतिहासिक परम्परा से अधिक कल्पना की बातों पर विश्वास करते थे। वे पाई और रुपये के बीच की दूरी के पूरे भेद को समझते थे। बात-बात पर उलझ जाना, अविश्वास पर पनपना और कन्धे हिला-हिला कर मुस्कराते हुए बोलना, उनकी आदत थी। वह उनको आज फिर पहचान लेना चाहता है। लेकिन उसके मन पर उनके व्यक्तित्व की जो छाप पड़ी है, वह उस ऊँचाई और नीचाई के बीच वाले फासले पर टिक जाता है। वह अपने दृष्टि-भेद को आसानी से कदापि स्वीकार नही करेगा।

शहर में कौलाहल था। एक नई शमा छाई हुई थी। वह चुपचाप रास्ता पार कर रहा था। कब अपने मकान पर पहुँच गया, नहीं जान सका। रात पड़ गई थी। लोग जलूस देखकर लौट रहे थे। उसने अपने घर के दरवाजे की कुण्डी खटखटाई कुछ देर तक दरवाजा खुलने की प्रतीक्षा की और फिर कुण्डी खटखटाई। अब कादम्बरी ने खाँसते हुए दरवाजा खोला।

"डाक्टर की दूकान बन्द है।" बोला, कालिका।

कादम्बरी बात अनसुनी कर भीतर चली गई। कालिका ने आंगन में पड़े हुए जूठे बरतनों को देख कर पूछा, "मेहरी नहीं आई ?"

कादम्बरी वहां नहीं थी। वह तो भीतर खांसती-खाँसती रही। कालिका तो आंगन का निरीक्षण सा करता रहा। एक कोने पर कूड़े का ढेर पड़ा हुआ था। गमले में तुलसी का पौधा मुरझा गया था। नल पर लटकी हुई धोती की किनारी से पानी बह रहा था। आंगन से लगा हुआ खड़ा जो बूढ़ा नीम का पेड़ है, उसके पीले पत्ते और फल भी एक बड़े हिस्से में टपके पड़े

हुए थे। उसे भारी उमेश लग रही थी। आकाश पर बादल घिरे हुए थे। यदा-कदा हवा के ठंढे झोंके चल पड़ते थे। अब हवा तेज चलने लगी और लगा कि आँधी आने वाली है। दरवाजे और खिड़कियाँ खटखटाने लगीं। आँधी का वेग बढ़ रहा था। गर्द उड़ने लगी। कालिका कुछ सोच कर दरवाजे पर खड़ा हुआ और पूछा, "अम्मा कहाँ है ?"

"मुझे मालूम नहीं है।" तुनक कर उत्तर दिया कादम्बरी ने।

कालिका क्षण भर चुप रहा। पूछा फिर, "और रमेश ?"

"साथ ले गई हैं।"

ओ, रमेश कहाँ होगा। जैसे कि कादम्बरी का मातृत्व उमड़ आया। बोली, "आँधी आ गई है। वे जलूस देखने गए थे।"

लेकिन कालिका कहाँ ढूँढ़ने जाय। कादम्बरी चारपाई पर लेटी हुई थी और कालिका पास पड़ी हुई कुरसी पर बैठ गया।

"तबीयत कैसी है ?"

कादम्बरी चुप।

कमरे के भीतर धुँधली-धुँधली काली रात की छाया फैलने लगी। बाहर वही गर्द भरा तूफान उठ रहा था। वह कुछ सोच रहा था कि बोली कादम्बरी, "भैय्या को चिट्ठी लिख दो।"

कादम्बरी अक्सर आँसू बहाया करती है। यह आँसू बहाना तो उसकी जाति की उदारता है। यह मायके जाने बात नई नहीं थी। पहले कभी वह यह चर्चा नहीं उठाती थी। वह मायके काफी दिन रही है और उसका तो कहना था कि अब वह उस का झूठा सा घर है। आज ऐसी क्या बात होगी कि मायके की याद जाग उठी है। यह मायके की भूख तो सदा ही लड़कियाँ भावुकता के साथ अपने हृदय के कोने में छुपाए रखती हैं। वे बचपन की स्मृतियाँ आगे यदा-कदा याद पड़ती रहती हैं।

उसने तो अब कादम्बरी का धुला हुआ चेहरा और गुलाबी आँखें पाईं। वह जैसे कि बड़ी देर तक रोती रही है। वह क्या सान्त्वना दे। यह कोई नई स्थिति भी नहीं है! सास-बहू किसी छोटी सी बात पर आसानी से झगड़ उठती हैं और कालिका को दोनों पक्ष की बातें श्राप या बरदान सी स्वीकार करनी पड़ती हैं। वे तेज आंधियाँ आती हैं, साधारण से बादल फिर परिवार की दीवारों से टकराते हैं। अंत में कादम्बरी आंसू बहा कर अपनी हार स्वीकार कर लेती है।

कादम्बरी का मायका गया-बीता नहीं है। बड़ा भाई फौज में मेजर है और छोटा एम० बी० बी० एस० डाक्टर। दो और भाई कालेज में पढ़ रहे हैं। वह मायके पर होने वाले हमलों को नहीं सह सकती है। अम्मा पुरातन से प्राप्त सास के अधिकारों को उपयोग में लाती हैं। उसका कथन है कि आज सास जाति ने अपना अनुशासन ढीला कर दिया है। पहले तो बहुएँ सास के आगे मुँह तक नहीं खोलती थीं। आज तो वे आते ही सारे घर की स्वामिनी बन जाती हैं। अम्मा अपने उन पुराने संयुक्त परिवारों की नजीर पेश करके, आखिर मुँह फुला कर बैठ जाती है। उसे अपनी जाति के अधिकारों का अपहरण होने का बहुत दु:ख है।

वह कालिका सोचता है, कादम्बरी पर······। आज उसकी सेहत भली नहीं है। पहले तो यह बात नहीं थी। कादम्बरी खिलखिला कर हँसती थी। वह हँसी बुलबुल के गीतों की तरह परिवार के भीतर नए प्राणों का संचार करती थी। वह तो उसे समीप से पहचान लेना चाहता था। वह नया जीवन परिवार में लाई थी। वह सावधानी से उसे भांपा करता था। उसकी एक-एक बात पर विचार करता था। जब वह बहुत थक जाता

तो यह कादम्बरी नई चेतना उसे सौंपती थी। वह सोचता था कि यह कादम्बरी क्या है ?

—वह १९४० की एक सुबह थी। कादम्बरी चाय का प्याला बना कर लाई थी। लेकिन एकाएक पीछे लौट गई। ऊपर कमरे में रमेश रो रहा था। कालिका को अनुभव हुआ कि वह उन किलकारियों से बड़ी दूर सा है। सुबह पुलीस आई थी। अब चेचक के दाग से भरे हुए चेहरे वाले अफसर ने तो जमहाई लेते हुए कहा था; "राय साहब लिखिए—१९०५ का क्रान्ति : लेनिन······।" उस पुस्तक पर अपनी फाउन्टेन पेन की भद्दी लिखावट में चौबीस का अंक डाल कर, एक बेडोल घेरा बना दिया था।

राय साहब की मोछें मोम लगाकर उठाई हुई थीं। ओंठ पान से तर थे। वे तम्बाखू की जुगाली ले रहे थे। अब संभल कर कागज पर लिखने लग गए।

पहले व्यक्ति ने चुपचाप किताब चमड़े के सूट-केश पर डाल दी। फिर 'नेशनल-फ्रन्ट' की फाइलें उठा कर बन्दर की तरह उनको टटोलने लगा।

कालिका चुपचाप वह खेल देख रहा था। उसका चेहरा उदास पर मन स्वस्थ था। उसने खिड़की से बाहर नजर डाली। सामने चौड़े पड़ाव पर तांगे वाले तांगा जोत रहे थे। कोई घोड़े को मल रहा था। दूसरा रास चढ़ा रहा था। तीसरा अपने घोड़े की नाल की परीक्षा करता हुआ चमार से भाव-तोल कर रहा था, तथा उसे चेतावनी देता था कि वह अब लापरवा हो गया है। अच्छी नाल नहीं लगाता है। पास ही घसियारों की कतार बैठी हुई थी। वे अपने घास के गट्ठरों को खोल रहे थे तथा होशियारी से मोल-भाव कर रहे थे। मुसलमान पावरोटी

और चायवाला अपनी सुबह की फेरी पूरी कर चुका था। अभी भी उसकी तेज आवाज—चाय गरम, पाव रोटी! मोहल्ले की सीमा को छेद कर, उसके कानों पर पड़ रही थी। उस वातावरण में सुबह की मस्ती छाई हुई थी। वे सब स्टेशन जाने की तैयारी में थे, जहाँ दिन भर देहरा, लाहौर, कानपुर, इलाहाबाद काठ गोदाम आदि स्टेशनों से आने-जाने वाली गाड़ियाँ उनको मिलती हैं। कालिका उन सबको पहचानता है। पिछले दिनों पूरे एक महीने उन्होंने अपने कुछ नागरिक अधिकारों की मांग के लिए हड़ताल की थी। उनका अपना मजबूत संगठन है। वे सफल हुए थे, कालिका उनके कुल्हड़ की चाय और पावरोटी की दावत में कई बार शामिल हो चुका है। उसे उनकी कव्वाली पार्टियाँ बहुत पसन्द हैं। वे जीवन-मुक्त हैं। मध्यवर्ग की भाँति झूठी सामाजिक मर्यादा और प्रतीष्ठा की परवा नहीं करते। कालिका तो जानता था कि समाज केवल व्यक्तियों का समूह भर ही नहीं है। वहाँ श्रेणियाँ हैं, जिनका आपसी संघर्ष लगा ही रहता है।

कादम्बरी बार-बार दरवाजे के पास आकर लौट जाती थी। कालिका उस आहट को पहचानता था। कादम्बरी के मन की भावना को समझ रहा था। किन्तु उसे समझाने में अपने को असमर्थ पाता था। वह कादम्बरी उसके बहुत समीप आ लगी है। आज वह उसे छोड़ कर चला जायगा। जब कभी वह कादम्बरी को इस बात की ओर आगाह करता था, तो वह हँस कर उत्तर देती थी कि उसे डराने का झूठा हथियार वे व्यवहार में ला रहे हैं। कादम्बरी राजनीति से अधिक गृहस्थी की बातों में रुचि रखती थी और कालिका राजनीति और गृहस्थी की सीमाएँ जोड़ लेना चाहता था। कादम्बरी तो घरेलू लड़की

थी। परिवार का भीतरी ज्ञान पाकर वह वहीं रहने तुल गई थी। वह तो कादम्बरी के मोह के बीच कभी-कभी राजनीति के तेज डंकों से उसे डस लेना चाहता था। एक ठंडा बुद्धिवाद उसे वहां अनायास ही घेर लेता। कादम्बरी का नारित्व और उसका यह बुद्धिवाद फिर भी समझौते के साथ चलता रहा। वह कभी-कभी कादम्बरी की उदासी भरी आंखें और सूखे हुए ओंठ पाता था। साथ ही वह शिकायत करती थी कि वे उसकी अवहेलना करते हैं। वह सावधानी से उस ओर सतर्क हो जाता था। पर वह लड़की घर के भीतर एक आकर्षण थी, जहां कि कालिका अधिक समय चाहकर भी व्यतीत नहीं कर पाता था। आगे दोनों साथ-साथ रहकर भी अलग-अलग से हो गए। कादम्बरी कभी कुछ नहीं कहती थी। उसका वही पुराना व्यवहार था। कालिका ने उसमें कोई अंतर नहीं पाया। वह परिवार से दूर रहता था। उसका मन, उसकी पैनी बुद्धि की ओर खिंच गया। वह राजनीति परिवार के बीच के लगाव को दूर हटाती चली गई। शायद कालिका बहुत दूर सा हट जाता, यदि रमेश का जन्म न होता। रमेश ने कादम्बरी में एक नया जीवन उड़ेला था।

कादम्बरी ने कभी कुछ कहा था; वह उस बात को भूल सा गया था। स्वयं उस कादम्बरी ने आगे कोई याद नहीं दिलाई थी। एक दिन आधी रात को वह लौट कर आया तो मां ने फटकारते हुए सुनाया था कि कादम्बरी के लड़का हुआ है। कादम्बरी को कोई खास कष्ट नहीं हुआ था। अचरज में उसने पाया कि वह बहुत दुबली हो गई है। रंग पीला पड़ गया है। वह रमेश मां के लिए जितना ही प्यारा तोहफा था, उतनी ही निर्जीव पति की राजनीति थी। अब वह परिवार के भीतर अपनी नई दुनिया बसा कर रहने लगी। धीरे-धीरे वह नया

आकर्षण पा गई थी। वह बिलकुल बदल गई थी। उसका सौन्दर्य निखर आया था। वह उसमें नूतन जीवन पाता था। वह उस सब को पाकर एक पागल की भाँति उससे प्रेम करने लगा था। विवाह के बाद जो नशा चूक गया था, अब वह लड़की फिर उसे उड़ेलती लगी।

कालिका साथ ही साथ राजनीतिक आंधियों के बीच चल रहा था। साम्राज्यवादी युद्ध शुरू हुआ था, जिसकी गति पर वह सोचता था। वह कादम्बरी परिवार के भीतर सन्तुष्ट थी। उसकी अपनी खास मांगें नहीं थीं। वह युग-युग द्वारा आई हुई अपनी पुरानी मान्यता पर विश्वास करती थी। वह कालिका परिवार से बड़ी दूर चला जायगा, उसे यह विश्वास नहीं होता था। वे कांग्रेसी मंत्रिमण्डल तो उजड़ चुके थे। व्यक्तिगत-सत्याग्रह शुरू हुआ था। जनता आन्दोलन से दूर हटती जाती थी, जबकि यूरोप में दूसरा साम्राज्यवादी युद्ध तेजी से फैल रहा था।

—राय साहब एक-एक गैर-कानूनी पुस्तक को उठाकर उसे तोलते हुए खुश होते थे। कभी तो वे टाइप किये हुए कागजों को पढ़ते, मखोल उड़ाते हुए कहते थे कि इतनी मेहनत कहीं नौकरी पर करते तो जरूर तरक्की पा जाते। या किसी हिसाब के कागज पर लिखा हुआ हिसाब पढ़ कर कहते कि ये लोग पक्के अर्थशास्त्री हैं। उस दूसरे व्यक्ति के चेचक के दाग बार-बार चमक उठते थे। वह तो कालिका से बीच-बीच में चुटकी भी ले लेता था। कालिका उसके फाउन्टेन-पेन के लिखे हुए अंकों को देखता था, जिसके चारों ओर वे टेढ़ा-मेढ़ा घेरा बनाते थे। राय साहब खुशखत में सब कुछ लिख रहे थे।

कालिका को उस सबसे कोई दिलचस्पी नहीं थी। वह न

जाने चुपचाप क्या सोच रहा था। कादम्बरी की आहट मन में फैल जाती थी। फिर वह अपने विचारों में खो जाता था। वह साधारण युद्ध नहीं था। साम्राज्यवादियों ने अपने स्वार्थों के लिए एक बार फिर सारी दुनिया की जनता को युद्ध में झोंक दिया था। इधर देश में राष्ट्रीय-आन्दोलन की भावना जनता के हृदय तक नहीं पहुँच पा रही थी। आन्दोलन चलाने की बात उठती थी, पर उसमें कोई खास जागृति के चिन्ह नहीं थे। देश को अपना जीवन और स्वस्व देने की वह पिछली क्रान्ति-कारी भावनाएँ अहिंसा के परिधान में छुप गई थीं।

कादम्बरी तो बार-बार दरवाजे के पास आ-आकर लौट जाती थी। रमेश सुबह से ही रो रहा था। उसे उसकी परवा कब थी। आज तो वह कालिका को पहचान पाई थी। कालिका जिस सरलता से बातें करता था, वह तब कठिन नहीं लगती थीं। बम्बई के ६०,००० मजदूरों की हड़ताल की बात भी उसने एक दिन सुनाई थी। कादम्बरी ने उस सबके प्रति कभी उत्साह नहीं दिखाया था। आज अब वह बहुत चिन्तित थी। उसका मन उमड़ रहा था। वह तो कालिका से कई बातें पूछ लेना चाहती थी। सोच सी रही थी कि वह सच ही उससे अलग रही है। आज अब वह दूर चला जायगा। वह उसकी बातों पर सोचती थी। वह तो उससे बहुत कम बोलता था। अपने मन में बहुत सी बातें चुपचाप छुपाए हुए रखता था। स्वयं कादम्बरी भी उदासीन रही है। वह उसके भीतर पैठ नहीं पाती थी। अब उसे अपनी उपेक्षा अखरने लगी। वह कालिका तो अब""!

"कादम्बरी तीन प्याले चाय भेज देना।" बोला था कालिका। कादम्बरी तो दरवाजे की आड़ में गुमसुम खड़ी थी। भागने की सामर्थ चूक गई थी।

कालिका चुपचाप सुबह का अखबार पढ़ने लगा था।

युरोप का युद्ध.....! चेम्बरलीन की मृत्यु हो गई थी। वही इंगलैण्ड का प्रधान-मन्त्री, जिसके कारण आज समस्त संसार को युद्ध से सामना करना पड़ रहा था। उसकी नीति, कि ताना-शाहों को उठाकर युरोप में जनता के मोर्चे को नष्ट कर दे, सफल नहीं हो पाई थी। जर्मनी वाले तो हजारों हवाई-जहाजों के बेड़ों से इंगलैण्ड पर हमला कर रहे थे। भारत में कांग्रेस हिचकिचाते हुए कदम उठा रही थी। नेता जनता को कोई नई राह कहाँ दिखला रहे थे! अहिंसा के नुस्खे के साथ व्यक्तिगत सत्याग्रह चल रहा था। सत्याग्रही के लिए कुछ कठिन नियम गांधीजी ने बनाए थे। किन्तु देखते-देखते २५,००० व्यक्ति जेल पहुँच गए थे। उधर देश की प्रगतिशील शक्तियां सरकार द्वारा नष्ट की जा रही थीं।

कालिका ने अखबार उठा कर रख दिया। चेम्बरलीन अपना साम्राज्यवादी उद्देश्य लेकर मर गया था। युरोप के हर एक देश के प्रतिक्रियावादी जनवादी शक्तियों को नष्ट करने तुले हुए थे। भारत में काँग्रेस के महान नेता जन-आन्दोलन नहीं छेड़ना चाहते थे। वे तो लड़ाई के संकट से फायदा उठा कर बिना किसी आन्दोलन को छेड़े हुए ही साम्राज्यशाही से सौदा कर लेना चाहते थे। नेता जनता की ताकत पर विश्वास न करके समझौता करना चाहते थे।

कादम्बरी ने मेहरी के हाथ प्याले और केतली में चाय बनाकर भेज दी थी। वह गरम जलेबियाँ भेजना भी नहीं भूली। कलिका मन ही मन हँस पड़ा। वह चाहता तो था कि एक बार भीतर जाकर कादम्बरी को शाबासी दे आवे। लेकिन वहीं बैठा रहा। कालिका ने तीनों प्याले चाय से भर लिए। राय साहब ने चाय का प्याला ले लिया। धन्यवाद देते हुए कालिका से कहा, "दोस्त आपने तो हमारे लिए सारे दिन भर का काम जमा कर

लिया है। कुछ और बीबी के सन्दूकों में छुपा कर तो नहीं रखा हुआ है।

चेचक के दाग वाले सज्जन जलेबियाँ उड़ा रहे थे। अब कालिका से बोले, "आप तो शायद गलती से फंस गए हैं। अपने किसी साथी के सिर पर वह सब क्यों नहीं डाल देते हो। आप कैसे इस चक्कर में आ गए। जनाब उन लोगों का कोई धर्म नहीं, चरित्र नहीं है। ओः मैंने बीस साल तक बड़े-बड़े क्रान्तिकारियों का पीछा किया है। नेताओं की प्रेम कहानियाँ·······!"

वे खिलखिला कर हँस पड़े और फिर कुछ अश्लील किस्से सुनाने तुले थे कि कालिका ने टोक दिया।

कालिका अपनी उन किताबों की ओर देख रहा था, जिनको कि वे कूड़े-करकट और रद्दी की तरह 'सूट-केश' पर भर रहे थे। उन पर उसने सुन्दर-सुन्दर जिल्दें लगवाई थीं। उसे अपनी लाइब्रेरी का बड़ा गर्व था, जिसे कि वे लोग नष्ट करने उतारू हुए थे। जर्मनी की लड़ाई का समाचार एक दिन संध्या को सुनाई पड़ा था। लोगों के आगे एक भावी शान्ति की कल्पना नहीं थी। वे तो सोच रहे थे कि एक नई अनजवी दुनियाँ में सबको रहना पड़ेगा। पहले वह स्वयं किताबें पढ़ता था, पर युद्ध की गति के साथ वह स्वप्न वाली दुनिया से हट गया और·······! राय साहब ने तो अपनी जेब से बटुआ निकाला और एक फोटो दिखा कर पूछा कि कालिका तो उस व्यक्ति से परिचित होगा। कालिका ने उत्तर दे दिया, "वह किसी को नहीं जानता है। आपका काम निपट गया हो तो चलिए।"

फिर कालिका ने कादम्बरी की आहट दरवाजे पर पाई। मानोकि वह वहाँ छुपकर उनकी सारी बातें सुन रही हो। राय

साहब उसी तरह चीजों की सूची बना रहे थे। कालिका चुप-चाप खिड़की से बाहर देखने लगा। बाहर वही मैदान था। वहाँ अब एक भी ताँगा खड़ा नहीं था। तेज धूप पड़ रही थी। वह अपने में न जाने क्या-क्या सोचता रह गया। उसे इतिहास के राष्ट्रीय आश्चर्यों से सहानुभूति है। पलासी के युद्ध के सौ साल बाद १८५७ की गदर हुई थी। फिर क्वीन विक्टोरिया का शासन-काल चला। १८८५ में कांग्रेस की स्थापना हुई। कुछ अंग्रेजों ने इङ्गलैंड के प्रति भारतीय बुद्धिवादियों के विचार जान लेने के लिए यह सब किया था। हिन्दुस्तानियों ने बड़ी-बड़ी नौकरियाँ दिए जाने की मांग की। १९०५ में लार्ड कर्जन ने बंगाल के टुकड़े कर दिये। फिर भारतीय राष्ट्रीयता और इंगलैएड के साम्राज्यवादियों के बीच संघर्ष छिड़ गया। स्वदेशी के प्रचार की लहर बही! आर्थिक बायकाट का प्रश्न उठा। १९११ का दिल्ली दरबार हुआ। पंजाब के किसानों ने साम्राज्यवाद से सशस्त्र क्रान्ति की घोषणा कर, अमरीका में गदर-पार्टी का संगठन किया था। सुरेन्द्रनाथ और गोखले से कांग्रेस का नेतृत्व तिलक के हाथ में आया। १९१५ में गाँधीजी का अफ्रीका-सत्याग्रह हुआ। फिर पहले साम्राज्यवादी युद्ध में गाँधी जी अपने सहयोगी राजेन्द्रबाबू के साथ अंग्रेजों की मदद करने के लिए शामिल हुए। युद्ध के बाद रोलेट-एक्ट पुरस्कार स्वरूप मिला। जालियानबाग वाली हृदयग्राही घटना हुई। तिलक मरे, गाँधीजी ने नेतृत्व लिया·····

"आप जानते हैं मिस्टर कालिका, यह सब आपको दस साल से कम के लिए जेल नहीं भिजवाएगा।" और मुसकराते हुए पान की डिब्बी से पान निकाल कर, वे बहुत सा तम्बाकू फांक गए।

लेकिन, कालिका को उस सबसे कोई दिलचस्पी नहीं थी।

वह अपना भविष्य पहले से जानता है। कादम्बरी भी उससे परिचित है। वह आगे उसे कुछ साल तक चिढ़ा नहीं सकेगा। कादम्बरी अपनी गृहस्थी में कितनी ही रमी रहे, वह कालिका तक आसानी से पहुँच जाती है। वह तो उसके हृदय का ताला तोड़, वहाँ अपने उद्‌गारों को उड़ेलने में प्रवीण है। कालिका तो कादम्बरी को बहुत दिनों से जानता था। जब एक दिन श्रीमती कादम्बरी देवी बन कर आई, तो उसने वही पुराना स्वागत किया। मानों कि वह मेहमान सी इस बार भी आई थी। कालिका की माँ कहती थी कि कादम्बरी को अपनी बहू बनावेगी, तो वह तुरन्त हंस कर कह देता था कि वह उस फूहड़ लड़की से शादी नहीं करेगा। यह सुन कर कादम्बरी सन्देश भेजती थी कि तीन आइ० सी० एस०, दो पी० सी० एस०, दो बैरिस्टर और चार प्रोफेसरों की अरजी पड़ी हुई हैं। विवाह के बाद जीवन आसान सा लगा। कालिका को जीवन में कहीं रुकावट नहीं पड़ी। वह लड़की सुघड़ता से सारी गृहस्थी चलाती थी। उसे कहीं कोई कमी नहीं लगी। वह तो रमेश के बाद और निखर आई थी। वह उसे इस नए दौर के बाद फिर सा पहचान लेना चाहता था। मानो कि उसे बिलकुल भूल गया था।

कालिका उठ बैठा। उसने अपना बड़ा सन्दूक खोला और धुले कुरते, पायजामा, सदरी, रुमाल आदि निकाले। फिर मेहरी को बुलाकर कहा कि उन सबको बहूजी के पास देकर कह दे कि सफर की तैयारी कर दें। जब मेहरी चली गई तो वह उन दोनों के चेहरों को पढ़ने लगा। वे तो अपना काम करते-करते बीच में सुस्ताने लगते थे। एक-एक चीज का बंडल बना कर उस पर मुहर लगा रहे थे। ग्यारह बज गया था और वे सुबह छै बजे आए थे।

मेहरी ने आकर कहा, "खाना तैयार है।"

"मुझे भूख नहीं है।" बोला ही कालिका।

वे पुलीस वाले अपना सामान ठीक कर रहे थे। कालिका को अपनी स्थिति का ज्ञान हो आया कि अब वह कैदी है। उसे उस महायुद्ध पर विश्वास नहीं है। वह उसे साम्राज्यवादी युद्ध कह कर नारा देता है—न एक भाई, न एक पैसा। युद्ध के एक पक्ष मे अंग्रेज और फ्राँससी थे, जबकि दूसरी ओर हिटलर वादी तानाशाह ! दोनों पक्ष जनता के शत्रु थे और जनवादी ताकतों को मिटाना भी दोनों ही चाहते थे।

कालिका ने तो अपना हॉलडाल फैला कर जरूरी चीजें संभाल लीं। सोचा कि अब वह कादम्बरी को क्या समझावेगा ? उसका दिल भर आया। वे लोग नीचे उतर रहे थे। कादम्बरी चुपचाप दरवाजे पर खड़ी थी। उसकी आँखों में आँसू छल-छला रहे थे। उसकी गोदी पर रमेश था। वह उससे कुछ नहीं बोला। वह सब बातों से परिचित थी। वह जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ उतरने लगा। फिर कुछ सोच कर रुका और ऊपर बढ़ गया। कादम्बरी की टोढ़ी उठाकर उसके आँसू पोंछ लिए। रमेश को प्यार किया और फिर तेजी से चुपचाप नीचे उतरा। वह ताँगे पर बैठ गया। ताँगा तेजी से चलने लगा। एकाएक लगा कि कादम्बरी सिसक रही थी। वह खिड़की पर खड़ी ही थी। उसकी आँखों से आँसू की बड़ी-बड़ी बूँदें टपक रही थीं ! रमेश गोदी पर ही था। वह अवाक् सा मां को देख रहा था। अब उसने खिड़की बन्द करदी थी।

कालिका कादम्बरी से दूर हो गया था। ताँगा सड़कें पार करता हुआ तेजी से पुलीस-दफ्तर की ओर बढ़ रहा था। वह उस पीछे छूटते हुए फासले को समझ गया। अब कादम्बरी

की बुद्धि पर भरोसा था। फिर वह तो उसी रात की गाड़ी से नगर से बाहर की जेल में भेज दिया गया था।

—कमरे के भीतर अंधियारा था। कादम्बरी खाँस रही थी। उसने उठकर लालटेन ढूँढ़ी और बाल ली। उसकी मन्दी और धुंधली रोशनी कमरे में फैल गई। कालिका उसके सिर-हाने बैठ गया। पूछा, "दवा पीली, तीन खूराक अभी बाकी है।"

फिर उठ करके दवा काँच के गिलास पर उड़ेली और उसे दे दी। अभी तक बाहर गर्द उड़ रही थी। दरवाजे बार-बार खड़-खड़ाने लगते थे। वह चुपचाप बाहर आँगन में खड़ा हो गया।

अब कादम्बरी तो उठ बैठी। आज उसका मन ठीक नहीं है। पहले गृहस्थी ठीक चल रही थी। वह कालिका के साथ निभ जाती थी। वे जेल चले गये और छूट कर आए तो एक छोटी सी नौकरी कर ली है। वह भी तो घर के काम पर जुटी रहती है। उनको कागज लिख-लिख करके फाड़ने की आदत है। जब वह कमरे को बुहारती है तो कागज के छोटे-छोटे टुकड़ों को बटोरती-बटोरती थक जाती है। उसने चपरासी से बेंत की एक डलिया मंगवा कर रख दी है। साथ ही साहब को कई बार चेतावनी दे चुकी है कि आगे से कागज फाड़ कर इधर-उधर फेकेंगे तो सुबह के दो प्याले चाय में से एक जुर्माना में कट जायगा। उसने एक कागज पर लिखकर, मेज पर 'पेपर वेट' के नीचे दबा कर रख दिया था कि फटे कागज टोकरी पर डाले जायँ। इस पर भी कालिका की आदत नहीं सुधरी। यही नहीं वे तो रोज शाम को आफिस से लौट कर अखबारों

से कतरने काट कर एक मोटे रजिस्टर पर चिपकाते हैं। अपने कपड़े काटने की कैंची का वह उपयोग उसे अखरता है। समझा चुकी है कि अपने लिए बाजार से एक कैंची मगवालें, पर वे कब सुनने लगे। वह चाय लेकर जाती है तो उस दफ्तरी-खाने को देख कर झुँझलाती है। कालिका हँस देता है। कादम्बरी को गुस्सा चढ़ता है, पर फिर भी चुप रह जाती है।

उसकी दूसरी मुसीबत है खद्दर के पायजामा सिलना, जो कि रोज साइकिल की जंजीर में फँसकर कुतर जाते हैं। जब उनको साइकिल चलानी नहीं आती है तो पैदल आफिस चले जाया करें। कौन ऑफिस दस कोस दूर है, या फिर ठीक से क्लिप लगाया करें। उन खादी के पायजामा सिलने में उसका बहुत सा समय व्यर्थ चला जाता है। लट्ठे के होते तो सिलने में आसानी होती। यही हाल कुर्तों का है। फटे कपड़ों का ढेर लग गया है। वे किसी काम के नहीं हैं। पतलून या अच्छे कपड़े होते तो वह फेरी वाले से अमृतबान या कोई बरतन ले लेती। पड़ोस में जो प्रोफेसर रहते हैं, उनकी श्रीमती ने एक दिन अपनी आलमारी दिखाई थी। वहां की सारी चीजों का संग्रह, फटे कपड़ों से किया गया था। सवाल उठता है कि खादी के फटे कपड़ों का क्या किया जाय ? पायजामा चौड़े हैं, उनको काट-छांट कर तकिया-गिलाफ बना लेती है। कुछ बंडियाँ बनाई हैं और रमेश के लिए गदेलियां। वह उस दिन की प्रतीक्षा कर रही है, जब कि सब फेरी वाले गांधीजी के भक्त बन जावेंगे।

परिवार छोटा सा है; सास, पति और रमेश। कभी नौकर मिल जाता है तो रख लेते हैं। नहीं तो मेहरी से काम चलाना पड़ता है। मेहरी हफ्ते में तीन रोज तो जरूर गायब रहती है। कहीं शादी है, कभी गौना, कुछ न हुआ तो पेट में पीड़ा और सिर दर्द साधारण रोग हैं। सुबह को पांच बजे दरवाजा खट-

खटाती है और शाम को छै बजे से ही कहती हुई धरना दे देती है कि अभी उसे कई घरों का काम करना है। कादम्बरी पहले स्वस्थ थी। पति के जेल से छूट आने के बाद उसने अपनी गृहस्थी को सुचारु रूप से चलाने की चेष्टा की। मायके कई महीने वह रही थी। वहां उसे सन्तोष नहीं मिला। बचपन की कुछ यादगारें भर वहाँ थीं। फिर उस परिवार का अपना नया फैला हुआ स्वरूप मिलता था, जिसमें उसकी कोई जगह आज नहीं थी। वहाँ वह अपना कोई व्यक्तित्व नहीं बना पाती है। पति के जेल चले जाने पर जब वह वहाँ थी तो उसे कुछ भला सा नहीं लगता था। वह सोचती थी कि अब वह आगे ससुराल ही जाकर रहेगी। उसे यह पहले-पहल तभी अनुभव हुआ था कि लड़की की सही जगह उसकी ससुराल ही है। यह उसे वहीं ज्ञात हुआ था कि पुराने समाज के रीति-रिवाज मिट रहे हैं। पति के जेल से छूटते ही उसने इस गृहस्थ का नव-निर्माण किया था। फिर वहाँ सन्तोष से रहने लगी थी। पति बहुत पास आ लगे थे। वे कभी उसे जेल की बातें सुनाते, तो फिर राजनीति की। वह तो पति के विश्वास के साथ चलती है। वह तो स्वयं भी चाहती है कि सारी बातें समझ जाय।

१९४२ की उस राजनीतिक आँधी से वह हिल गई थी। उसकी भावुकता उमड़ी। उसके मामा का लड़का कुछ दिनों के लिए आया था। कहा था उसने, "जीजी कौन जाने, आगे जीवन में शायद न मिलें।"

और सच ही एक दिन उसने सुना था कि एक जलूस पर सिपाहियों ने गोलियाँ चलाई थीं। वह वहीं मर गया था। वह उस दिन बहुत बेचैन रही। मौत की वह बात केवल घटना ही नहीं रही। बार-बार उसका दु:ख उमड़ पड़ता था। उस आन्दोलन की कई-कई नई कहानियाँ लोग सुनाते थे। वह स्वयं उस

सब पर सोचती थी। पति आन्दोलन से अलग थे। वे सुनाते थे कि दुनिया की जनता आज पूँजीवाद और साम्राज्यशाही से एक मोरचा ले रही थी। जब कि भारत के नेता अपनी राष्ट्रीयता की संकरी पगडंडी पर चल रहे थे; जिसके दोनों ओर खड्ड थे। नौकरशाही ने जनता को, उसके प्यारे नेताओं से अलग करके हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन की पीठ पर छुरा भोंका था। जनता में झुँझलाहट फैली और सारे देश में आग लग गई थी। जनता का वर्षों से दबा हुआ क्रोध उमड़ आया था। उन पर लाठी, गोली और आँसू बहाने वाली गैसों का प्रहार हुआ। वह आन्दोलन नेतृत्व-विहीन हो गया था। जनता की हिम्मत टूट गई थी।

कादम्बरी फिर भी आन्दोलन के बहुत समीप आ लगी थी। वहाँ उसने अपना भाई खो दिया था। वह घरेलू लड़की आज परिवार की सीमाओं से बाहर भी देखती थी। एक नई चेतना पाकर वह उस सब पर सोचना चाहती थी। भाई की बातें उसे अब तक याद थीं। वह सोचता था कि यह एक क्रान्ति आ गई है। किन्तु वह क्रान्ति नहीं आई। वह उदास रहने लगी। वह उस मौत को भूल जाना चाहती थी, पर कब भूलती है। कालिका तो कादम्बरी को समझ लेना चाहता है। वह कहीं उसे सुलझा नहीं पाता। कालिका जब ऑफिस चला जाता, तो वह उसकी किताबों से भरी हुई आलमारी टटोलती थी। कभी-कभी रजिस्टर उठा कर उस पर चिपकी हुई कतरनें पढ़ती है। वह कभी-कभी चाहती है कि उस भैय्या की बात पर सही विचार कर ले। कुछ समझ कब पाई है।

एक दिन दोपहर को वह रमेश के साथ खेल रही थी। वह कुरसी के पीछे छुप कर कहता—अम्मी! वह झूठ-मूठ उसे चारों ओर ढूँढती और अंत में कुतूहल से कहती—कहाँ है रे!

लेकिन रमेश तो सो गया था और वह आँख-मिचौनी का खेल समाप्त हो गया। तब उसने एक रजिस्टर आलमारी से निकाला और उस पर चिपकी हुई कतरनें पढ़ने लगी। एकाएक उसकी दृष्टि एक बच्चे पर अटकी। उसका चेहरा बहुत कुरूप था। नीचे लिखा था—जर्मनों द्वारा मारा गया बच्चा। ओफ हजारों बच्चे उन लोगों ने मार डाले थे। उसने और तसवीरें भी देखीं। वह जर्मनों की हत्या करने वाली फैक्टरियाँ! बिजुली के जीवित तारों से घिरा हुआ हाता। हर एक कैदी की पीठ पर खुदा हुआ निशान…! वे कैदी पहले नहलाए जाते और फिर जहरीली गैस भरे हुए कमरों में ले जाए जाते थे। मरने के बाद वे भट्टियों में जलाए जाते थे—उसे पढ़ कर उसका सारा बदन सिहर उठा ……। वह मौत……!

और उसके भाई की भी तो नौकरशाही के गुमाश्तों ने हत्या की थी।… …आगे कादम्बरी का उत्साह फीका पड़ गया। देश में फैला हुआ अकाल ……अब वह परिवार का खर्चा ठीक तरह नहीं चला पाती थी। कहाँ-कहाँ कमी करे। वह कितना ही हिसाब करे, महँगाई बढ़ती जा रही थी। महरी हटादी गई। दूध कम कर दिया गया। घी के बदले शुद्ध डालदा व्यवहार में लाया जाने लगा। तरकारियाँ कम करदी गईं। फिर भी वह पाती थी कि अब आगे गृहस्थी चलाना उसकी बुद्धि के बाहर की बात है। वह कालिका ही क्या करे! वह उससे कुछ नहीं कह सकी। अपने में ही झुंझलाहट उठती थी। कालिका तो जान कर चुप रहता था। उसे अपनी राजनीति से फुरसत नहीं मिलती थी कि घर की ओर झांक सके। वक्त, बेवक्त दोस्तों के साथ घर पहुँच कर कादम्बरी से चुपके कहता था कि दो और खाने वाले भी हैं। या फिर चाय का दौर चल पड़ेगा। वह उसकी बातें आसानी से स्वीकार कर लेती थी। कभी-कभी तो उसे

भूखे ही सो भी जाना पड़ता था। लेकिन अब पति बहुत समीप आ लगे थे। वे कहते थे कि फासिस्टों की एक जाति है। जापान का उसी से सम्बन्ध है। देश में अन्नचोर और घूसखोर बढ़ते जा रहे थे। आर्थिक-संकट ने मध्यवर्ग की हालत बहुत सोचनीय करदी थी। जिस वर्ग ने राष्ट्रीय-चेतना को जीवन देकर आज तक अपनी संस्कृति की रक्षा की थी, आज वह अपनी उच्चता और मर्यादा को खो चुका था। महँगाई की ठोकरें खाकर आर्थिक-ढांचा टूट गया। उनकी अपनी दुनिया नष्ट हो गई थी। उनका नैतिक-पतन हो रहा था। समाज में व्यक्तिगत स्वार्थ उभर रहे थे। सरकारी दमन, राजनीतिक-गतिरोध और मध्यवर्ग की निराशा......!

कादम्बरी आज बार-बार अपने में विद्रोह पाती है। उसकी सेहत भी धीरे-धीरे बिगड़ती चली गई। मलेरिया पहले हुआ था। कुछ अच्छी हुई तो निमोनिया ने पकड़ लिया। परिवार की आमदनी दवा-दारू पर अधिक व्यय करने में असमर्थ रही। वह फिर भी हिम्मत बाँध कर गृहस्थी चलाती है। जब कुछ काम नहीं कर पाती तो चारपाई पकड़ लेती है। अन्यथा वह तो काम पर लगी-लगी ही रहती है। पहले कुछ दिन दवा और इन्जेक्शन चले। फिर वे बन्द कर देने पड़े। वह तो अपना मन स्वस्थ-स्वस्थ रखती है। लेकिन सास के ताने तो बढ़ते ही जाते हैं। दोनों सास और बहू के बीच तीस साल का अन्तर है। विचारों में उन उतने सालों की दूरी है। सास तो लड़के और बहू दोनों को कोसती है। रमेश को कभी कुछ नहीं कहती। उसे इतना सिर चढ़ा लिया है कि वह तो इधर अपनी माँ तक को गाली दे देता है। कभी तो आपस में तकरार बढ़ जाती है; फिर भारी तूफान घर पर छा जाता है। बहू जली-कटी बातों को न सह कर, तेज उत्तर दे दिया करती है। आखिर हार कर आँसू चुपके

कमरे में जाकर बहावेगी। कालिका उस भावुकता को पाकर चुप रह जाता है। आज मध्यवर्ग के प्रति वाली सहानुभूति थोथी पड़ गई है।

अब वह मौत की बात नहीं सोचती है। उसका विश्वास है कि अब वह बहुत दिनों तक नहीं जिएगी। कालिका के साथ तो निभ जाती है और फिर वह रमेश एक बड़ी आशा है। पति की ओर देखती है। वे कहां अपनी ठीक परवा करते हैं। काम और काम! उसे उस सार्वजनिक-संस्था की नौकरी भली नहीं लगती है। सरकारी नौकरी होती एक सम्मान होता। पर वे सरकारी नौकरी क्यों करने लगे। कभी तो वह उनको चिन्तित सा पाती है। वे कुछ नहीं कहते हैं। वह जानती है कि वे वहाँ से सन्तुष्ट नहीं हैं। अम्मा का कहना है कि बहुत कम तनखा है। पेन्शन भी कहाँ है। यदि कालिका उस नौकरी को छोड़ने का प्रस्ताव रखता है, तो वह मुरझा जाती है। फिर भी उसे कोई सलाह नहीं देती है। वे समझदार हैं। वह क्या कह सकती है।

बाहर गर्द उड़ रही थी। आंधी उठी हुई थी। कालिका शायद रमेश की तलाश में चला गया था। कादम्बरी उठी। अभी महरी नहीं आई थी। बरतन तो साफ करने ही हैं। वह बाहर आई, माथा दुःख रहा था, नल के पास बैठ कर बरतन मांजने लगी। चुपचाप काम करती रही। कभी बीच-बीच में खांस उठती थी। अम्मा तो कहती है कि क्षय-रोग की मरीज है। लेकिन उसे यह विश्वास नहीं होता है। डाक्टर ने कहा था कि फेफड़े का फोटो ले लो अभी-अभी उसने 'एक्सरे' करवाया था। कालिका अभी तक उसे नहीं लाया है। वह फिर संलग्नता से काम करती रही। बीच-बीच में सोचती थी कि उनको कितना काम नहीं करना पड़ता है; दिन भर आफिस में काम करते हैं।

लेने की चेष्टा करेगा। कादम्बरी के बिना उसका जीवन अधूरा लगता है। यह युद्ध-काल है। कादम्बरी के लिए कुछ करना संभव नहीं लगता है। वह अपनी आर्थिक स्थिति ठीक होते ही उसे कहीं पहाड़ कुछ महीने आराम करने के लिए भेज देना चाहता है। वह असाधारण गृहस्थी के भार से बहुत थक गई है। सैनिक तो युद्ध-क्षेत्र के मोरचे पर लड़ता है और यह नारियां गृहस्थी के मोरचे की रक्षा किया करती हैं। वह सब कुछ उनके लिए त्याग देती हैं। लोगों की तो आज भी वही पुरानी धारणा है कि पापों के बढ़ जाने पर युद्ध होते हैं। कादम्बरी की आस्था भी कर्म पर है। पाप और पुण्य को वह मानती है। वह उसे समझाता है कि वे सब बातें झूठी हैं। वह सोमवार, पूर्णमासी आदि का ब्रत रखती है। कालिका तो उसे समझाता है कि सट्टेबाजों के हाथ आज जनता का जीवन पड़ गया है। चीजों का भाव बढ़ता जा रहा है। खेती अच्छी नहीं हो रही थी। किसानों के बेटे, खेतों से मोह छोड़कर पलटन में भरती हो गए हैं। गांवों में तक नोटों का चलन बढ़ गया है। अकाल पड़ रहा है। जीवन में स्थिरता आ गई थी। नागरिक-जीवन की गति समझ में सी नहीं आती है।

वह कादम्बरी बार-बार डराती थी कि वह मर जायगी। मौत को तो सदा से कालिका पहचानता था कि वह व्यक्ति को अपने समीप वाले दायरे से दूर हटा देती है। वह फिर जीवन में नहीं मिलता है। वह मौत को आसान सा समझता है। उसे जीवन में रोज नए लोग मिलते हैं और फिर वे कहीं खो जाते हैं। कादम्बरी की मौत की बात को सोचकर वह चौंक उठता है। वह उससे अलग होना नहीं चाहता था। बड़ी-बड़ी रात तक उसे भांपा करता है। उस समय जन-आन्दोलन, अकाल और युद्ध की घटनाओं पर नहीं सोचता है। वह तो डर जाता है कि

तो अब किसी समझौते को पसन्द नहीं करती है। वह अपने भाग्य को कोसती है। कभी-कभी महान अतीत के लिए आँसू बहाती है।

उसने तरकारी छील कर रखदी। आग जलाई और दाल चढ़ादी। तरकारी छौंकने लगी। तबीयत अभी तक खराब ही है। यह खाँसी न जाने क्यों अच्छी नहीं होती है। कभी-कभी बुखार हो आता है। कमजोरी तो दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है। उसे पड़ा रहना भला नहीं लगता है, पर लाचार है। वह मोहल्ले के लोगों की सहानुभूति की भूखी नहीं है। कालिका उसका सगा है। वह उससे अपार-स्नेह पा जाती है। वह उसे बल प्रदान करता है। वह उस राजनीतिक गतिरोध के निपट जाने की बात चाव से सुनती है। देश की हालत अब सुधर जावेगी। कालिका इन डूबते हुए परिवारों की रक्षा का प्रश्न, आज का अपना पहला कर्तव्य बतलाता है। युद्ध के लम्बे छः वर्ष कम नहीं होते हैं। फिर भारत तो एक उपनिवेश है। कादम्बरी सोचती है कि वह अच्छी हो रही है। वह चाहती है कि जल्दी ही पति को सहायता दे। वह इस गृहस्थी को ठीक-ठीक सा संभाल कर चलाना चाहती है। अकेला कालिका नहीं तो कब तक, यह सारा भार उठा सकता है।

अब उसने आटा गूँध लिया। अम्मा की बात याद आई। वह तो झुँझला कर दिन को बोली थी कि रोज रोगी रहने से तो एक दिन मर जाना ही अच्छा है। कम से कम वक्त पर दूसरी बहू तो आ जाती। दूसरी बहू! आज भी समाज में नारी का वही मूल्य था। वह इसे स्वीकार नहीं करेगी। वह अधिक बीमार पड़ जावेगी तो फिर मूल्य जरूर घट जावेगा। उसके मन में विद्रोह उठता है। वह आज अम्मा से झगड़ पड़ी। अम्मा तो बोली थी कि कोई उसके मायके वालों से शर्तनामा

थोड़े ही लिखा है। वह बहुत पहले से रोगणी थी। वे चाहें तो अपनी लाड़ली बेटी को वापिस ले जावें। ज्यादा इलाज कराने की सामर्थ हम में नहीं है। फिक्र के मारे लड़के की तन्दुरुस्ती चौपट हो रही है, अम्मा शायद कुछ और बोलती यदि मोहल्ले की औरतें न आ गई होतीं। वह तो उनके साथ जलूस देखने चली गई थी। कादम्बरी पहले तो बहुत रोई। मन फिर भी हल्का नहीं हुआ। मानो कि वहाँ बहुत गुबार जमा हो गया हो। वह मैल धुल नहीं सका। अब वह पिछली जीवन घटनाओं को फैला कर उस पर विचार करने लगी। पाया कि लड़कियों का समाज में कोई मान नहीं है। इस टूटते हुए परम्परा वाले समाज में कहीं ठीक सी जगह आज वे नहीं पा रही हैं। फिर सोचा कि आगे जब नव-निर्माण होगा तो उनको अपने अधि-कारों की मांग करनी होगी। आज वह पुरातन से चली धार-णाएँ, पुरानी पड़ कर सड़-गल गई हैं। अब नए युग में नई मान्यताएँ स्वीकार करनी होंगी। वह पुराण-पंथी ढाँचा अधिक दिनों तक नहीं चल सकता है।

अब बाहर मेंह बरसने लगा था। बार-बार बादल कड़कते थे। बिजुली चमक रही थी। वह चुपचाप रोटी बनाने लगी—बनाती-बनाती रही। लगा कि उसका सारा रोग हट गया है। वह सबल थी। उसे व्यर्थ ही अपने मन को छोटा नहीं करना चाहिए। कालिका भी इधर बहुत भावुक बनता जा रहा है। पिछले दिन जब वह उसके साथ रिक्शे पर बैठ कर डाक्टर के यहाँ गई थी, तो उसने उसे उदास पाया था। चेहरे पर झाइयां पड़ी मिलीं। वह बहुत अस्वस्थ लगता था। वह उसे आज फिर पहचान लेने तुली थी। मानों कि वह बदल गया हो। वे इतने दिनों साथ-साथ रह कर भी, बार-बार एक दूसरे को फिर-फिर पहचान लेने तुल जाते हैं। वह बेकार मन में पाप बटोरे है कि

उनको उसकी कोई परवा नहीं है। वे बड़ी-बड़ी रात लौट कर आते हैं, तो कभी नहीं पूछते कि अब तबीयत कैसी है। भूले से याद आ गई तो दूसरी बात है। लेकिन आज उसने पाया था कि वे स्वयं बहुत स्वस्थ नहीं हैं। वह व्यर्थ उनको डराया करती है कि अब ज्यादा दिन तक जीवित नहीं रहेगी। ठठोली करती है कि फिर अपनी मन-पसन्द बहू ले आना। कालिका चुप रहा करता है। उसकी किसी बात का जवाब नहीं देता है। और जो वह उनसे व्यर्थ रूठ जाती है। भला उनका क्या कसूर है? अब वह आगे से सावधान रहा करेगी; पर जो भावुकता का गुबार मन में जमा हो जाता है, उसका क्या करे! वे भी अपनी मां का पक्ष लेते हैं। मां को कभी कुछ नहीं कहते। उसकी बात पर हँस देते हैं। किसी बात को उलभा कर बाहर भाग जाते हैं। घर की बातों में कोई उत्साह प्रकट नहीं करते। वे बहुत चतुर हैं, घर के झगड़ों से मानों कोई दिलचस्पी उन्हें न हो। उनको अपनी मां को समझाना चाहिए, पर वे मानेंगे थोड़े ही⋯⋯।

रसोई में धुआं फैल रहा था, जो कि भीतर ही उमड़-घुमड़ रहा था। वह चुपचाप रोटियां सेंक रही थी। अपने काम में जुटी-जुटी रही ⋯।

कालिका बाहर निकल आया था। अम्मा और रमेश न जाने कहां होंगे! लेकिन वह कहां जाय? उस गुबार में आगे नहीं बढ़ सका। अतएव एक दोस्त के घर पर जाकर बैठ गया। मन में कादम्बरी की वह ठठोली कि दूसरी शादी कर लेना, न जाने क्यों उभर-उभर आती थी। वह नहीं चाहता है कि वह मर ही जाय। यह सही है कि वह उसकी देख-भाल में अधिक समय नहीं दे पाता है। आगे अब यह नहीं होगा। कादम्बरी को

जीवित रहना ही चाहिए। वह हर तरह उसे बल प्रदान करेगा। जब वह एक दिन जेल से छूट कर आया था तो कादम्बरी में उसने वह पुराना उत्साह नहीं पाया था। फिर कादम्बरी ने अपने को गृहस्थी में खो दिया। वह अब पहले से अधिक चतुर हो गई थी। वह उनसे कई बातें पूछती-ताछती थी, कई प्रश्नों का सरल उत्तर चाहती थी। राजनीति से उसे दिलचस्पी हो आई थी, वह उससे अलग न रहने की मानो ठान चुकी हो। नेता जेल से छूट आए थे। वह उस १९४१ की युद्ध की घटनाओं में उलझ जाती थी। जर्मनी की लड़ाई के बाद वह जापान की लड़ाई बिलकुल नई बात सी लगती थी। कालिका तो कहता था कि नेता वास्तविक-स्थिति से दूर रह कर आंख-मिचौनी खेल रहे हैं। वह कादम्बरी को युद्ध की गति और प्रगति समझाता था। कहता था कि आज देश की सब शक्तियों को मिल कर जापान से मोर्चा ले लेना चाहिए। आज सारी दुनिया की जनता तानाशाहों के खिलाफ लड़ रही है। जब कि भारत की जनता का उससे कोई जीवित सम्पर्क नहीं है। उसको अपने कोई भी नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं हैं। यहाँ वही औपनिवेशिक प्रणाली-वाला शासन है, जैसा ब्रह्मा और मलाया में था। जो कि जनता के सहयोग के बिना चकनाचूर हो गया था। वहाँ जापानियों ने आसानी से विजय प्राप्त करली थी।

–लेकिन वह कालिका नौकरी करता है। उस संस्था में आदर्श और त्याग की भावना चलती है। कुछ व्यक्तियों ने अपनी प्रतीष्ठा कायम रखने के लिए उसका निर्माण किया था। सामन्तवाद ने कला के अलग-अलग स्वरूपों को अपनी नीव को मजबूत बनाने का हथियार बनाया था। उस काल की शिल्प कला तथा चित्रकारी वह भाव आसानी से व्यक्त करती है।

फिर पूँजीवाद के आगमन के साथ उसको नया रूप शासकों ने दिया था। और इस काल की प्रगतिशील शक्तियां भी उस ढांचे से अलग नहीं रह सकी थीं। जब दुनिया में तानाशाही का प्रभातकाल था तो उस संस्था की नीव पड़ी थी। वह समाजवादी संस्था; अहिंसा तप और त्याग की भावना पर चलती थी। वह पूँजीपतियों के दानखाते से प्राप्त सोने की ईंटों की बनी इमारत थी, जिस पर कि राष्ट्रीयता का झूठा पलास्तर लगा दिया गया था। अहिंसावाद के उपहास-स्वरूप वहां के कर्मचारियों के प्रति बरती जाने वाली हिंसा की भावना थी। वह उपनिवेश में पनपते हुए तानाशाही का 'खिलौना' था। उसका संचालन, विधान और कार्य शैली एक व्यक्ति की कृपा पर निर्भर रहता था।

कालिका गूँगा सा बन जाता है। एक गूँज वह हृदय में सुनता : राजनीति पैसा खींचती है! पैसा खींचती है!! पैसा खींचती है!!! बिना पैसे के व्यक्ति मानों कि राजनीति में लूला बन कर ही चल सकता है। उस सद्भावना के लिए वह कभी किसी का आभार नहीं मानेगा।

कादम्बरी की सेहत भली नहीं थी। कालिका उसे अस्पताल ले जाता था, फिर बड़ी रात तक ऑफिस में रहता। काम से थक कर जब घर लौटता था तो अपने में कोई जीवन बाकी नहीं पाता था। वह उस सार्वजनिक-संस्था में पाता था कि किस भाँति वह मध्यवर्ग टूट टूट कर टुकड़े हो रहा है। उस वर्ग के कुछ अपाहिज से व्यक्ति उस संस्था को चूसा करते थे। वहां तो उस त्याग की भावना की आड़ में लूट मच जाती थीं। वह वहां स्वार्थों का आपसी संघर्ष पाता था। उसका उस निकम्मे मध्यवर्ग से विश्वास हट गया था। वह वहां के भूखे कर्मचारियों को देखता और पाता कि वह सारी संस्था एक झूठी नीव पर

खड़ी है। पहले कभी उसने उस संस्था का एक बड़ा जल्सा देखा था कि बड़े-बड़े महारथियों का जलूस रिक्शों पर निकला था। उन रिक्शों को काले नंगे बदन वाले नर-कंकाल खींच रहे थे। और कालिका ने अब तो पाया था कि उस संस्था के अवेतनिक-मंत्री उस संस्था का टूटता हुआ रिक्शा अपने भूखे कर्मचारियों से खिंचवा रहे हैं। वह संस्था में दो वर्ग पाता था। एक कथित त्यागी, जो सेवा-भाव से आते थे और दूसरे वहां के कर्मचारी! दोनों की दूरी को वह आश्चर्य से भांपा करता था। उन अधिकारियों का रुख उसे किसी पूँजीवादी-संस्था के अधिकारियों से भिन्न नहीं मिला था। वहां तो उसने व्यक्ति के श्रम का और भी अधिक शोषण होता हुआ पाया था।

वह राष्ट्रीय संस्था""""! कादम्बरी की बीमारी ने उसे भावुक बहुत ही बना दिया था। उसका मन कभी-कभी उखड़ जाता था। वह देखता था कि देश में ज्यों ज्यों राजनीतिक गतिरोध बढ़ता जाता था, संस्था के भीतर मध्यवर्ग के महान सदस्यों के बीच वाले विभिन्न दलों के बीच, उतनी ही तेजी से संघर्ष बढ़ता जा रहा था। थोड़े-थोड़े स्वार्थों के लिए लोग आपस में झगड़ते थे और कई पूँजीपतियों के गुमाश्ते गिद्धों की भांति उसे नोचने की तैयारी में थे।

कालिका को बार-बार न जाने क्यों उन मध्यवर्ग के नेताओं पर विश्वास सा नहीं होता था। वे अपने पुराने दाँव-पेंच से, इस युद्ध-काल की समस्या को सुलझाने में सफल नहीं हो रहे थे। ९ अगस्त के बाद जनता ने बृटेन-विरोधी भावना और क्रोध का स्पष्ट प्रदर्शन किया था। नेता तो जेल चले गये थे और जनता बिना किसी कार्यक्रम के छूट गई थी। देश पर ऐसा संकट कभी नहीं आया था। एक ओर अंधी नौकरशाही दमन कर रही थी, तो दूसरी ओर जापान का आक्रमण तेजी से बढ़

रहा था। नेताओं ने शुतुरमुर्ग की तरह अपना सिर छुपा सा लिया था। अपनी सारी जिम्मेदारी से वे बरी हो गये थे। और वह सार्वजनिक संस्था……! वह यदि कोई यतीमखाना ही होता, तो सेठों के दान पर उनकी महिमा का गुणगान वहां के कर्मचारी बैंड बजा कर करते। बचपन में उसने देखा था कि कबूतरों को दाना चुगाया जाता था। संस्था के कर्मचारियों को भी इतना ही वेतन मिलता था कि वे किसी भांति अपने को जीवित रख सकें। उनको किसी अज्ञेय कल्पना पर जीवित रहना पड़ता था, जिसका प्रतीक राष्ट्रीय तिरङ्गा-झंडा इमारत के ऊपर फहराता था। अंग्रेजी साम्राज्यवाद की प्रतीष्ठा-स्वरूप लाल फीतों वाली फाइलें वहाँ भी चलती थीं। जो क्लाइव द्वारा स्थापित साम्राज्यवाद की बू वहां फैलाती थीं……! त्याग और तप वाली वह इमारत, जो कि एक झूठे आडम्बर के साथ खड़ी थी और जिसका कि ढांचा एक नए भारतीय-पूँजीवाद से दब रहा था; उस टूटते हुए मध्यवर्ग की झाँकियाँ……!

वह कभी कादम्बरी से कुछ कहता था तो वह मुँह मोड़कर कहती, "यह त्याग हमारी गुलामी का एक विकृत-रूप है।"

वह विकृत रूप……! कादम्बरी शुरू में कुछ दिन हिस्टीरिया की शिकार रही थी। वह रोग नानी से मां और माँ से बेटी तक, तीन पीढ़ियाँ पार कर चुका था। सच ही वह तो कभी-कभी, बड़ी ही समझदारी की बातें करती थी। वह सुलझा तर्क देती थी कि वह जो अहिंसा है, उसके भीतर एक हिंसा छुपी हुई है। वह जानता था कि नेता बनने के लिए कई हिंसाएँ करनी पड़ती हैं। वे तीन-सौ-दो की दफा में नहीं आ पाती हैं। फिर विचारों की हत्या और कई समझौते वाली सीढ़ियाँ पार करनी होती हैं। जनता से त्याग की आशा करके वे अपने नेतृत्व को

पनपने देते हैं...... । वह उन नेताओं को भी एक खास तरह के हिस्टीरिया का रोगी पाता है । वह रोग हर एक आन्दोलन की असफलता के बाद उभरता चला गया था। अन्यथा वे आज इतने ज्यादा उलझे हुए नहीं मिलते...... !

वह कादम्बरी शिकायत करती है कि वह परिवार की सीमाओं के भीतर ऊब उठती है। वे तो बाहर रहते हैं। वह तो वही-वही प्रतिदिन वाली चर्या में रह जाती है। खाना बनाना, चौका-बरतन, घर के और साधारण धन्धे... ! वह बाहर निकलने की कभी सोचती है पर फुर्सत मिले तब तो...... ! उसे मोहल्ले के सारे परिवारों का ज्ञान है। वह नारी की उन सीमाओं पर सोच कर मन में विद्रोह बटोर लेती है। पहले वह अपने मन की सब बातें कह दिया करती थी। आज वह बहुत कम बातें करती है। अम्मा के डर से मोहल्ले में अधिक नहीं जाती है। उसकी चंद सहेलियां हैं। मुनसिफ साहब की बीबी तो बहुत सीधी-साधी है, पर तहसीलदार साहब की तो सदा चार आसमान की बातें किया करती है। एक प्रोफेसर साहब की बीबी है; उसे अपने बच्चों की पलटन सँभालने से ही फुर्सत नहीं मिलती है। इन हमजोलियों से वह कभी-कभी मिल लिया करती है। वे चारों हम उम्र हैं। कालिका सबसे ज्यादा मेहनत करता है और सब से कम वेतन पाता है; यह बात उसे अखरती थी। कालिका का उस मोहल्ले के समाज में कोई खास स्थान भी नहीं है। वह किसी सामाजिक-सम्मान की भूखी नहीं है। फिर भी अपनी प्रतिष्ठा के पक्ष में अपने मायके का हवाला देना नहीं भूलती है। कभी तो सोचती है कि यदि वे फिर जेल चले गए, तब क्या होगा ? वह बात का कोई ठीक सा समाधान न कर, डर जाती है। फिर सोचती है कि देखली जायगी। वह भविष्य चमकता नहीं है। अब रमेश बड़ा हो

गया है। उसकी ओर ज्यादा ध्यान नहीं देती है। जब कालिका खाना खाया करता है तो वह उसे ताकती है। वे बहुत कमजोर लगते हैं। ऐसा भी कहीं कोई काम होता है। न ठीक खाना, नहीं आराम। मानो कि सारी दुनिया का भार उनके सिर पर ही हो। कहीं बीमार पड़ जावेंगे तो फिर क्या होगा? वह कालिका से अपने मन की बात कहती है तो वह हँस पड़ता है। कहता है कि अभी उसे बहुत जीना है, यही पचास, साठ साल।

कालिका का वह वैराग्य······! वह नौकरी से ऊब उठता है। पाता है कि मध्यवर्ग व्यर्थ ही अपने बौद्धिक-नशे में चूर है। सही जनता से उसका सम्पर्क नहीं सा है। वे महान नेता······! उसे एक घटना याद आती है। एक गरीब किसान बालिका कहीं दूर गाँव से अपने भाई के साथ आई थी। उसका पिता अगस्त-क्रान्ति में पकड़ा गया था। उसे 'कालापानी' की सजा हुई थी। वह उन नेताजी के पास आई थी। परिवार आर्थिक-कष्ट में था। इससे पहले कि वह उसका भाई कुछ कहे वे मुँझलाकर बोले थे—मैं कहाँ से आप लोगों की सहायता करूँ। आप लोग स्थानीय-कमिटी बनाकर व्यवस्था कीजिए।

वह युवती चुप रह गई। उसकी आँखों से आँसू छलछलाए थे। तभी नेताजी ने अपने समीप खड़े हुए व्यक्ति से कहा था कि बी० एकाउन्ट में से बीस रुपया उसे दे दिया जाय। नेताजी चले गये थे। वह लड़की कुछ देर तक वहीं चुपचाप खड़ी रह गई।

कालिका के मन से वह बात नहीं हट पाती है। वह घटना एक बहुत बड़ा घाव वहाँ अनायास बना बैठी। वह न जाने क्यों कादम्बरी को बल-प्रदान करना चाहता था कि वह सबल बन जाय। यदि कहीं वह मर जावेगी तो फिर भी वह उसे जिला

लेने की चेष्टा करेगा। कादम्बरी के बिना उसका जीवन अधूरा लगता है। यह युद्ध-काल है। कादम्बरी के लिए कुछ करना संभव नहीं लगता है। वह अपनी आर्थिक स्थिति ठीक होते ही उसे कहीं पहाड़ कुछ महीने आराम करने के लिए भेज देना चाहता है। वह असाधारण गृहस्थी के भार से बहुत थक गई है। सैनिक तो युद्ध-क्षेत्र के मोरचे पर लड़ता है और यह नारियां गृहस्थी के मोरचे की रक्षा किया करती हैं। वह सब कुछ उनके लिए त्याग देती हैं। लोगों की तो आज भी वही पुरानी धारणा है कि पापों के बढ़ जाने पर युद्ध होते हैं। कादम्बरी की आस्था भी कर्म पर है। पाप और पुण्य को वह मानती है। वह उसे समझाता है कि वे सब बातें झूठी हैं। वह सोमवार, पूर्णमासी आदि का व्रत रखती है। कालिका तो उसे समझाता है कि सट्टेबाजों के हाथ आज जनता का जीवन पड़ गया है। चीजों का भाव बढ़ता जा रहा है। खेती अच्छी नहीं हो रही थी। किसानों के बेटे, खेतों से मोह छोड़कर पलटन में भरती हो गए हैं। गांवों में तक नोटों का चलन बढ़ गया है। अकाल पड़ रहा है। जीवन में स्थिरता आ गई थी। नागरिक-जीवन की गति समझ में सी नहीं आती है।

वह कादम्बरी बार-बार डराती थी कि वह मर जायगी। मौत को तो सदा से कालिका पहचानता था कि वह व्यक्ति को अपने समीप वाले दायरे से दूर हटा देती है। वह फिर जीवन में नहीं मिलता है। वह मौत को आसान सा समझता है। उसे जीवन में रोज नए लोग मिलते हैं और फिर वे कहीं खो जाते हैं। कादम्बरी की मौत की बात को सोचकर वह चौंक उठता है। वह उससे अलग होना नहीं चाहता था। बड़ी-बड़ी रात तक उसे झांपा करता है। उस समय जन-आन्दोलन, अकाल और युद्ध की घटनाओं पर नहीं सोचता है। वह तो डर जाता है कि

वह गृहस्थी का मोरचा बहुत कमजोर पड़ गया है। वह कादम्बरी की गहरी-गहरी सांसों को सुनता है और पाता है कि उनमें एक युवती की स्वस्थ स्वर-लहरी नहीं है। कहीं ठीक महक सी वह वहाँ नहीं पाता है। वह सावधानी से उसका चेहरा पढ़ता है। वहां झाइयां पड़ गई हैं। कहीं-कहीं हड्डियाँ चमकती हुई मिलती हैं। वह तो पहले से बहुत बदल गई है। श्रो, वह उस ओर से बहुत उदासीन रहती है। कादम्बरी भी तो अब शिकायत नहीं करती है। बड़ी-बड़ी रात तक चौके में बैठी-बैठी उसके आने की प्रतीक्षा करती रहती है। जब वह खा लेता है, तब वह खाती है। पुराने संस्कारों की प्रतिष्ठा करती, उनका पालन कर रही है। वह उसकी मखौल नहीं उड़ाता है। वह कादम्बरी तो सोई-सोई-सोई हुई रहती है। कालिका अपनी नीरस राजनीति वाली पुस्तकों को पढ़ना भूल जाता है। सोचता है कि परिवार की रक्षा करना ही आज की राजनीति का सब से पहला सबक है। यदि परिवार ही नष्ट हो गए तो समाज की भित्ति कमजोर पड़ जायगी। फिर कल को परिवारों के नव-निर्माण का प्रश्न और कठिन हो जायगा।

कभी कालिका सोचता है कि एक दिन वह कादम्बरी को छोड़ कर चला गया था। एक बड़े अरसे तक वह नजरबन्द रहा। तब उसने उस लड़की की सराहना की थी। कादम्बरी प्रति मास एक पत्र लिखती थी; किन्तु वहां वह रमेश की शरारतों के अतिरिक्त और कुछ नहीं पाता था। और जब वह छूट करके आया, तो एकाएक एक संध्या को उसके आगे खड़ा होकर बोला था, "कादम्बरी ?"

कादम्बरी को कोई सूचना उसने नहीं दी थी। कहा था, वह कुछ दिन बाद ठीक सी नौकरी तलाश करके उसे बुलावेगा।

वह चुप रही। उसके आने की खुशी को आसानी से दबा कर बोली थी, "रमेश तो खेलने गया है। अब बहुत परेशान करता है।"

"तब एक से दो हो गये हो।"

कादम्बरी चुप ही रही थी। मायके के शिष्टाचार को निभाने भीतर चली गई थी और उस बड़े परिवार में न जाने कहां खो गई। दोपहर कटी, शाम बीत गई और रात भी गुजरने लगी। आधी रात बीत चुकी थी कि उसने कादम्बरी की आहट पाई। वह चुपके आई और बोली थी, "मैं कल आपके साथ चलूँगी।"

"कल को!"

"मेरे पास खर्च के लिए रुपए हैं।"

कालिका तो उलझन में पड़ गया। समझ में नहीं आया था कि वह क्या उत्तर दे। कादम्बरी अपने आंसू पोंछ रही थी। वह तो सिसक-सिसक कर रोती रही। अब उसने अपने आंसू पोंछ लिए थे। सरलता से कहा था फिर, "कल मैं जरूर चलूँगी।"

कादम्बरी चुपचाप चली गई थी। कालिका जैसे कि कई बातें पूछना चाहता था। वह उसे रोक लेने उठा। वह तो चली गई थी। वह चुपचाप दरवाजे पर खड़ा का खड़ा रह गया। चारों ओर अंधकार था। सारा परिवार सो रहा था। कादम्बरी उसी अन्धकार में खो गई थी। अभी तक उसकी साँस प्रतिध्वनित हो रही थी। उस वातावरण में वह बार-बार किसी की आहट सी पाकर चौंक उठता था। फिर कादम्बरी का वह कहना हृदय में गूँज उठता था—कल मैं साथ चलूँगी।

—लेकिन कालिका आज वह सब भूल जाना चाहता है। पिछले कई साल तेजी से निकल गए थे। युरोप में तानाशाहों

की हार हो गई थी। आज युरोप का बंटवारा पिछले महायुद्ध की भाँति आसान काम नहीं था। वहाँ प्रतिक्रियावादियों का विरोध करने के लिए कई नई प्रगतिशील जन-शक्ति खड़ी हो गई थीं और नेहरूजी भी तो छूट आए थे।

कालिका का वह दफ्तर, वह वहाँ की सेवा, वे कल्पना की बातें और वह सी त्याग के बल पर खड़ी हुई बड़ी इमारत...! ओ, कादम्बरी का उस त्याग पर कोई विश्वास नहीं है। वह भी उन महान नेताओं की ओर नहीं ताकना चाहता है। वे ऋषि हों, असाधारण पुरुष या वे कल मर कर नक्षत्र और तारे भले ही बन जावें; आज वह उनके व्यक्तित्व की ऊँचाई और नीचाई के बीच एक भारी गहरी खाई पाता है। अपनी अतृप्त-आकाँक्षाओं की झुँझलाहट में वे साधारण मनुष्य से भी नीचे गिर जाते हैं। उनके स्वार्थों की सीमा तक पहुँच जाना आसान सा काम नहीं है। वे अपने चारों ओर धर्म-भीरुता और पूँजीवादी गुणों को फैलाकर, अपनी महानता को 'अहम्' के नशे का पान कराते हैं। उनकी अपनी सृष्टि विश्वामित्र के गधे, भैंसे आदि की सी दुनिया है। वे बाल्मीकि ऋषि की अहिंसा बरतने वाली बात सोचकर विश्वमित्र का राजसी-व्यवहार बरता करते हैं। वह पाता है कि अपने झूठे आदर्शों की कल्पना से वे जनता को अधिक नहीं मोह पा रहे हैं। मध्यवर्ग की धरती से बाहर निकलना नहीं चाहते हैं।

कालिका इस बदलती हुई दुनिया पर सोचता है। आज गांधीजी किसी प्रकार का सविनय अवज्ञा आन्दोलन नहीं छेड़ना चाहते थे। देश का आर्थिक-जीवन नष्ट हो गया था। वह कालिका तो वास्तविकता को अपने जीवन-अनुभव से तोलता है। देखा था उसने कि उस बड़ी इमारत के चारों ओर गिद्ध मंडरा रहे थे। वे वहां हरी दूब वाली लाउन पर पड़ी हुई

कुत्ते की लाश को नोच-नोच कर खा गए थे। कालिका के मुँह पर मानों कि किसी ने भारी तेज चांटा मारा था। वह उस संस्था को छोड़ देने की बात पर बड़ी देर तक विचार करता रहा। उसे लगा कि निकम्मा मध्यवर्ग, अपने स्वार्थ की चोंचों से इमारत पर लगा हुआ, उस थोथे राष्ट्रवाद की सिमेंट को उखाड़ फेंकने में सफल हो गया है। वहाँ उसे सेठों की दान में दी हुई सोने की ईंटें साफ-साफ चमकती हुई दीख पड़ती थीं। कादम्बरी कालिका को वह बात सुनाना चाहता था; किन्तु उसे कहने का साहस नहीं हुआ। कादम्बरी इधर अपने में ही न जाने क्या सोचा करती है। वह बहुत कम बातें करती थी। घर में लकड़ी चूक गई थी। दो बार उसने कालिका से कहा, फिर भी नहीं आईं। बस वह चुपचाप टाल पर जाकर वहाँ से पाँच मन लकड़ी तुलवा कर ले आई थी। घर की राशन भी वह खुद ही मंगवा लेती है। कालिका तनखा उसे सौंप देता है और स्वयं बिल्कुल निश्चिंत हो जाता है। मानोंकि उसका और कोई कर्तव्य परिवार के प्रति नहीं है। वह अपनी सहेली तहसीलदारिन के जरिए चीनी, मिट्टी का तेल, धोतियाँ आदि मंगवा लेती है। वक्त पर उसी से उधार भी चलता है। कभी वह कुछ थोड़ी बातें कह देती है, अन्यथा कुछ और जानना आवश्यक नहीं है। कालिका ने कादम्बरी के ऊपर अपना उत्तरदाइत्व सौंप दिया है। वह अपने को बरी सा पाता है।

बाहर तेज मेंह बरस रहा था। कालिका के साथी चौपड़ खेल रहे थे। वह उस खेल पर सोचने लगा, जिसका निर्माण आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व हुआ था और जो कि बुद्धि से अधिक भाग्य पर विश्वास करते थे। यह भाग्यवादी खेल…! कालिका

अब अधिक जुआ खेलना नहीं चाहता था। अनुभव की कसौटी पर चुपचाप पिछले चार-पाँच वर्ष के इतिहास पर सोच रहा था। दूसरे साम्राज्यवादी-युद्ध के साथ वह जेल गया था। जब छूट कर आया तो युद्ध भारत के पूर्वी दरवाजे पर पहुँच चुका था। उसने भावुकता का आश्रय नहीं लिया। जानकर कि जनता केवल आत्म-सन्तोष पर जीवित नहीं रह सकती है। लाखों व्यक्ति भूख से तड़प-तड़प कर मर गये थे। प्रचलित नैतिक-मान्यताएँ पिछड़ी सी लगने लगी थीं। वह समाज का नया मूल्यांकन करने तुल गया था। लेकिन वह मध्यवर्ग की व्यक्ति-वादी-अहमन्यता, जिसका उजड़ा हुआ रूप उसने नौकरी के जीवन वाले चन्द दिनों में पाया है। कालिका उसे कब भूल पाता है।

कालिका कादम्बरी की यदि अपनी नौकरी की ईमानदारी की तरह ही रत्ता करता, तो वह आज ऐसी न होती। नौकरी की उस झूठी प्रतीष्ठा, उन कल्पना की बातों और उस टूटते हुए मध्यवर्ग के स्वार्थों वाली धरती को वह छोड़ आया है। वह आज परिवार और उसके बाहर की जागरूक शक्तियों के साथ चल रहा है। वह एक स्वस्थ वातावरण में रहता है। आज वह जलूस देखने गया था। लेकिन......। उसे लगा कि वह इतिहास जैसे कि गतिहीन चुपचाप खड़ा सा रहा है। वह ग्यारह सौ पैंतालिस दिन की दूरी जैसे कि कल की बात हो। वे पिछली घटनाएँ मानों चीनी के खिलाने वाले ढाँचे रहे हों। जिनको कि हरएक अनजाने आसानी से तोड़ता चला जा रहा है। वह दूरी मानों कि आसानी से पट गई हो। उनके बीच की बातें हरएक अविश्वास सा छुपाए हुए रखता है।

वह उस चौपड़ की बाजी को देखते-देखते ऊब उठा। कभी सामन्त लोग अपनी रखेलियों के साथ बेकार वक्त काटने के

लिए इसे खेला करते थे। और वह आज भी श्राप सा जीवन में कहीं-कहीं किसी को डस लेता है। भाग्यवादियों की उस कसोटी की सदा उसने सराहना की है। किन्तु उस पुराने हथियार को नई प्रगतिशील-शक्तियाँ तोड़ रही थीं। वह धर्म-भीरुता, वह भाग्यवाद और ये पुराण-पंथी धारणाएँ !

कालिका उठ बैठा। चुपचाप बाहर निकला। उसके मन में सन्तोष भर आया था। पीछे से उसका डाक्टर दोस्त बुला रहा था, "अरे कालिका, कॉफी की एक प्याली तो पी जाता।"

वह रुका नहीं। आगे बढ़ गया। बरसते हुए मेंह की झड़ी को चीरता हुआ आगे बढ़ा। दरवाजा पार किया और पुकारा, "कादम्बरी ?"

कादम्बरी शायद भीतर थी। अम्मा बोली, "कहाँ रहा रे ? हैं, बिल्कुल भीग गया है।"

कालिका जल्दी-जल्दी कमरे में घुसा। कादम्बरी चारपाई पर लेटी हुई थी। रमेश तो सो गया था। उसने सन्दूक से कपड़े निकाले और बाहर नल पर नहाने चला गया। नल बन्द था। पानी चला गया था। बाल्टी पर के पानी से वह नहाया। कपड़े बदल कर भीतर पहुँचा। कादम्बरी से बोला, "डॉक्टर के यहाँ था। फेफड़े ठीक हैं, कमजोरी है बस !"

कादम्बरी तो उठ बैठी। उसी तरह खाँसती रही। बोली फिर "ब्रिज खेलते रहे होगे।"

"नहीं तो·····।"

"ग्यारह बजे रहे हैं। मेहरी भी नहीं आती। अम्मा ने तो आज खाना नहीं खाया। मुँह फुलाए बैठी है।"

कालिका चुप।

"मैं तो खुशामद करूँगी नहीं। बड़ी मुश्किल से खाना बनाया है। सिर टूट रहा है।"

फिर भी कालिका कुछ नहीं बोला। कादम्बरी खड़ी हुई। वह उसे निहारता रहा। वह बहुत दुबली और कमजोर लगी। वह तो अब उसके आगे खड़े होकर बोला, "तारघर बन्द था, तेरे भइय्या को कैसे भेजता !"

"वहाँ भी तो भला नहीं लगता है।"

कालिका चुपचाप खा-पीकर लेट गया। अब वह एक बार फिर उस जलूस की बात सोच रहा था। वह जनता का समारोह·····! फिर वह अखबार पढ़ने लगा। रमेश सो रहा था। उसकी ओर एक बार देखा।

तभी सुनाई पड़ा, "अम्मा खाना खाने चौके में आओगी या वहीं ले आऊँ ?"

अम्मा चौके में खाना खाने चली गई थी। कालिका उस कादम्बरी के व्यवहार पर मुग्ध हो गया।

फिर सा वह सोचने लगा·····। वे कल्पना की बातें····· वह कथन—राजनीति पैसा खींचती है! पैसा खींचती है !!

—लेकिन उसकी जेब खाली थी। मध्यवर्ग के उन संस्कारों की केंचुली उतार कर उसने फेंकदी·····।